DFJK-02

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

फलित ज्योतिष द्वारा फलादेष विधि

विवरणिका

इकाई सं.	इकाई का नाम	पृ.सं.
इकाई - 1	पंचांग का व्यावहारिक जीवन में उपयोग	4
इकाई - 2	जन्म पत्रिका, सूर्योदय, वेलान्तर स्पष्टान्तर ज्ञान, इष्टकाल निर्णय	45
इकाई - 3	इष्टकाल से जन्म कुण्डली निर्माण, ग्रह साधन, (चालन धन-ऋण) भयात्-भभोग	68
इकाई - 4	लग्नस्पष्ट साधन, भुक्त-भोग्य साधन	86
इकाई - 5	दशम साधन, नतोन्नत प्रकार व चलित चक्र	109
इकाई - 6	कारक ग्रह, चर-स्थिर कारक, कारक ज्ञान, होरा द्रेष्काण	135
इकाई - 7	(नवमांश, सप्तमांश, त्रिशांश) सहित दश वर्ग विचार	153
इकाई - 8	नवमांश, सप्तमांश, त्रिशांश व द्वादशांश	177
इकाई - 9	विवाह योग में जन्मपत्रिका मिलान का महत्त्व	189
इकाई - 10	विभिन्न योग – राजयोग, गजकेशरीयोग,सरस्वती योग, नीचभड़ग योग, महालक्ष्मी योग	228
इकाई - 11	ज्योतिष शास्त्र और जटिल रोगों का सम्बन्ध	249
इकाई - 12	गर्भाधान	272

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

अध्यक्ष

प्रो. एल.आर. गुर्जर
निदेशक, संकाय,
व.म.खु.वि.वि., कोटा

संयोजक/ समन्वयक एवं सदस्य

समन्वयक	**संयोजक**
डॉ. क्षमता चौधरी सहायक आचार्य, अंग्रेजी व.म.खु.वि.वि., कोटा	डॉ. कपिल गौतम सहायक आचार्य, संस्कृत व.म.खु.वि.वि., कोटा

सदस्य

प्रो. बी. त्रिपाठी लाल बहादुर शास्त्री संस्कृत विद्यापीठ, दिल्ली	प्रो. विनोद कुमार शर्मा जगतगुरू रामानन्द आचार्य राजस्थान संस्कृत विद्यालय, जयपुर
डॉ. सरिता भागर्व राजकीय महाविद्यालय, झालावाड़	डॉ. जितेन्द्र कुमारी द्विवेदी व्याख्याता, संस्कृत लाड देवी शर्मा पंचोली संस्कृत महाविद्यालय माण्डलगढ़, भीलवाड़ा
श्री ओम प्रकाश ज्योतिर्षाचार्य, कोटा	डॉ. कमलेश जोशी उपकुलसचिव, व.म.खु.वि.वि., कोटा

संपादन एवं पाठ्यक्रम लेखन

सम्पादक

डॉ. जितेन्द्र कुमारी द्विवेदी
व्याख्याता, संस्कृत
लाड देवी शर्मा पंचोली संस्कृत महाविद्यालय माण्डलगढ़, भीलवाड़ा

पाठ्यक्रम लेखन

1	सुश्री सपना सुराना (9) ज्योतिष विशारद, जयपुर	2	श्री राजेन्द्र सुराणा (6,11,12) ज्योतिष विशारद, जयपुर
3	सुश्री पल्लवी शर्मा (2,3,4,5) ज्योतिष विशारद, कोटा	4	प्रो. वासुदेव शर्मा(1)
5	श्रीमती निलम सालानी(7,8) ज्योतिष व वास्तुशास्त्र परामर्शदाता, अकोला, महाराष्ट्रा	6	सुमन सचदेव (2,3,4,10) ज्योतिष व वास्तुशास्त्र परामर्शदाता, जयपुर

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो. विनय कुमार पाठक	प्रो. एल.आर. गुर्जर	**प्रो. पी.के. शर्मा**
कुलपति	निदेशक	निदेशक
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा	संकाय विभाग **वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा**	**क्षेत्रीय सेवा प्रभाग वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा**

पाठ्यक्रम उत्पादन

योगेन्द्र गोयल
सहायक उत्पादन अधिकारी,
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

उत्पादन

इस सामग्री के किसी भी अंश भी अंश को व.म.खु.वि., कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है। व.म.खु.वि., कोटा के लिए कुलसचिव को व.म.खु.वि., कोटा (राज.) द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित

इकाई - 1

पंचांग का व्यावहारिक जीवन में उपयोग

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 विषय प्रवेश

1.3.1 पञ्चाङ्ग

1.3.2 संवत्सर

1.3.2.1 संवत्सर आनयन विधि

1.3.3 संवत्सर स्वामी

1.3.4 संवत्सरफल

1.3.3 ऋतु

1.3.3.1 ऋतुओं का विभाग

1.3.4 अयन

1.3.4.1 उत्तरायण

1.3.4.2 दक्षिणायन

1.3.5 मास

1.3.5.1 सौरमास

1.3.5.2 चान्द्रमास

1.3.5.3 सावनमास

1.3.5.4 नाक्षत्रमास

1.3.5.5 क्षयाधिमास विचार

1.3.5.6 मलमास में करणीय व अकरणीय कार्य

1.3.5.7 जन्ममास

1.3.5.7 जन्ममास

1.3.6 पक्ष

1.3.7 तिथि

1.3.7.1 अमावस्या के भेद

1.3.7.2 पूर्णिमा के भेद
1.3.7.3 तिथि को शास्त्रों में पाँच भागों में विभाजित किया है (नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता पूर्णा)
1.3.7.4 नन्दादि तिथियों में उत्पन्न जातकों का फल
1.3.7.5 तिथिसमय
1.3.7.6 छिद्रा तिथि
1.3.7.7 क्षय तिथि
1.3.7.8 वृद्धि तिथि
1.3.7.9 क्षय व वृद्धि तिथि का त्याग व परिहार
1.3.7.10 पर्व तिथियाँ
1.3.7.11 गलग्रह तिथियाँ
1.3.7.12 सोपपद व कुलाकुल तिथियाँ
1.3.7.13 तिथियों के स्वामी
1.3.7.14 तिथियों में निषिद्ध कार्य
1.3.7.15 चैत्रादि मास में शून्य तिथियाँ
1.3.7.16 पक्षरन्ध्र तिथियाँ
1.3.7.17 तिथियोगिनी चक्र
1.3.7.18 घाततिथियाँ
1.3.7.19 तिथि अशुभफलनाशक पदार्थ
1.3.7.20 तिथि में द्वारनिर्माण का निषेध
1.3.7.21 मन्वादि तिथियाँ
1.3.7.22 युगादि तिथियाँ
1.3.7.23 मन्वादि व युगादि तिथियों में करणीय कर्म
1.3.7.24 तिथियों में आने वाली स्वयंसिद्ध तिथियाँ
1.3.8 गण्डान्त विचार
1.3.8.1 तिथि गण्डान्त
1.3.8.2 लग्नगण्डान्त
1.3.8.3 नक्षत्रगण्ड़ान्त
1.3.9 वार
1.3.9.1 शुभ-अशुभ वार
1.3.9.2 वार व उनके करणीय कार्य
1.3.10 कालहोरा मुहूर्त
1.3.11 चौघडिय़ा ज्ञान विधि

1.3.12 अभिजित मुहूर्त
1.3.14 प्रदोषकाल
1.3.15 घातवार
1.3.16 दिशाशूल
1.3.17 वार में अशुभफलनाशक पदार्थ
1.3.18 वार के अनुसार जन्म लेने वाले जातकों का फल
1.3.19 पंचकों में क्या करें और क्या नहीं?
1.3.20 अग्निवास
1.3.22 नक्षत्रों की संज्ञा एवं उनमें करणीय कर्म
1.3.23 पञ्चाङ्ग में योगविचार
1.3.24 व्यतिपात
1.3.25 वैधृति
1.3.26 आनन्दादि 28 योग
1.3.27 क्रकचादि तात्कालिक योग
1.3.28. करण का शुभ व अशुभ विवेचन
1.3.29 भद्राविचार
1.3.29.1 भद्राविचार
1.3.29.2 भद्रा अङ्गविभाग
1.3.29.3 भद्रा में शुभाशुभ करणीय कर्म
1.3.30 राहुकाल का यथार्थ
1.3.31 शिववास का जानने का प्रकार
1.4 सारांश
1.5 शब्दावली
1.6 अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न
1.7 लघुत्तरात्मक प्रश्न
1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

1.1. प्रस्तावना

ज्योतिष शास्त्र से संबंधित प्रथम इकाई है। इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि पञ्चाङ्ग का व्यावहारिक ज्ञान किस प्रकार होगा ? इसका विशेष रूप से वर्णन किया गया है। पञ्चाङ्ग बनाने की प्रथा बड़ी पुरानी हैं। ज्योतिष के क्षेत्र में पञ्चाङ्ग तभी से प्रचलित हुआ जब कि हमें ज्योतिष का थोड़ा बहुत ज्ञान होने लगा था पर यह निश्चित है कि वह पुराना पञ्चाङ्ग आज जैसा नहीं था। पञ्च अङ्ग के स्थान पर पहले किसी समय चुतरङ्ग , त्र्यङ्ग, द्वयङ्ग अथवा एकाङ्ग भी प्रचलित था और लिपि का

ज्ञान होने के पहले तो कदाचित् जबानी ही उसका ज्ञान कर लेते थे परन्तु इतना अवश्य है कि तिथि, नक्षत्र, ग्रह आदि स्थिति दर्शक कोई पदार्थ अतिप्राचीन काल से ही प्रचलित रहा हैं, यहाँ उसे ज्योतिदर्पण कहेंगे। वेदो में भी लिखा हैं कि अमुक दिन, नक्षत्र, और ऋतु में अमुकामुक कार्य करने चाहिए। वेदाङ्गज्यौतिषकाल अर्थात् शकपूर्व 1400 में वर्ष में तिथि और नक्षत्र अथवा सावन दिन और नक्षत्र दो ही अङ्ग थे। तिथि का मान लगभग 60 घटी होता है अर्थात् उसे अहोरात्र दर्शक कहना चाहिए। तिथ्यर्ध अर्थात् करण नामक अङ्ग का प्रचार तिथि के थोड़े ही दिनों बाद हुआ होगा और उसके बाद वार प्रचलित हुए होंगे, अथर्वज्योतिष में करण व वार दोनो हैं। ऋक्गृह्य परिशिष्ट में तिथि, करण, मुहूर्त्त, नक्षत्र, तिथि की नन्दादि संज्ञाओं, दिनक्षय और वार का वर्णन हैं, पर मेषादि राशियाँ नहीं हैं। वर्तमान पञ्चाङ्ग का स्वरूप प्राचीनकाल से बहुत ही भिन्न हो चुका है।

1.2. उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप निम्नलिखित शास्त्रीय ज्ञान से अवगत हो पायेंगे :

1. नित्य प्रतिदिन पञ्चाङ्ग का प्रयोग।

2. पञ्चाङ्ग के सिद्धान्तो का अधारभूत ज्ञान।

1.3. विषय प्रवेश

प्राचीनकाल से पञ्चाङ्ग का मूहूर्त प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में रहा है। प्रात: काल निद्रामुक्त होते ही पहली जिज्ञासा यही होती है कि आज कौनसा वार, तिथि, व्रत-पर्व आदि है। इस इकाई में सभी जिज्ञासुओं को पञ्चाङ्ग का व्यवहारिक ज्ञान दिया जा रहा है, जिससे वह स्वयं दैनिक ज्योतिषीय निर्णय स्वत: कर सके।

1.3.1. पञ्चाङ्ग

पाँच अङ्गों से पञ्चाङ्ग बना है - तिथि, वार, नक्षत्र, योग, करण।

तिथिर्वारञ्च नक्षत्रं योग: करणमेव च।

यत्रैतत पञ्चकं स्पष्टं पञ्चाङ्गं तदुदीरितम।।

- पञ्चाङ्गविज्ञानम

पाँच अङ्गो के अतिरिक्त भी अन्य अनेकानेक विषयों का समावेश पञ्चाङ्ग में होता है। वर्ष के सम्वत्सरादि निर्णय, ग्रहण-निर्णय, व्रत-पर्वादि, दैनिक ग्रह-स्पष्ट, विवाह आदि मुहूत्त

1.3.2. संवत्सर

पञ्चाङ्ग का प्रारम्भ संवत्सर से होता है। यही वर्ष गणना संवत्सर की जननी है। ब्राह्म, दैव, मानव, पित्र्य, सौर, सावन, चान्द्र एवं बार्हस्पत्यादि मतों के अनुसार विभिन्न कालमानों को व्यक्त किया जाता है। तदनन्तर बार्हस्पत्य और चान्द्र मान से संवत्सर की प्रतिपत्ति होती है।

1.3.2.1. संवत्सर आनयन विधि

शालिवाहन शक एवं विक्रमसम्वत में प्राय: 135 का अन्तर होता है। अत: शकाब्द में 135 जोडने पर विक्रमाब्द प्राप्त होता है। प्रस्तुत सम्वत में 09 जोड़कर प्राप्त संख्या को 60 से विभाजित करे। शेषाङ्कों के अनुसार प्रभवादि गत संवत्सर जानने चाहिए।

उदाहरणतया :-

सम्वत 2022 + 9 = 2231 " 60 अर्थात् लब्धि 33 एवं शेष 51 प्राप्त हुआ। अत: 51 संवत्सर भोगने के बाद 52वाँ कालयुक्त नामक संवत्सर वर्तमान है।

1.3.3. संवत्सर स्वामी

60 संवत्सर को द्वादश भागों में विभाजित कर देने से प्रत्येक भाग में पाँच संवत्सर होते है। इस संवत्सरपंचक की कालावधि युग कहलाती है। पाँच-पाँच सम्वत्सरों से निर्मित क्रम प्राप्त युगसमूहों के अधिपति इस प्रकार है :-

संवत्सर (पाँच-पाँच)	स्वामी
1-5	विष्णु
6-10	बृहस्पति
11-15	इन्द्र
16-20	अग्नि
21-25	विश्वकर्मा
26-30	अहिर्बुध्न्य
31-35	पितर
36-40	विश्वेदेवा
41-45	चन्द्र
46-50	इन्द्राग्नि
51-55	अश्विनी
56-60	भग

1.3.4. संवत्सरफल

वर्तमान संवत्सर संख्या को दुगुना करके उसमें 03 घटाकर 07 का भाग देवे। शेषाङ्कों के अनुसार सम्वत फल निम्रलिखित है :-

शेषाङ्क	फल	शेषाङ्क	फल
0	पीड़ा	1	दुर्भिक्ष
2	सुभिक्ष	3	मध्यम
4	दुर्भिक्ष	5	सुभिक्ष
6	मध्यम		

विक्रमादित्य काल से प्रचलित प्रभवादि सम्वत्सरों की शुभाशुभता उनकी संज्ञा से ही झलकती है, इनके निम्नलिखित अविच्छिन्न क्रम है :-

1. प्रभव	2. विभव	3. शुक्ल	4. प्रमोद	5. प्रजापति
6. अङ्गिरा	7. श्रीमुख	8. भाव	9. युवा	10. धाता
11. ईश्वर	12. बहुधान्य	13. प्रमाथी	14. विक्रम	15. वृष
16. चित्रभानु	17. सुभानु	18. तारण	19. पार्थिव	20. व्यय
21. सर्वजित	22. सर्वधारी	23. विरोधी	24. विकृति	25. खर
26. नन्दन	27. विजय	28. जय	29 मन्मथ	30. दुर्मुख
31. हेमलम्बी	32. विलम्बी	33. विकारी	34. शार्वरी	35. प्लव
36. शुभकृत	37. शोभन	38. क्रोधी	39. विश्वावसु	40. पराभव
41. प्लवङ्ग	42. कीलक	43. सौम्य	44. साधारण	45.विरोधकृत्
46. परिधावी	47. प्रमादी	48. आनन्द	49. राक्षस	50. नल
51. पिङ्गल	52. कालयुक्त	53. सिद्धार्थी	54. रौद्र	55. दुर्मति
56. दुन्दुभि	57. रुधिरोदगारी	58. रक्ताक्षी	59. क्रोधन	60. क्षय

1.3.3. ऋतु

सूर्य का मेषादि प्रत्येक दो-दो राशियों पर संक्रमण काल ऋतु कहलाता है। इस प्रकार एक वर्ष में छ: ऋतुयें होती है :-

1. बसन्त	2. ग्रीष्म	3. वर्षा	4. शरद
5. हेमन्त	6. शिशिर		

ऋतुएँ	सौरमास	चान्द्रमास
बसन्त	मीन-मेष	चैत्र-वैशाख
ग्रीष्म	वृष-मिथुन	ज्येष्ठ-आषाढ़
वर्षा	कर्क-सिंह	श्रावण-भाद्रपद
शरद	कन्या-तुला	आश्विन-कार्तिक
हेमन्त	वृश्चिक-धनु	मार्गशीर्ष-पौष
शिशिर	मकर-कुम्भ	माघ-फाल्गुन

2.3.3.1. ऋतुओं का विभाग (आर्षवचन के अनुसार) :-

ऋतुएँ	प्रकार
बसन्त, ग्रीष्म एवं वर्षादि	दैवी-ऋतु
शरद, हेमन्त एवं शिशिर	पितर-ऋतु

इनका फल स्व-कर्मानुसार होता है।

1.3.4. अयन

क्रान्तिवृत्त के प्रथमांश का विभाजन उत्तर व दक्षिण गोल के मध्यवर्ती धुरवों के द्वारा माना गया है। यही विभाजन उत्तरायण और दक्षिणायन कहलता है। इन अयनों का ज्योतिष संसार में प्रमुख स्थान है।

1.3.4.1. उत्तरायण

इसे सौम्यायन भी कहा जाता है। उत्तरायण प्रवृत्ति सायन मकर के सूर्य (जो पञ्चाङ्गों में प्राय: "मकरे भानु: से निर्दिष्ट किया जाता है) अर्थात् 21-22 दिसम्बर से लेकर मिथुन का सूर्य 06 मास तक रहता है। साधारणतया लौकिकमतानुसार यह माघ से आषाढ़ पर्यन्त माना जाता है। सौम्यायन सूर्य की कालावधि को देवताओं का दिन माना जाता है एवं इस समय में सूर्य देवताओं का अधिपति होता है। शिशिर, बसन्त और ग्रीष्म- ये तीन ऋतुएँ उत्तरायण सूर्य का सङ्गठन करती है। इस अयन में नूतन गृह-प्रवेश, दीक्षा-ग्रहण, देवता, उद्यान, कुआँ, बावड़ी, तालाब आदि की प्रतिष्ठा, विवाह, चूड़ाकरण तथा यज्ञोपवीत प्रभृति संस्कार एवं इतरेतर शुभकर्म करना शास्त्रसम्मत है।

नोट :- उत्तरायण प्रवृत्ति के समय से 40 घटी पर्यन्त समय पुण्यकाल माना जाता है। जो सभी शुभकार्यों में वर्जित है।

1.3.4.2. दक्षिणायन

यह समय देवताओं की रात्रि माना गया है। सायन कर्क के सूर्य (जिसके यत्र-तत्र "कर्केभानु: से प्रदिष्ट किया जाता है) अथवा 21-22 जून से 06 मास अर्थात् धनुराशिस्थ सायन सूर्य तक का मध्यान्तर

दक्षिणायन (याम्यायन) संज्ञक है। दक्षिणायन में वर्षा-शरद-हेमन्त ऋतु की प्रवृत्ति होती है। दक्षिणायन काल में सूर्य पितरों का अधिष्ठाता कहा गया है अतएवं इस काल में षोड़श संस्कार तथा अन्य माङ्गलिक कार्यों के अतिरिक्त कर्म ही किये जाते है। उग्रदेवता, मातृकाएँ, भैरव, वाराह, नारसिंह, त्रिविक्रम (विष्णु), महिषासुर का वध करते हुए दुर्गा की स्थापना दक्षिणायन में भी की जा सकती हैं।

नोट :- दक्षिणायन प्रवेश होने के समय से 15 घटी का समय पुण्यकाल के नाम से प्रसिद्ध है और वह सभी शुभाशुभ कर्मों में विशेषत: त्याज्य है।

1.3.5. मास

मास चार प्रकार के होते है :-

1.3.5.1. सौरमास

यह सूर्य संक्रमण से सम्बद्ध है। मेषादि बारह राशियों पर सूर्य के गमनानुसार ही मेषादिसंज्ञक द्वादश सौरमासों का गठन किया गया है। एक सौरमास लगभग 30 दिन 10 घण्टे का होता है। विवाह, उपनयनादि षोड़श संस्कार, यज्ञ, एकोद्दिष्ट श्राद्ध, ऋण का दानादान एवं ग्रह-चारादि अन्योन्यविषयक कालों का विचार सौरमास में करना चाहिए।

1.3.5.2. चान्द्रमास

यह चन्द्र से सम्बन्धित है। अमावस्या के पश्चात् शुक्ल प्रतिपदा को चन्द्र किसी नक्षत्रविशेष में प्रवेश करके प्रतिदिन एक-एक कला के परिणाम से बढ़ता हुआ पूर्णिमा को पूर्णचन्द्र के रूप में दृष्टिगोचर होता है। पुन: कृष्णप्रतिपदा से क्रमश: अल्पशुक्ल होता हुआ चन्द्रमा अमावस्या को पूर्णान्धिकाररूपी मृतावस्था को प्राप्त होता है। अत: एक मत के द्वारा शुक्ल प्रतिपदा से अमावस्या तक अत्यन्तर मतानुसारेण शुक्ल प्रतिपदा से पूर्णिमा तक का समय चान्द्रमास कहा जाता है। यद्यपि शुक्लपक्षादि मास मुख्य तथा कृष्णपक्षादि मास गौण है। तथापित देशभेद के अनुसार दोनों प्रकारों से चान्द्रमासों की प्रवृत्ति को ग्रहण किया जाता है। प्रत्येक चान्द्रमास प्राय: 29 दिन 22 घण्टे का होता है। चैत्रादि विभिन्न चान्द्रमासों की संज्ञायें पूर्णिमा को चन्द्र द्वारा संक्रमित नक्षत्र संज्ञा पर आधारित है :-

मास	**नक्षत्र**
चैत्र	चित्रा, स्वाती
वैशाख	विशाखा, अनुराधा
ज्येष्ठ	ज्येष्ठा, मूल
आषाढ़	पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा
श्रावण	श्रवण, धनिष्ठा
भाद्रपद	शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद

आश्विन	रेवती, अश्विनी, भरणी
कार्तिक	कृतिका, रोहिणी
मार्गशीर्ष	मृगशिरा, आद्र्रा
पौष	पुनर्वसु, पुष्य
माघ	अश्लेषा, मघा
फाल्गुन	पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त

1.3.5.3. सावनमास

एक अहोरात्र में 24 घण्टे या 60 घटी मानकर 30 दिन का एक सावनमास होता है। जातक की अवस्था, उत्तराधिकारियों में सम्पत्ति-विभाजन, स्त्रीगर्भ की वृद्धि तथा प्रायश्चित्तादि कर्मों में सावनमास का ही विचार करना चाहिए।

1.3.5.4. नाक्षत्रमास

चन्द्रमा के द्वारा 27 नक्षत्रों के भ्रमण को सम्पूर्ण करने में आवश्यक समयावधि को एक नाक्षत्रमास कहते है। नाक्षत्रमास का उपयोग जलपूजन, नक्षत्रशान्ति, यज्ञ-विशेष तथा गणितादि में किया जाता है।

1.3.5.5. क्षयाधिमास विचार

सौरवर्ष का मान	: 365 दिन -15 घटी - 31 पल - 30 विपल
चान्द्रवर्ष का मान	: 354 दिन - 22 घटी - 01 पल - 33 विपल

अत: स्पष्ट है कि चान्द्रवर्ष सौर वर्ष से 10 दिन - 53 घटी - 30 पल - 07 विपल कम है। इस क्षतिपूर्ति और दोनों मासों के सामञ्जस्य के उद्देश्य से हर तीसरे वर्ष अधिक चान्द्रमास तथा एक बार 141 वर्षों के बाद तथा दूसरी बार 19 वर्षों के बाद क्षय-चान्द्रमास की आवृत्ति होती है।

असंक्रान्तिमासोऽधिमास: स्फुटं स्याद्।

द्विसंक्रान्तिमास: क्षयाख्य: कदाचित्।। -

सिद्धान्तशिरोमणि

जिस चान्द्रमास में स्पष्ट सूर्य की संक्रान्ति न हो वह "अधिकमास तथा जिस चान्द्रमास में दो बार सूर्य की संक्रान्ति हो, वह "क्षयमास" कहलाता है।

क्षयमास व अधिकमास दोनों ही "मलमास" कहलाते है।

1.3.5.6. मलमास में करणीय व अकरणीय कार्य

सन्ध्या-अग्निहोत्र-पूजनादि, नित्यकर्म, गर्भाधान, जातकर्म-सीमन्त-पुंसवन संस्कार, रोगशान्ति, अलभ्य योग में श्राद्ध, द्वादशाह-सपिण्डीकरण, मन्वादि तिथियों का दान, दैनिक दान, यव-तिल-गो-भूमि तथा

स्वर्णादि दान, अतिथि-सत्कार, विधिवत स्नान, प्रथम वार्षिक श्राद्ध, मासिक श्राद्ध एवं राजसेवा विषयक कर्म मलमास में शास्त्रसम्मत है।

अनित्य व अनैमित्तिक कार्य, द्वितीय वार्षिक श्राद्ध, तुलापुरुष-कन्यादान-गजदानादि, अन्योन्य षोड़श महादान, अग्न्याधान, यज्ञ, अपूर्व तीर्थयात्रा, अपूर्व देवता के दर्शन, वाटिका-देव-कुआँ-तालाब-बावड़ी आदि के निर्माण और प्रतिष्ठा, नामकरण-उपनयन-चौलकर्म-अन्नप्राशनादि संस्कार विशेष, राज्याभिषेक, सकामना, वृषोत्सर्ग बालक का प्रथम निष्क्रमण, व्रतारम्भ, व्रतोद्यापन, गृहारम्भ, गृहप्रवेश, विवाह, देवता का महोत्सव, कर्मानुष्ठानादि काम्यकर्म, पाप-प्रायश्चित, प्रथम उपाकर्म व उत्सर्ग, हेमन्त ऋतु का अवरोह, सर्पबलि, अष्टकाश्राद्ध, ईशान देवता की बलि, वधूप्रवेश, दुर्गा-इन्द्र का स्थापन और उत्थान, देवतादि की शपथ ग्रहण करना, विशेष परिवर्तन, विष्णु-शयन और कमनीय यात्रा का मलमास में निषेध है।

1.3.5.7. जन्ममास

जन्मदिन से एक सावनमास (30 दिन) पर्यन्त जन्ममास कहलाता है। मतान्तरेण जिस कृष्णपक्षादि चान्द्रमास में व्यक्ति का जन्म हो, उसे ही जन्ममास माना जाता है। पुनश्च क्षयमास के अन्तर्गत तिथि के पूर्वार्द्ध में जन्म हो तो पूर्वमास तथा परार्द्ध में जन्म हो तो आगामी मास ही जन्ममास निर्धारित किया जाना चाहिए।

जन्ममास में साधारणतया क्षौरकर्म (चूड़ाकरण), यात्रा व कर्णवेधादि कर्म वर्जित है, परन्तु स्नान, दान, जप, होम, विवाह एवं कमनीय कर्यो के लिए जन्ममास शुभफलदायी होता है। यथा -

स्नानं दानं तपो होमः सर्वमाङ्गल्यवर्द्धनम।

उद्वाहश्च कुमारीणां जन्ममासे प्रशस्यते।। -

श्रीपतिसमुच्चय

जन्मनि मासि विवाहः शुभदो जन्मर्क्षजन्मराश्योश्च।

अशुभं वदन्ति गर्गाः श्रुतिवेधक्षौरयात्रासु।। - पीयूषधारा

जन्ममास में माङ्गलिक कार्य सम्पादन के निर्णयान्तर्गत वसिष्ठ ने केवल जन्मदिन गर्गाचार्य जन्मानन्तर 08 दिन, अधिपति ने 10 दिन और भागुरि ने जन्म के पक्ष को ही केवल दूषित बतलाया है एवं जन्ममास के शेष दिन शुभकर्म सम्पादन में ग्राह्य है :-

जातं दिनं दूषयते वसिष्ठो ह्यष्टौ च गर्गो नियतं दशरात्रिः।

जातस्यं पक्षं किल भागुरिश्च शेषाः प्रशस्ताः खलु जन्ममासि।।

- राजमार्तण्ड

1.3.6. पक्ष

जिस रात्रि में सूर्य और चन्द्रमा किसी राशि में एक ही अंश पर हो, वह रात्रि अमावस्या कहलाती है। अमावस्या से निरन्तर बढ़ती हुई चन्द्र-सूर्य की परस्पर दूरी जिस दिन 180 अंश परिमित हो जाती है, उस दिन रात्रि को पूर्ण चन्द्र दृष्टिगोचर होता है और वह रात्रि पूर्णिमा कहलाती है। अत: अमावस्या से पूर्णिमा तक का यह 15 दिनात्मक प्रकाशमान मध्यान्तर "शुक्लपक्ष''कहलाता है, तत्पश्चात पूर्णिमा से अमावस्या तक का काल "कृष्णपक्ष''कहलाता है।

शुक्लपक्ष देवप्रधान होने से देवकर्मों में तथा कृष्णपक्ष में पितराधिष्ठित होने के कारण पितृकर्मों में विहित है अर्थात् शुक्लपक्ष में सर्व शुभकार्य तथा कृष्णपक्ष में सभी पितृकार्य प्रशस्त है। यथा -

य देवा पूर्यतेऽद्र्धमास स देवा, योऽपक्षीयते स पितर:।। -

शतपथ ब्राह्मण

प्राय: एक पक्ष 15 दिन का होता है और कभी-कभी तिथि-क्षय-वृद्धि के कारण न्यूनाधिक भी हो सकता है, परन्तु एक ही पक्ष में दो बार तिथि-क्षय हो जाने से 13 दिनात्मक पक्ष समस्त कर्मों में वर्जनीय है। यथा :-

पक्षस्य मध्ये द्वितिथी पतेतां तदा भवेद्रौरवकालयोग:।

पक्षे विनष्टे सकलं विनष्टमित्याहुराचार्यवरा: समस्ता:।। -

ज्योतिर्निबन्ध

1.3.7. तिथि

"रविचन्द्रयोर्गत्यन्तरं तिथि:''अर्थात् सूर्य व चन्द्रमा की गति का अन्तर ही तिथि का मान होता है। इन्हें कुल 30 भागों में विभाजित किया गया है। इस प्रकार सूर्य और चन्द्र के प्रत्येक 12 अंश पर एक तिथि बढ़ती है, जिन्हें क्रमश: प्रतिपदा (प्रथमा) द्वितीया आदि से लेकर अमावस्या तक कृष्णपक्ष की तथा इसी प्रकार प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया आदि से पूर्णिमा तक शुक्लपक्ष की 15-15 तिथियाँ होती है। सम्पूर्ण तिथियों को मिलाकर एक चान्द्रमास होता है, जिसे पञ्चाङ्ग में अलग से चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़, श्रावण, भाद्रपद आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष, पौष, माघ एवं फाल्गुन नामों से अलग-अलग प्रदर्शित किया जाता है।

अमावस्या को हुए सूर्य-चन्द्रमा के समागम के पश्चात् दोनों ग्रह उत्तरोत्तर दूर होते जाते है, उस दिन चन्द्रमा 0 अंश से प्रारम्भ होकर जब 12 अंश तक जाता है, तब शुक्ल प्रतिपदा का आगमन होता है। इसी प्रकार 12-12 अंशों के परिमाण से अग्रिम तिथियाँ बनती है। अन्त में पूर्णिमा को सूर्य-चन्द्र में 180 अंश की दूरी हो जाने पर चन्द्रमा मण्डल पूर्ण प्रकाशमान हो जाता है। इसी प्रकार 12 अंश के क्रमिक ह्रास के साथ-साथ कृष्णा प्रतिपदा का आगमन इसी प्रकार होता है, यही क्रम कृष्णपक्ष का है।

1.3.7.1. अमावस्या के भेद

सिनीवाली, दर्श, कुहू। प्रात: काल रात्रिपर्यन्त व्यापिनी अमावस्या 'सिनीवाली' चतुर्दशी से विद्धा 'दर्श तथा प्रतिपदा से युक्त 'कुहू संज्ञक होती है।

1.3.7.2. पूर्णिमा के भेद

अनुमति व राका। रात्रि को एक कलाहीन और दिन में पूर्णचन्द्र से सम्पन्न 'अनुमतिसंज्ञक' पूर्णिमा चतुर्दशीयुक्त होती है, परन्तु रात्रि में पूर्ण चन्द्रमा सहित पूर्णिमा प्रतिपदा से युक्त और 'राका' होती है।

1.3.7.3. तिथि को शास्त्रों में पाँच भागों में विभाजित किया है (नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता पूर्णा) :-

संज्ञा		**तिथियाँ**	
नन्दा	1	6	11
भद्रा	2	7	12
जया	3	8	13
रिक्ता	4	9	14
पूर्णा	5	10	15/30

1.3.7.4. नन्दादि तिथियों में उत्पन्न जातकों का फल :-

नन्दा तिथि (1-6-11) :- नन्दा तिथि में जन्म लेने वाले जातक मान पाने वाले, देवताओं की भक्ति में निष्ठा रखने वाले, विद्वान, ज्ञानवान व लोकप्रिय होते है।

वस्त्र, गीत, वाद्य, नृत्य कृषि, उत्सव, गृहसम्बन्धी कार्य तथा किसी शिल्प का अभ्यास हेतु नन्दा तिथि श्रेष्ठ है।

भद्रा तिथि (2-7-12) :- भद्रा तिथि में जन्म लेने वाले जातक बन्धु-बान्धवों में सम्मानित, राजसेवक, धनी तथा सांसारिक भय से डरने एवं परोपकारी होते है।

विवाह, उपनयन, यात्रा, आभूषण-निर्माण और उपयोगी, कला सीखना तथा हाथी-घोड़ा एवं सवारीविषयक कार्यों हेतु भद्रा तिथि श्रेष्ठ है।

जया तिथि (3-8-13) :- जया तिथि में जन्म लेने वले जातक राजाओं सदृश या राजाओं से पूजित किन्तु पुत्र-पौत्रों से रहित शूरवीर दीर्घायु और दूसरों के मन की बात को जानने वाले होते है।

सैन्य-संगठन, सैनिक-शिक्षा, संग्राम, शस्त्र-निर्माण, यात्रा, उत्सव, गृहारम्भ, गृहप्रवेश, औषधकर्म और व्यापार हेतु जयातिथि श्रेष्ठ है।

रिक्ता तिथि (4-9-14) :- रिक्ता तिथि में जन्म लेने वाले जातक प्रमादि, प्रत्येक कार्य में अनुमान लगाने वाले गुरुओं के निन्दक, शास्त्र के ज्ञाता, दूसरों के मद को नाश करने वाले तथा अत्यधिक कामचेष्टा रखने वाले होते है।

शत्रुओं का दमन और कैद करना, विष देना, शस्त्रप्रयोग, शल्यक्रिया तथा अग्नि लगाना आदि क्रूरकर्म हेतु रिक्तातिथि श्रेष्ठ है।

पूर्णा तिथि (5-10-15/30) :- पूर्णा तिथि में जन्म लेने वाले जातक धन से परिपूर्ण, वेद एवं शास्त्रों के अर्थों को जानने वाले विद्वान, सत्यवक्ता तथा शुद्ध मन वाले होते है।

विवाह, यज्ञोपवीत, आवागमन, नृपाभिषेक तथा शान्तिक-पौष्टिक कर्म हेतु पूर्णातिथि श्रेष्ठ है।

1.3.7.5. तिथिसमय :- सूर्योदय के समय जो तिथि वर्तमान हो, वह उदयव्यापिनी तिथि दिन-रात्रि तक दान, पठन, व्रतोपवास, स्नान, देवकर्म, विवाहादि संस्कार तथा प्रतिष्ठादि समस्त माङ्गलिक कार्यों में ग्राह्य है, परन्तु श्राद्ध, शरीर पर तैल या उबटन का प्रयोग, मैथुन तथा जन्म-मरण में तात्कालिक कर्मव्यापिनी तिथि को ही ग्रहण करना चाहिए।

1.3.7.6. छिद्रा तिथि :- प्रत्येक पक्ष की 4, 6 , 8, 9, 12 और 14 तिथियाँ पक्षछिद्रा कहलाती है तथा शुभकार्यों में इनका परित्याग ही अपेक्षित है। अत्यावश्यकता में निर्दिष्ट तिथियों की आदिम घटियों का त्यागकर शेष घटियों को प्रयोगार्थ ग्रहण करना चाहिए।

तिथि	4	6	8	9	12	14
घटी	8	9	14	25	10	05

1.3.7.7. क्षय तिथि

सूर्योदय के बाद किसी तिथि का प्रारम्भ हो तथा अग्रिम सूर्योदय से पहिले उस तिथि का समापन हो जाये, तो वह तिथि क्षयतिथि कहलाती है।

1.3.7.8. वृद्धि तिथि

यदि एक ही तिथि के प्रमाण में दो सूर्योदय हो जाये अर्थात् सूर्योदय के पहिले किसी तिथि का प्रारम्भ हो जाये तथा अग्रिम सूर्योदय के पश्चात् उस तिथि का समापन हो तो वह तिथि वृद्धितिथि कहलाती है।

1.3.7.9. क्षय व वृद्धि तिथि का त्याग व परिहार

क्षय व वृद्धि तिथियाँ सभी कर्मों में त्याज्य है तथा आवश्यक होने पर 'तिथिक्षय' अथवा 'तिथिवृद्धि' के दिन कार्य के समय लग्न कुण्ड़ली में बृहस्पति केन्द्रस्थ हो तो तिथिदोष समाप्त हो जाता है। यथा -

अमाख्यं तिथेर्दोषं केन्द्रगो देवपूजितः।

हन्ति यद्वत पापचयं व्रतं द्वैवार्षिक यथा।। - वसिष्ठ

1.3.7.10. पर्व तिथियाँ

कृष्णा अष्टमी, चतुर्दशी, अमावस्या, पूर्णिमा तथा सूर्य-संक्रान्ति के दिन वर्तमान तिथि 'पर्वसंज्ञक' होती है, जो सभी माङ्गलिक कार्यों में वर्जित है।

1.3.7.11. गलग्रह तिथियाँ

चतुर्थी, सप्तमी, अष्टमी, नवमी, त्रयोदशी, चतुर्दशी, अमावस्या, प्रतिपदा ये सभी कृष्णपक्ष की 'गलग्रह' तिथियाँ है, इनका सभी माङ्गलिक कार्यों में निषेध है।

1.3.7.12. सोपपद व कुलाकुल तिथियाँ

ज्येष्ठशुक्ल द्वितीया, आषाढ़ शुक्ल दशमी, पौषशुक्ल एकादशी, माघ की कृष्णपक्ष व शुक्लपक्ष की चतुर्थी व द्वादशी ये तिथियाँ 'सोपपद' होती है। ये सभी तिथि शुभफलदायक है।

प्रत्येक मास की द्वितीया, षष्ठी व द्वादशी तिथि 'कुलाकुल' संज्ञक होती है। ये सभी तिथियाँ मध्यम फलदायक है।

1.3.7.13. तिथियों के स्वामी

भारतीय परम्परा में कङ्कर-कङ्कर में शङ्कर की कल्पना की गयी है, इसी प्रकार पञ्चाङ्ग के प्रत्येक अङ्ग का स्वामी निर्धारित किया गया है। अभीष्ट देवताओं के शुभाशुभ फल भी प्रतिपादित किये गये है, इसी क्रम में यहाँ तिथियों के स्वामी का विवेचन किया जा रहा है।

तिथि	स्वामी	निर्दिष्ट कर्म
प्रतिपदा	अग्नि	विवाह, यात्रा, उपनयन, प्रतिष्ठा, सीमन्तोन्नयन, चौलकर्म, गृहारम्भ, गृह-प्रवेश,शान्तिक-पौष्टिक कार्य आदि समस्त माङ्गलिक कार्य।
द्वितीया	ब्रह्मा	राजा-मन्त्री-सामन्त-देश-कोश-गढ़ और सेनादि राज के सप्ताङ्ग व छत्र, चामर,आदि राज्य के सप्तचिह्न-सम्बन्धी कार्य, वास्तुकर्म, प्रतिष्ठा, यात्रा, विवाह,आभूषण-निर्माण व धारण, उपनयनादि शुभकर्म।
तृतीया	पार्वती	संगीत-विद्या, शिल्पकर्मविषयक कर्म, सीमन्त, चूड़ाकरण, अन्नप्राशन, गृहप्रवेश तथा द्वितीया तिथि मे निर्दिष्ट सभी कर्म तृतीया तिथि में भी प्रशंसनीय है।
चतुर्थी	गणेश	शत्रुताडन, बिजली के कार्य, विषदान, हिंसक कर्म, अग्नि लगाना, बन्दी बनानातथा शस्त्रप्रयोगादि सभी कर्म।

पञ्चमी	सर्प	चर-स्थिरादि सभी कर्म, परन्तु किसी को ऋण नहीं देना चाहिए।
षष्ठी	कार्तिकेय	शिल्पकर्म, रणकार्य, गृहारम्भ, वस्त्रालङ्कार कृत्य, अखिलकाम्य कर्म, परन्तु इसदिन दन्तधावन, आवागमन, तैलाभ्यङ्ग, काष्ठकर्म एवं पितृकार्य वर्जित है।
सप्तमी	सूर्य	हस्तिकर्म, विवाह, संगीतकर्म, वस्त्राभूषण निर्माण और धारणयात्रा, गृहप्रवेश,वधूप्रवेश, संग्राम तथा द्वितीया-तृतीया व पंचमी में निर्दिष्ट सभी कर्म सप्तमी मेंभी ग्राह्य है।
अष्टमी	शिव	युद्ध, वास्तुकार्य, शिल्प, राजकार्य, आमोद-प्रमोद, लेखन-नृत्य, स्त्रीकर्म, रत्नपरीक्षा,आभूषण-कर्म तथा शस्त्रधारण, परन्तु मांस का सेवन इस दिन कदापि नहीं करे।
नवमी	दुर्गा	चतुर्थी में उक्त सभी कर्म, विग्रह, कलह, जुआ खेलना, मद्यनिर्माण-पान,आखेट तथा शस्त्रनिर्माण श्रेष्ठ है।
दशमी	यम	द्वितीया-तृतीया-पञ्चमी-सप्तमी में निर्दिष्ट सभी कर्म, हाथी-घोड़ा से सम्बन्धी कर्म तथा राजकार्य श्रेष्ठ है। इस दिन तैलाभ्यङ्ग नहीं करे।
एकादशी	विश्वेदेवा	एकादशी, व्रतोपवास, यज्ञोपवीत, पाणिपीडन, देव महोत्सवादि अखिल धर्म कर्म, गृहारम्भ, युद्धशिल्प सीखना, मद्यनिर्माण व गमन-आगमन व वस्त्रालङ्कार कार्य श्रेष्ठ है
द्वादशी	हरि	अखिल चर-स्थिर कार्य, पाणिग्रहण, उपनयनादि माङ्गलिक आयोजन श्रेष्ठ है, परन्तु तैलमर्दन, नूतन गृहारम्भ, गृहप्रवेश व यात्रा का परित्याग करे।
त्रयोदशी	काम	शुक्लपक्ष की त्रयोदशी ही ग्राह्य है। द्वितीया-तृतीया-पञ्चमी-सप्तमी तथा दशमी में निर्दिष्ट सभी कार्य शुक्लपक्ष की त्रयोदशी में श्रेष्ठ है, परन्तु मतान्तरेण इस दिन यात्रा-गृहप्रवेश, तैलाभ्यङ्ग, युद्ध, वस्त्राभूषण कर्म तथा यज्ञोपवीत के अतिरिक्त समस्त माङ्गलिक कार्य शुभ है।
चतुर्दशी	शिव	विषदान, शस्त्रधारण प्रयोग तथा चतुर्थीयुक्त दुष्टकर्म शास्त्रोक्त है, परन्तु चतुर्दशी में क्षौरकर्म तथा यात्राकर्म आदि कर्म वर्जित है।

पूर्णिमा	चन्द्रमा	विवाह, देव, जलाशय, वाटिका की प्रतिष्ठा, शिल्पभूषणादि कर्म, संग्राम तथा याज्ञिक, शान्तिक-पौष्टिक व वास्तु कर्म श्रेष्ठ है।
अमावस्या	पितर	इस दिन अग्न्याधान, पितृकर्म तथा महादान प्रशस्त है, परन्तु इसमें कोई शुभ कर्म तथा स्त्रीसङ्ग रमण नहीं करना चाहिए।

1.3.7.14. तिथियों में निषिद्ध कार्य (इन तिथियों में ये कार्य अशुभ होते है, अर्थ चक्र से स्पष्ट है।) :-

तिथि	कार्य	तिथि	कार्य
षष्ठी	तैलाभ्यङ्ग	द्वितीया	उबटन
अष्टमी	मांसभक्षण	दशमी	उबटन
चतुर्दशी	क्षौरकर्म	त्रयोदशी	उबटन
अमावस्या	रतिक्रिया	अमावस्या	आँवला मिश्रित जल से स्नान
सप्तमी	आँवला मिश्रित जल से स्नान	नवमी	आँवला मिश्रित जल से स्नान

1.3.7.15. चैत्रादि मास में शून्य तिथियाँ

(इन तिथियों में ये कार्य अशुभ होते है, अर्थ चक्र से स्पष्ट है।) :-

मास	शून्यतिथियाँ कृष्णपक्ष	शून्यतिथियाँ शुक्लपक्ष
चैत्र	8, 9	8, 9
वैशाख	12	12
ज्येष्ठ	14	13
आषाढ़	6	7
श्रावण	2, 3	2, 3
भाद्रपद	1, 2	1, 2
आश्विन	10, 11	10, 11
कार्तिक	5	14
मार्गशीर्ष	7, 8	7, 8
पौष	4, 5	4, 5
माघ	5	6

फाल्गुन	4	3

1.3.7.16. पक्षरन्ध्र तिथियाँ

चतुर्थी, षष्ठी, अष्टमी, नवमी, द्वादशी व चतुर्दशी इन तिथियों की पक्षरध्र संज्ञा होती है, इनमें कोई भी शुभ कार्य नहीं करना चाहिए। यदि बहुत-ही आवश्यकता हो तो उपरोक्त तिथियों में चक्रानुसार कार्य करे :-

तिथि	त्याज्य घटी (दण्ड़)	तिथि	त्याज्य घटी (दण्ड़)
चतुर्थी	08	षष्ठी	09
अष्टमी	14	नवमी	24
द्वादशी	10	चतुर्दशी	05

1.3.7.17. तिथियोगिनी चक्र

दिशा	तिथि	दिशा	तिथि
ईशान	8, 30	पूर्व	1, 9
आग्नेय	3, 11	दक्षिण	5, 13
नैर्ऋत्य	4, 12	पश्चिम	6, 14
वायव्य	7, 15	उत्तर	2, 10

उपरोक्त तिथियों में योगिनी चक्रोक्त ईशादि दिशाओं में स्थित होती है। योगिनी यात्रा के समय बायें भाग में सुखदायक, पृष्ठ में वांछितफलप्रदायिनी, दक्षिण में धन का नाश करने वाली तथा सम्मुख में मृत्युकारक (कष्टदायक) होती हे। यथा -

योगिनी सुखदा वामे पृष्ठे वांछित दायिनी।

दक्षिणे धनहन्त्री च सम्मुखे मरणप्रदा।।

1.3.7.18. घाततिथियाँ (राशि के अनुसार)

यात्रा आदि में घात तिथि को वर्जित करना चाहिए।

तिथि	राशि	तिथि	राशि
1, 6, 11	मेष	5, 10, 15	वृष
2, 7, 12	मिथुन	2, 7, 12	कर्क
3, 8, 13	सिंह	5, 10, 15	कन्या
4, 9, 14	तुला	1, 6, 11	वृश्चिक

3, 8, 13	धनु	4, 9, 14	मकर
3, 8, 13	कुम्भ	5, 10, 15	मीन

1.3.7.19. तिथि अशुभफलनाशक पदार्थ

जिस तिथि में यात्रा करनी हो, यदि वह तिथि अशुभ हो तो निम्न चक्राङ्कित पदार्थों का भक्षण करके अथवा इन वस्तुओं का दान करके यात्रादि कार्य करने पर सफलता प्राप्त होती है तथा तिथिदोष नष्ट हो जाता है।

तिथि	पदार्थ	तिथि	पदार्थ
प्रतिपदा	मदार का पत्र	द्वितीया	चावल का धोया हुआ पानी
तृतीया	देशी घी	चतुर्थी	देशी घी का हलवा
पञ्चमी	हविष्यान्न	षष्ठी	स्वर्ण का धोया हुआ जल
सप्तमी	पुआ	अष्टमी	अनार का फल
नवमी	कमलपुष्प का जल	दशमी	गौमूत्र
एकादशी	जौ का भात	द्वादशी	दूध-चावल की खीर
त्रयोदशी	गुड़	चतुर्दशी	रक्त
पूर्णिमा	मूंग	अमावस्या	भात

1.3.7.20. तिथि में द्वारनिर्माण का निषेध :- इन तिथियों इन दिशाओं के द्वारा नहीं बनाने चाहिए और बने हुए द्वारो में से इन तिथियों में इन दिशाओं में प्रवेश अथवा इन द्वारों से गमन नहीं करना चाहिए।

दिशा	**तिथि**
पूर्व	पूर्णिमा तथा कृष्णपक्ष की अष्टमी
दक्षिण	शुक्लपक्ष की नवमी से चतुर्दशी तक
पश्चिम	अमावस्या, शुक्लपक्ष की अष्टमी
उत्तर	कृष्णपक्ष की नवमी से चतुर्दशी तक

1.3.7.21. मन्वादि तिथियाँ (इन तिथियों में शुभ कार्य नहीं करने चाहिए) :-

तिथि

1. चैत्रशुक्ल तृतीया व पूर्णिमा	2. कार्तिशुक्ल पूर्णिमा व द्वादशी
3. आषाढ़शुक्ल दशमी व पूर्णिमा	4. ज्येष्ठ व फाल्गुनशुक्ल पूर्णिमा
5. आश्विनशुक्ल नवमी	6. माघशुक्ल सप्तमी

7. पौषशुक्ल एकादशी	8. भाद्रपद शुक्ल तृतीया

9. श्रावणकृष्ण अमावस्या व अष्टमी

1.3.7.22. युगादि तिथियाँ (इन तिथियों में शुभ कार्य नहीं करने चाहिए) :-

तिथियाँ	युगादि
कार्तिकशुक्ल नवमी	सत युगादि
वैशाख शुक्ल तृतीया	त्रेतायुगादि
माघकृष्ण अमावस्या	द्वापरयुगादि
श्रावणकृष्ण त्रयोदशी	कलियुगादि

1.3.7.23. मन्वादि व युगादि तिथियों में करणीय कर्म

इन तिथियों में स्नान, हवन, जप, दान-पुण्य करने से अनन्तकोटि फल प्राप्त होता है, परन्तु विद्यारम्भ उपनयन, व्रतोद्यापन, विवाह, गृहनिर्माण, गृह-प्रवेश, नित्याध्ययन तथा यात्रादि में इन्हे त्याज्य बताया गया है।

शुक्लपक्ष में कर्तव्य श्राद्ध के लिए इन तिथियों का पूर्वाह्न और कृष्णपक्ष के श्राद्धों के इनका अपराह्न ग्राह्य है।

अपवाद :-

चैत्र व वैशाख शुक्ल तृतीया तथा माघशुक्ला सप्तमी तिथियाँ मन्वादि युगादि होने पर भी शुभकर्मों में ग्रहण करने की अनुमति शास्त्रों ने दी है। यथा -

या चैत्रवैशाखसितातृतीया माघे च सप्तम्यथ फाल्गुनस्य।

कृष्णे द्वितीयोपनये प्रशस्ता प्रोक्ता भरद्वाजमुनीन्द्रमुख्यैः।। - पीयूषधारा

1.3.7.24. तिथियों में आने वाली स्वयंसिद्ध तिथियाँ

तिथि	पर्व
चैत्रशुक्ल प्रतिपदा	नवीन सम्वत्सराम्भ (कल्पादि)
चैत्रशुक्ल नवमी	रामनवमी
वैशाखशुक्ल तृतीया	अक्षयतृतीया (त्रेतायुगादि)
वैशाख शुक्ल नवमी	जानकी नवमी
वैशाख शुक्ल पूर्णिमा	बुद्ध पूर्णिमा/पीपल पूर्णिमा
ज्येष्ठशुक्ल दशमी	गंगादशमी

ज्येष्ठशुक्ल एकादशी	निर्जला एकादशी***
आषाढ़शुक्ल नवमी	भड्ल्या नवमी
भाद्रपद कृष्ण अष्टमी	जन्माष्टमी***
भाद्रपदकृष्ण नवमी	गोगानवमी***
भाद्रपदशुक्ल एकादशी	जलझूलनी एकादशी
आश्विनशुक्ल दशमी	विजयादशी (दशहरा/मन्वादि)***
कार्तिककृष्ण अमावस्या	दीपावली (दीपमालिका)***
कार्तिकशुक्ल एकादशी	देवप्रबोधिनी एकादशी
माघशुक्ल पंचमी	बसन्त पंचमी
फाल्गुनशुक्ल द्वितीया	फुलेरा दोज
चैत्रकृष्ण अष्टमी	शीतलाष्टमी (बास्योड़ा)***

1.3.8. गण्डान्त विचार

1.3.8.1. तिथि गण्डान्त :- पूर्णा (5-10-15) तथा नन्दा (1-6-11) तिथि, इन तिथियों की क्रम से अन्त और आदि की 2-2 घटी दोषयुक्त होने से गण्डान्त नाम से प्रसिद्ध है। यह जन्म, यात्रा, विवाह, व्रतबन्ध आदि में कष्टकारक है।

1.3.8.2. लग्नगण्डान्त :- कर्क-सिंह, वृश्चिक-धनु तथा मीन-मेष इन दो-दो राशियों के अन्त और आदि की आधी-आधी घटी को गण्ड़ान्त कहते है। यह सभी शुभकर्मों में त्याज्य है।

1.3.8.3. नक्षत्रगण्ड़ान्त :- रेवती-अश्विनी, अश्लेषा-मघा तथा मीन-मेष के नक्षत्रों क्रम से अन्त और आदि की 2-2 घटियाँ अर्थात् दोनों की सन्धि के 4 घटी को गण्ड़ान्त कहते है। इसमें सभी माङ्गलिक कृत्य वर्जित है।

सभी प्रकार के गण्ड़ान्त में जन्म, यात्रा, विवाह आदि शुभकर्म वर्जित है।

1.3.9. वार (उदयात उदयं यावत भानो: भूमि: सावनवासर:)

दिनों के नाम को वार कहते है, जो भारतीय पद्धति के क्रमश: सूर्य, चन्द्र, मङ्गल अथवा भौम, गुरु या बृहस्पति, शुक्र तथा शनि के नाम पर सामान्यत: रविवार, सोमवार, मङ्गलवार, बुधवार, गुरुवार, शुक्रवार, शनिवार के नाम से जाने जाते है। इनका मान एक सूर्योदय से दूसरे सूर्योदय तक होता है। इसके स्वामी के नाम पर ही इन वारों का नामकरण हुआ है। जन्म, मरण, षोड़श संस्कार, यात्रा, यज्ञ, हवन-प्रतिष्ठादि सभी माङ्गलिक कार्यों में वार-प्रवृत्ति सूर्योदय से ही सर्वदा मानी जाती है तथापि प्रात:

सन्ध्यादि नित्य करणीय कर्मों में अद्र्धरात्रि के उपरान्त अग्रिम वार को सङ्कल्प में ग्रहण कर लिया जाता है।

1.3.9.1. शुभ-अशुभ वार

सोमवार, बुधवार, गुरुवार व शुक्रवार सौम्यवारों की श्रेणी में आते है तथा रविवार, मङ्गलवार व शनिवार क्रूरवारों की श्रेणी आते है। इन्हीं की सज्ञा के अनुसार ये अभीष्ट कर्मों में फलदायी होते है।

वारों की शुभता दिन-रात्रि के अनुसार भिन्न-भिन्न प्रभावोत्पादक होती है। यथा - रविवार, गुरुवार व शुक्रवार का प्रभाव रात्रि नगण्य में होता है तथा सोमवार, मङ्गवार व शनिवार का प्रभाव दिन में नगण्य होता है।

बुधवार का फल सभी समय में एकसमान होता है। यथा -

न वारदोषा: प्रभवन्ति रात्रौ देवेज्यदैत्येज्यदिवाकराणाम।

दिवा शशाङ्कार्कजभूसुतानां सर्वत्र निन्द्यो बुधवारदोष:।। -

ज्योतिर्निबन्ध:

1.3.9.2. वार व उनके करणीय कार्य

वार	देव	अधिदेव	करणीय कार्य
रविवार	शिव	अग्नि	राजकीय सेवा एवं अन्य राजकीय कार्यों के लिए शुभ है। यह ध्रुव एवं स्थिरसंज्ञक वार है।
सोमवार	पार्वती	जल	सभी कार्यों के लिए शुभ है। यह वार चर एवं चलसंज्ञक है।
मङ्गलवार	कार्तिकेय	भूमि	युद्ध, द्युतक्रिड़ा (जुआ, सट्टा), यात्रा, कर्ज देने, सभा में जाने, मुकदमा प्रारम्भ करने के लिए शुभ है। यह वार उग्र एवं क्रूरसंज्ञक है।
बुधवार	विष्णु	हरि	विद्या (कला-काव्य) का प्रारम्भ, नवीन व्यपार करना, नवीन लेखन, पुस्तकों का प्रकाशन, धन-संग्रह, प्रार्थना-पत्र प्रस्तुत करने हेतु शुभ है। मिश्र व साधारण संज्ञा बुध को दी गयी है।

गुरुवार	ब्रह्मा	इन्द्र	विद्या का प्रारम्भ, वैवाहिक-कार्यक्रम, उच्चाधिकारियों से मिलन, नवीन काव्य लेखन, प्रकाशन, धन-संग्रह आदि शुभ कार्यों के लिए श्रेष्ठ है। लघु व क्षिप्र संज्ञा गुरुवार को दी गयी है।
शुक्रवार	इन्द्र	इन्द्राणी	नवीन वस्त्र एवं आभूषणों को धारण करना, सौभाग्यवर्धनकार्य, चलचित्र शूटिंग कार्य एवं यात्रा जाने हेतु श्रेष्ठ है। मृदु एवं मैत्र संज्ञा शुक्रवार को दी गयी है।
शनिवार	काल	ब्रह्मा	नूतन गृहारम्भ, भूमि-क्रय, मशीनरी का शुभारम्भ, द्रव्य संग्रह, मकान का शिलान्यास (भूमिपूजन) आदि स्थिर कार्यों हेतु श्रेष्ठ है। यह वार दारुण व तीक्ष्ण संज्ञक है।

1.3.10. कालहोरा मुहूर्त

होरा	रवि	सोम	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
1	रवि	सोम	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
2	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मङ्गल	बुध	गुरु
3	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मङ्गल
4	सोम	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	रवि
5	शनि	रवि	सोम	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र
6	गुरु	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मङ्गल	बुध
7	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	रवि	सोम
8	रवि	सोम	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
9	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मङ्गल	बुध	गुरु
10	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मङ्गल
11	सोम	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	रवि
12	शनि	रवि	सोम	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र
13	गुरु	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मङ्गल	बुध
14	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	रवि	सोम

15	रवि	सोम	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
16	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मङ्गल	बुध	गुरु
17	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मङ्गल
18	सोम	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	रवि
19	शनि	रवि	सोम	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र
20	गुरु	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मङ्गल	बुध
21	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	रवि	सोम
22	रवि	सोम	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
23	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मङ्गल	बुध	गुरु
24	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मङ्गल

यदि किसी कार्य को करने हेतु कोई भी शुभ मुहूर्त नहीं मिल रहा हो तो उस कर्म को अन्य वार में भी विहित वार की कालहोरा (क्षणवार) में कर सकते है। एक कालहोरा सूर्योदय से 01-01 घण्टे का होता है, ये कालहोरायें सूर्यादिवार की होती है तथा प्रत्येक क्षणवार गत कालहोरेश से छठा होता है।

यदि उपरोक्त वारों के अतिरिक्त अन्य दूसरों कार्यों में अति आवश्यकता हो शास्त्रों में चौघडिय़ों की व्यवस्था की है। दिन में आठ (8) तथा रात्रि से आठ (8) चौघडिय़े होते है अर्थात् एक अहोरात्र में कुल 16 चौघडिय़े होते है, जिनमें निषिद्ध वार होते हुए भी दिन अथवा रात्रि के समय में भी आप अभीष्ट कार्य सम्पन्न कर सकते है।

1.3.11. चौघडिय़ा ज्ञान विधि

दिनमान के आठ भाग करने पर आठ चौघडिय़ा मुहूर्त्त प्राप्त होते है अर्थात् प्रत्येक चौघडिय़े का मान लगभग डेढ़ घण्टा (01 घण्टा 30 मिनट) होता है। चक्र (प्रात: 06:00 बजे के मध्यमान से समय दिया है। सूर्योदय के अनुसार समय में परिवर्तन हो सकता है।)

दिन में चतुर्घटिका मुहूर्त्त							
सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरू	शुक्र	शनि	वार
उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	06-7:30
चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	07:30-09
लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	09-10:30
अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग	10:30-12
काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	12-1:30
शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	1:30-03
रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	03-4:30
उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	4:30-06

रात्रि में चतुर्घटिका मुहूर्त्त							
सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरू	शुक्र	शनि	वार
शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	06-7:30
अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग	07:30-09
चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	09-10:30
रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	10:30-12
काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	12-1:30
लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	1:30-03
उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	03-4:30
शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	4:30-06

1.3.12. अभिजित मुहूर्त्त

नौमी तिथि मधुमास पुनीता। सुकलपक्ष अभिजित हरिप्रीता।।

मध्यदिवस अतिसीत न धामा। पावकाल लोक विश्रामा।।

जो भगवान को अतिप्रिय है, जिसमें काल भी संसार के उपकार के लिए कुछ क्षण विश्राम करता है, इसी अभिजित मुहूर्त्त , नवमी तिथि, चैत्रमास में मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम का आविर्भाव हुआ था। यदि कोई भी शुभमुहूर्त्त नहीं बनता हो तो सभी जातकादि कर्म अभिजित मुहूर्त्त में किये जा सकते है।

दिनमान के मध्यभाग में 48 मिनट का अभिजित मुहूर्त्त होता है जो कि सभी माङ्गलिक कार्यों में प्रशंसनीय है, किन्तु बुधवार के दिन अभिजित का निषेध है।

अभिजित का मान :-

उत्तराषाढ़ा नक्षत्र का चतुर्थ चरण +श्रवण नक्षत्र का आदिम चरण = अभिजित

उत्तराषाढ़ा नक्षत्र की 15 घटी +श्रवण नक्षत्र की 04 घटी = अभिजित

चन्द्रमा के राशि-अंश-कला-विकला क अनुसार अभिजित का मान :-

मकर राशि के अन्तर्गत :- 09-06-40-00 से 09-10-53-20

1.3.14. प्रदोषकाल

चतुर्थी का प्रथमप्रहर (3 घण्टे), सप्तमी का प्रथम डेढ़ प्रहर (4 घण्टा 30 मिनट), तथा त्रयोदशी के अग्रिम प्रहरद्वय (6 घण्टा) का समय 'प्रदोषकाल कहलाता है।

मतान्तर से षष्ठी या द्वादशी आधी रात्रि के बाद एकघटी पूर्वतक हो अथवा 09 घटी रात्रि तक तृतीया हो तो यह 'प्रदोष अध्ययन में वर्जित है तथा रात्रि में तीन प्रहर से पहिले सप्तमी या त्रयोदशी वर्तमान में हो तो वह 'प्रदोष भी अनध्याय होता है।

सदैव सूर्यास्त के पश्चात् तीन मुहूर्त्त (03 घण्टा 24 मिनट) प्रदोष का मान होता है।

1.3.15. घातवार :- अधोलिखित राशि वालों के निम्न वार अशुभ है। इन वारों में यथासम्भव यात्रा का त्याग करे -

वार	राशि
रविवार	मेष
सोमवार	मिथुन
मङ्गलवार	मकर
बुधवार	कर्क
गुरुवार	तुला, कुम्भ
शुक्रवार	वृश्चिक, धनु, मीन
शनिवार	सिंह, वृष

1.3.16. दिशाशूल :- अधोलिखित वारों में निम्नलिखित दिशाओं का यथासम्भव यात्रा का त्याग करे -

दिशा	निषिद्धवार
पूर्व	सोमवार, शनिवार
दक्षिण	गुरुवार
पश्चिम	रविवार, शुक्रवार
उत्तर	मङ्गवार, बुधवार

1.3.17. वार में अशुभफलनाशक पदार्थ

जिस वार में यात्रा करनी हो, यदि वह तिथि अशुभ हो तो चक्राङ्कित पदार्थों का भक्षण करके अथवा इन वस्तुओं का दानादि करके यात्रादि कार्य करने पर सफलता प्राप्त होती है तथा वारदोष नष्ट हो जाता है।

वार पदार्थ

रविवार	शुद्ध घी अथवा शिखरन
सोमवार	दूध या खीर
मङ्गलवार	गुड़ अथवा काञ्जीबड़ा
बुधवार	तिल अथवा पका हुआ दूध
गुरुवार	दही
शुक्रवार	शुद्ध घी अथवा कच्च दूध
शनिवार	उड़द अथवा तैल से बनी वस्तु अथवा तिल

1.3.18. वार के अनुसार जन्म लेने वाले जातकों का फल

जन्मवार	**फल**
रविवार	पित्तप्रकृति, कार्यक्षेत्र में निपुणता, झगडालू, दानी, उत्साही, उग्र स्वभाव।
सोमवार	बुद्धिमान, प्रिय कथावाचक, राजकृपा पाने वाला, सुख-दुःख को बराबर मानने वाला।
मङ्गलवार	दीर्घायु, वीर, महाबली, अपने परिवार में प्रधान तथा कुबुद्धि वाला होता है।
बुधवार	विद्वान पण्डित, मधुरभाषी, सम्पत्ति से युक्त, सुन्दर आकृति लेखन कार्य से जीविका निर्वाह करने वाला तथा धनी होता है।
गुरुवार	प्रशंसनीय कार्यकर्ता, विवेकी, विद्वान, ग्रन्थकर्ता, राजा का मन्त्री, साधारण लोगों से पूजित होता है।
शुक्रवार	बुद्धिमान, मनोहर रूप वाला, चञ्चल, देवता से द्वेष करने वाला, वाचाल होता है।
शनिवार	दृढ़वाणी, पापी, दुःखित, पराक्रमशील, दृढ़प्रतिज्ञ, अधिक केशवाला, अधिक उम्र की स्त्रियों में रत रहने वाला, नीची दृष्टि वाला होता है।

वार के अनुसार करणीय कर्म

रविवार :- राज्याभिषेक, गाना बजाना, नयी सवारी पर चढना, राज्यसेवा, गाय-बैलों का क्रय-विक्रय, हवन-यज्ञादि, मन्त्रोपदेश, क्रय-विक्रय, औषधि, शस्त्रव्यवहार तथा युद्ध।

सोमवार :- पेड़-पौधे, पुष्प व उपवन लगाना, बीजारोपण, स्त्रीविहार, गायन, यज्ञादिकार्य, नये वस्त्र धारण करना।

मङ्गलवार :- फूट डालना, झूठ बोलना, चोरी, विष, अग्नि, शस्त्र-प्रयोग, संग्राम, वध, कपट, घमण्ड, सैन्यकर्म तथा विराम।

बुधवार :- चतुरता पूर्ण पुण्यकर्म, लिखना-पढना, कलाकौशल, शिल्प-चित्र बनाना, धातु-क्रिया, नौकरी, प्रवेश, युक्ति, मैत्री, सन्धि, व्यायाम और वाद-विवाद।

गुरुवार :- धार्मिक कृत्य, नवग्रहों की पूजा, यज्ञ, विद्याभ्यास, माङ्गलिक कृत्य, वस्त्र-व्यवहार, गृहकार्य, यात्रारम्भ, रथ, घोड़ा, औषधि एवं आभूषण सम्बन्धी सभी शुभ कार्य।

शुक्रवार :- स्त्री, गायन, शय्या, मणि, रत्न, हीरा, सुगन्धि, वस्त्र, अलंकार, जमीन-जायदाद, व्यापार, गाय, द्रव्य, भण्डार व खेतीबाड़ी के कार्य।

शनिवार :- पाप, मिथ्याभाषण, चोरी, विष, अर्क निकालना, शस्त्र, नौकर-चाकर सम्बन्धी कार्य, हाथी बाँधना, मन्त्र की दीक्षा, गृह-प्रवेश तथा सभी स्थिरकार्य।

दिन में जातक का जन्म होने पर फल :-

जिसका जन्म दिन में होता वह धर्माचरण से युक्त, अधिक पुत्र वाला, भोगी, सुवस्त्रों को धारणकर्ता, बुद्धिमान व सुन्दर आकृति वाला होता है।

रात्रि में जातक का जन्म होने पर फल :-

रात्रि में जन्म लेने वाला जातक कम बोलने वाला, मलिन ह्रदय, पापात्मा, छिप कर पाप करने वाला, अधिक कामचेष्टा वाला होता है।

1.3.19. पंचकों में क्या करें और क्या नहीं ? (पंचक नक्षत्र - धनिष्ठा, शतभिषा, पू.भा., उ.भा., रेवती) :-

कुम्भ व मीन राशि में चन्द्रमा के रहते हुए धनिष्ठा के उत्तरार्ध, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद और रेवती ये पांच नक्षत्र पंचकों के माने गये है। पंचकों में मुख्य रूप से शवदाह, चारपाई बुनना, पलंग शय्या, चटाई, कुर्सी तखत, व्यवसाय गददी तैय्यार कराना, मकान की छत डालना, लैन्टर सैट करना, खम्भों को सैट करना, काष्ठ/ईंधन/लोहे के सरिये संग्रह करना तथा दक्षिण दिशा की यात्रा, दक्षिणाभिमुख नये भवन की सीडिय़ों पर चढना आदि 'श्रीपति' के अनुसार वर्जित माना गया है।

पंचक के पांच नक्षत्रों में किए गये कृत्यों का फल पांच गुणा होता है। इसी तरह त्रिपुष्कर योग त्रिगुणित और द्विपुष्कर योग दुगुणित फल देते है । पंचकों में पांच गुणा, त्रिपुष्कर योग में तिगुना और द्विपुष्कर योग

में दोगुना हानि लाभ हुआ करता है। मृत्यु, व्याधि अन्यान्य व्यथा रोगोपद्रव होने पर शांति विधान की आवश्यकता पड़ती है। पंचक नक्षत्रों (धनि, शत, पूभा, उभा, रेवती) का विशेष विचार उपरोक्त वर्णित कृत्यों में ही किया जाता है। शुभ कर्म विवाह मुण्डन, यज्ञोपवीत, गृहारंभ, गृहप्रवेश, वाणिज्यकर्म, वाहनादि के लेन-देन,फर्म संचालन, मूर्तिप्रतिष्ठा आदि सभी श्रेष्ठ मुहूर्तो में तो पंचक के पांचो नक्षत्र शुभ कहे गए है। सभी पर्वोत्सव, व्रत, रक्षाबन्धन, भैय्यादूज, महालक्ष्मी पूजनादि में पंचको का विचार नहीं किया जाता है। 'वृहदज्योतिषसार' ग्रन्थ में तो धनि, उभा, रेवती नक्षत्र सभी कार्यो में सिद्धिप्रद माने गये है। पूभा एवं शतभिषा नक्षत्र को साधारण रूप से सिद्धिनायक कहा गया है।

1.3.20. अग्निवास

जिस दिन हवन करना हो उस दिन तिथि और वार की संख्या जोड़कर एक ओर जोडना, पुन: 4 का भाग देना, यदि पूरा भाग लग जाए, 0 शेष रहे अथवा 3 शेष रहे तब अग्नि का वास पृथ्वी पर सुखकारक होता हैं। शेष 1 बचने पर आकाश में प्राणघातक, शेष 2 में पाताल में धननाशकारक होता हैं। तिथि की गणना शुक्ल प्रतिपदा से तथा वार की रविवार से करनी चाहिए।

1.3.21. नक्षत्र :- सम्पूर्ण आकाशमण्ड़ल को 12 राशियों के अतिरिक्त 27 नक्षत्रों में विभाजित किया गया है।

नक्षत्र	**आकृति**	**तारा**	**स्वामी**
1. अश्विनी	अश्वमुख	3	अश्विनी कुमार
2. भरणी	योनि	3	यम
3. कृतिका	नापितक्षुर	6	अग्नि
4. रोहिणी	शकट	5	ब्रह्मा
5. मृगशिरा	हिरणमुख	3	चन्द्र
6. आद्र्रा	मणि	2	शिव
7. पुनर्वसु	गृह	4	अदिति
8. पुष्य	बाण	3	बृहस्पति
9. अश्लेषा	चक्राकार	5	सर्प
10. मघा	भवन	5	पितर
11. पूर्वाफाल्गुनी	चारपाई	2	भग
12. उत्तराफाल्गुनी	शय्या	2	अर्यमा
13. हस्त	हाथ	5	रवि

14. चित्रा	मोती	1	विश्वेदेव
15. स्वाती	मूंगा	1	वायु
16. विशाखा	तोरण	4	इन्द्राग्नि
17. अनुराधा	बलिर्भक्तपुञ्ज	4	मित्र
18. ज्येष्ठा	कुण्ड़ल	3	इन्द्र
19. मूल सिंहपुच्छ		11	राक्षस
20. पूर्वाषाढ़ा	हाथीदाँत	2	जल
21. उत्तराषाढ़ा	सिंहासन	2	विश्वेदेव
**अभिजित	त्रिभुज	3	ब्रह्मा
22. श्रवण	वामन	3	विष्णु
23. धनिष्ठा	मृदङ्ग	4	वसु
24. शतभिषा	वृत्त	100	वरुण
25. पूर्वाभाद्रपद	मञ्च	2	अजपाद
26. उत्तराभाद्रपद	युगल-पुरुष	2	अहिर्बुध्न्य
27. रेवती	मृदङ्ग	32	पूषा

1.3.22. नक्षत्रों की सज्ञा एवं उनमें करणीय कर्म

संज्ञा	नक्षत्र	करणीय कर्म
ध्रुव-स्थिर	रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद	बीजरोपण, उद्यान लगाना, नगरप्रवेश, ग्रामवास, विनायकशान्ति, गायनविद्या का प्रथम अभ्यास, नूतन वस्त्रधारण, कामक्रीड़ा, आभूषण-निर्माण-धारण तथा मैत्री आदि सभी स्थिर कार्य इसमें श्रेष्ठ है।
चर-चल	पुनर्वसु, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा	हाथी-घोड़ा-ऊँट-मोटर-गाड़ी आदि की सवारी,वाटिका लगाना या प्रथम प्रवेश, व्यापार प्रारम्भ, मैथुन क्रिया, स्वर्ण-चाँदी-मणि-रत्नादि युक्त आभूषण निर्माण तथा विद्या को सीखने का प्रारम्भ आदि कर्म।

उग्र-क्रूर भरणी, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, शत्रुताडन, अग्नि का यत्र-तत्र प्रज्वलन, शठता करना,

पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद विष सेवन करना/कराना, यन्त्र-मन्त्र के माध्यम से

किसी पर घात करना जैसे क्रूर कार्य तथा पशुओं कावशीकरण इस नक्षत्र में करणीय कर्म है।

मिश्र-साधारण कृतिका व विशाखा अग्निकार्य, वृषोत्सर्ग, अग्निहोत्र प्रारम्भ, वस्तु का सम्मिश्रण, बन्दी बनाना, विष-प्रयोग आदि हेय वभयंकर कर्म।

क्षिप्र-लघु अश्विनी, पुष्य, हस्त, वस्तुओं का विक्रय, रतिक्रया, शास्त्रों का अभिजित अध्ययन, आभूषण धारण करना, सहित्य-सङ्गीत-कला विषयक कर्म व औषधि का आदान-

प्रदान।

मृदु-मैत्र मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, गीत-वाद्य सम्बन्धी कर्म, नवीन परिधान-

धारण, रेवती रतिक्रिया,मित्रता करना तथा अलङ्कार निर्माण

तीक्ष्ण-दारुण आर्द्रा, आश्लेषा, ज्येष्ठा, अभिचार कर्म (मारण, उच्चाटन,

मूल विद्वेषण आदि), कलहोत्पादन, हाथी-

घोड़ों का प्रशिक्षण, बीजवपन,

उद्यानारम्भ, शान्तिक-पौष्टिक कर्म, गृह-ग्राम प्रवेश,संगीतविद्या का प्रारम्भ, आमोद-प्रमोद तथा नवीन वस्त्र-आभूषण का धारण।

जन्मनक्षत्र विचार

1. अन्नप्राशन, उपनयन, चूड़ाकरण, राज्याभिषेक आदि में जन्मनक्षत्र प्रशस्त होता है।
2. यात्रा, सीमन्तोन्नयन तथा विवाह में जन्मनक्षत्र अनिष्ट होता है।
3. मुहूर्त्तदीपिका के अनुसार चूड़ाकरण, औषधि सेवन, विवाद, यात्रा व कर्णवेध में ही जन्म-नक्षत्र का निषेध है।
4. जन्म नक्षत्र से 25वाँ तथा 27वाँ नक्षत्र शुभकर्मों में त्याज्य है।

1.3.23. पञ्चाङ्ग में योगविचार

योग को दो श्रेणियों में विभाति किया गया है। "नैसर्गिक'' व "तात्कालिक''। नैसर्गिक योगों का सदैव एक ही क्रम रहता है तथा यह एक के बाद एक आते है। विष्कुम्भादि 27 योग नैसर्गिक श्रेणी में आते है, परन्तु तात्कालिक योग तिथि-वार-नक्षत्र आदि के विशेष संगम से बनते है। आनन्द प्रभृति एवं क्रकच, उत्पात, सिद्धि तथा मृत्यु आदि योग तात्कालिक है।

योग	स्वामी	फल
1. विष्कुम्भ	यम	अशुभ
2. प्रीति	विष्णु	शुभ
3. आयुष्मान	चन्द्र	शुभ
4. सौभाग्य	ब्रह्म	शुभ
5. शोभन	बृहस्पति	शुभ
6. अतिगण्ड़	चन्द्र	अशुभ
7. सुकर्मा	इन्द्र	शुभ
8. धृति	जल	शुभ
9. शूल	सर्प	अशुभ
10. गण्ड	अग्नि	अशुभ
11. वृद्धि	सूर्य	शुभ
12. धुर्व	भूमि	शुभ
13. व्याघात	वायु	अशुभ
14. हर्षण	भग	शुभ
15. वज्र	वरुण	अशुभ
16. सिद्धि	गणेश	शुभ
17. व्यतिपात	रुद्र	अशुभ
18. वरियान	कुबेर	शुभ
19. परिघ	विश्वकर्मा	अशुभ
20. शिव	मित्र	शुभ
21. सिद्ध	कार्तिकेय	शुभ
22. साध्य	सावित्री	शुभ

23. शुभ	लक्ष्मी	शुभ
24. शुक्ल	पार्वती	शुभ
25. ब्रह्म	अश्विनी कुमार	शुभ
26. ऐन्द्र	पितर	अशुभ
27. वैधृति	दिति	अशुभ

1.3.24. व्यतिपात

यह उपद्रवी योग है। यह योग नैसर्गिक व तात्कालिक दोनों श्रेणियों में आता है। अमावस्या को रविवार या श्रवण, धनिष्ठा, आर्द्रा, अश्लेषा अथवा मृगशिरा नक्षत्र के योग से "व्यतिपातयोग''बनता है

1.3.25. वैधृति

यह भी व्यतिपात के समकक्ष ही है। इसे भी शुभकर्मो में त्याज्य बताया है।

शेष अशुभ योगों में परिघ का पूर्वार्द्ध, विष्कुम्भ व वज्र की आदिम 03 घटी, व्याघात की प्रारम्भिक 09 घटी, शूल की प्रथम 05 घटी तथा गण्ड-अतिगण्ड की आदिम 6-6 घटियाँ विशेषत: त्याज्य है।

1.3.26. आनन्दादि 28 योग

वार व नक्षत्र के योग से तात्कालिक आनन्दादि 28 योगों का आनयन होता है। इन योगों को ज्ञात करने के लिए वार विशेष को निर्दिष्ट नक्षत्र से विद्यमान नक्षत्र तक साभिजित गणना की जाती है। रविवार को अश्विनी से सोमवार को भरणी से, मङ्गवार को अश्लेषा से, बुधवार को हस्त से, गुरु को अनुराधा से, शुक्रवार को उत्तराषाढ़ा से तथा शनिवार को शतभिषा से तद्दिन के चन्द्रक्ष तक गिनने पर आप्त संख्या को ही उस दिन वर्तमान आनन्दादि योग का क्रमांक प्राप्त होता है।

चक्र

योग	रवि	सोम	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	फल
आनन्द	अश्विनी	मृगशिरा	अश्लेषा	हस्त	अनुराधा	उ.षा.	शतभिषा	अर्थसिद्धि
कालदण्ड	भरणी	आद्र्रा	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अभि.	पू.भा	मृत्युभय
धूम्र	कृत्ति.	पुन.	पू.फा.	स्वाती	मूल	श्रवण	उ.भा.	दु:ख
प्रजापति (धाता)	रोहिणी	पुष्य	उ.फा.	विशाखा	पू.षा.	धनिष्ठा	रेवती	सौभाग्य
सुधाकर (सौम्य)	मृगशिरा	अश्लेषा	हस्त	अनुराधा	उ.षा.	शत.	अश्विनी	बहुमुखी
ध्वाङ्क्ष	आद्र्रा	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अभि.	पू.भा.	भरणी	अर्थनाश

ध्वजा (केतु)	पुनर्वसु	पू.फा.	स्वाती	मूल	श्रवण	उ.भा.	कृतिका	सौभाग्य
श्रीवत्स	पुष्य	उ.फा.	विशाखा	पू.षा.	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	ऐश्वर्य
वज्र	अश्लेषा	हस्त	अनुराधा	उ.षा.	शतभिषा	अश्विनी	मृगशिरा	धनक्षय
मुदगर	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अभि.	पू.भा.	भरणी	आद्रा	धननाश
छत्र	पू.फा.	स्वाती	मूल	श्रवण	उ.भा.	कृतिका	पुनर्वसु	राजसम्मान
मित्र	उ.फा.	विशाखा	पू.षा.	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य	सौख्य
मानस	हस्त	अनुराधा	उ.षा.	शत.	अश्विनी	मृग.	अश£ेषा	सौभाग्य
पद्म	चित्रा	ज्येष्ठा	अभि.	पू.भा.	भरणी	आद्र्रा	मघा	धनागम
लुम्बक	स्वाती	मूल	श्रवण	उ.भा.	कृतिका	पुनर्वसु	पू.फा.	लक्ष्मीनाश
उत्पात	विशाखा	पू.षा.	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उ.फा.	प्राणनाश
मृत्यु	अनुराधा	उ.षा.	शतभिषा	अश्विनी	मृगशिरा	अश£ेषा	हस्त	मरणभय
काण	ज्येष्ठा	अभि.	पू.भा.	भरणी	आद्र्रा	मघा	चित्रा	क्लेशवृद्धि
सिद्धि	मूल	श्रवण	उ.भा.	कृतिका	पुनर्वसु	पू.फा.	स्वाती	अभीष्टसिद्धि
शुभ	पू.षा.	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उ.फा.	विशाखा	कल्याण
अमृत	उ.षा.	शतभिषा	अश्विनी	मृगशिरा	अश्लेषा	हस्त	अनुराधा	राजसम्मान
मुसल	अभि.	पू.भा.	भरणी	आद्र्रा	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अर्थक्षय
अन्तक (गद)	श्रवण	उ.भा.	कृतिका	पुनर्वसु	पू.फा.	स्वाती	मूल	रोग/बुद्धिनाश
कुञ्जर (मातङ्ग)	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उ.फा.	विशाखा	पू.षा.	कुलवृद्धि
राक्षस	शतभिषा	अश्विनी	मृगशिरा	अश्लेषा	हस्त	अनुराधा	उ.षा.	बहुपीड़ा
चर	पू.भा.	भरणी	आद्र्रा	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अभिजित	कार्यलाभ
सुस्थिर	उ.भा.	कृतिका	पुनर्वसु	पू.फा.	स्वाती	मूल	श्रवण	गृह प्राप्ति
(प्र) वर्धमान	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उ.फा.	विशाखा	पू.षा.	धनिष्ठा	सुमङ्गल

दोष परिहार :- पूर्वोक्त योगों में साधारण श्रेणी के योगों की प्रारम्भिक घटियों का त्याग कर देने के पश्चात् उनकी अशुभता की दोषापत्ति नहीं रहती है, परन्तु कालदण्ड, उत्पात, मृत्यु व राक्षस योग तो समग्र रूप से त्याज्य है। अन्य योगों की त्याज्य घटियाँ चक्र में प्रदिष्ट की गयी है।

योग	धूम्र	ध्वांक्ष	वज्र	मुदगर	पद्म	लुम्ब	काण	मुसल	अन्तक

घटियाँ	1	5	5	5	4	4	2	2	7

नोट :- कुयोग के समय यदि कोई अन्य सिद्धि आदि सुयोग भी वर्तमान हो तो सुयोग का ही फल मिलता है, कुयोग का नहीं। यथा -

अयोग: सिद्धियोगश्च द्वावेतौ भवतो यदि।

अयोगो हन्यते तत्र सिद्धियोग: प्रवत्र्तते।। - राजमात्र्तण्ड

1.3.27. क्रकचादि तात्कालिक योग

तिथि-वार तथा नक्षत्र के विशिष्ट संगम से आविर्भूत योगों का मुहूर्तशोधन में महत्त्वपूर्ण स्थान है। अत: ऐसे ही कुछ प्रचलित योगों का विवरण चक्रों में उल्लिखित है :-

तिथिवार जनित योग

योग	रवि	सोम	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
क्रकच	12	11	10	9	8	7	6
संवर्त	7	x	x	1	x	x	x
दग्ध	12	11	5	3	6	8	9
विष	4	6	7	2	8	9	7
अग्निजिह्वा	12	6	7	8	9	10	11
मृत्यु	1, 6, 11	2, 7, 12	1,6, 11	3, 8, 13	4, 9, 14	2, 7, 12	5, 10, 15/30
सिद्धि	x	x	3, 8, 12	2, 7, 12	5, 10, 15, 30	1, 6, 11	4, 9, 14
कुलिक	7	6	5	4	3	2	1
अमृत	5, 10, 15, 20	5, 10, 15, 20	2, 7, 12	1, 6, 11	3, 8, 13	4, 9, 14	1, 6, 11
रत्नांकुर	3, 8, 13	1, 6	4, 9, 14	4, 10, 15/30	2, 7, 12	5, 10, 15/30	3, 8, 13

तिथिवार जनित योग

योग	रवि	सोम	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
यमघण्ट	मघा	विशाखा	आद्र्रा	मूल	कृतिका	रोहिणी	हस्त
दग्ध	भरणी	चित्रा	उ.षा.	धनिष्ठा	उ.फा.	ज्येष्ठा	रेवती
अमृत	हस्त	मृगशिरा	अश्विनी	अनुराधा	पुष्य	रेवती	रोहिणी
उत्पात	विशाखा	पू.षा.	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उ.फा.

सर्वार्थसिद्धि	अश्विनी	रोहिणी	अश्विनी	कृतिका	अश्विनी	अश्विनी	रोहिणी
	पुष्य	मृगशिरा	कृतिका	रोहिणी	पुनर्वसु	पुनर्वसु	स्वाती
	उत्तरात्रय	पुष्य	अश्लेषा	मृगशिरा	पुष्य	अनुराधा	श्रवण
	हस्त, मूल	अनुराधा	उ.फा.	हस्त	अनुराधा	श्रवण	
		श्रवण		अनुराधा	रेवती	रेवती	
अमृत	रोहिणी	अश्विनी	कृतिका	कृतिका	पुनर्वसु	अश्विनी	रोहिणी
	उत्तरात्रय	रोहिणी	पुष्य	रोहिणी	पुष्य	पू.फा.	स्वाती
	पुष्य, हस्त	मृगशिरा	अश्लेषा	अनुराधा	स्वाती	उ.फा.	
	मूल, रेवती	पू.फा.	स्वाती	शतभिषा	अनुराधा	अनुराधा	
		उ.फा.	उ.भा.			श्रवण	
		हस्त	रेवती			उ.भा.	
		श्रवण				पू.भा.	
		धनिष्ठा					
		पू.भा.					
		उ.भा.					
प्रशस्त	रेवती	हस्त	पुष्य	रोहिणी	स्वाती	उ.फा.	मूल

1.3.28. क्रकचादि योग-प्रयोजन

क्रकच, संवर्त, दग्ध, विष, अग्निजिह्वा, मृत्यु, कुलिक, उत्पात और यमघण्टकादि तिथि, वार, नक्षत्र से उदगत समस्त योग, मङ्गल कर्मो में अशुभ होने के कारण वर्जित है। परञ्च, सिद्धि, अमृत-सिद्धि, सर्वार्थसिद्धि, अमृत रत्नांकुर एवं प्रशस्तादि योग अपने नाम के अनुसार (यथानाम तथा गुणा:) ही फलदायी होते है।

करण :-

तिथि का आधा भाग करण कहलाता है। कृष्णपक्ष में तिथि संख्या को सात से विभाजित करने पर प्राप्त अवशिष्ट संख्यक करण तिथि के पूर्वार्द्ध में तथा शुक्लपक्ष में द्विगुणित तिथि संख्या में 02 घटा कर सात का भाग देने पर शेषाङ्क क्रमसंख्या वाला करण उस तिथि के पूर्वार्द्ध में स्थित होता है, उससे अग्रिम क्रम प्राप्त करण तिथि के उत्तरार्ध में होता है। बवादि 11 करणों का क्रम उनके स्वामी तथा विभिन्न तिथियों में उनके अस्तित्व का निम्न चक्र में प्रदर्शन किया जाता है।

करण	**स्वामी**	**शुक्लपक्षतिथि**	**कृष्णपक्ष तिथि**
चर करण :			
बव	इन्द्र	5, 12 पूर्वार्द्ध, 1, 8, 15 उत्तरार्ध	4, 11 पूर्वार्द्ध
बालव	ब्रह्मा	2, 9 पूर्वार्द्ध, 5, 12 उत्तरार्ध	1, 8 पूर्वार्द्ध, 4, 11 उत्तरार्ध
कौलव	मित्र	6, 13 पूर्वार्द्ध, 2, 9 उत्तरार्ध	5, 12 पूर्वार्द्ध, 1, 7, 8 उत्तरार्ध

तैतिल	विश्वकर्मा	3, 10 पूर्वार्द्ध, 6, 13 उत्तरार्ध	2, 9 पूर्वार्द्ध, 5, 12 उत्तरार्ध
गर	भूमि	7, 14 पूर्वार्द्ध, 3, 10 उत्तरार्ध	6, 13 पूर्वार्द्ध, 2, 9 उत्तरार्ध
वणिज	लक्ष्मी	4, 11 पूर्वार्द्ध, 7, 14, उत्तरार्ध	3, 10 पूर्वार्द्ध, 6, 13 उत्तरार्ध
विष्टि	यम	8, 15 पूर्वार्द्ध, 4, 11 उत्तरार्ध	7, 14 पूर्वार्द्ध, 3, 10 उत्तरार्ध
स्थिर करण :			
शकुनि	कलि	x	14 उत्तरार्ध
चतुष्पद	रुद्र	x	30 पूर्वार्द्ध
नाग	सर्प	x	30 उत्तरार्ध
किंस्तुघ्न	मरुत	1 पूर्वार्द्ध	x

1.3.28.1. करण का शुभ व अशुभ विवेचन

बवादि प्रथम सप्त "चरसंज्ञक’‘तथा शकुन्यादि चतुष्टय "स्थिरसंज्ञक’‘होते है। बवादि छ: करणों में माङ्गलिक कर्म शुभ, भद्रा सर्वथा त्याज्य तथा अन्तिम चार करणों में पितृकर्म प्रशस्त है।

करण	**करणीय कर्म**
बव	बलवीर्यवर्द्धक पौष्टिक कर्म
बालव	अध्ययन, अध्यापन, यज्ञ, दान
कौलव	स्त्रीकर्म एवं मैत्रीकरण
तैतिल	सौभाग्यवती स्त्री के प्रियकर्म
गर	बीजारोपण व हल-प्रवहण
वणिज	व्यापारकर्म
विष्टि	अग्नि लगाना, विष देना, युद्धारम्भ, दण्ड देना तथा समस्त दुष्टकर्म
शकुनि	औषधि निर्माण व सेवन, मन्त्र साधन तथा पौष्टिक कर्म
चतुष्पद	राज्यकर्म व गौ-ब्राह्मण विषयक कर्म
किंतुघ्न	मङ्गलजनक कर्म
नाग	मांगलिक कर्म वर्जित

1.3.29. भद्राविचार

देव-दानवों के समरकालिक अवसर पर महादेव की रौद्ररस सम्पन्न आँखों ने उनके शरीर पर दृष्टिपात किया। तत्काल उनकी देह से गर्दभ - मुख, तीन चरण, सप्तभुजा, कृष्णवर्ण, सुविकसित दाँत, प्रेतवाहनवाली तथा मुख से अग्नि उगलती हुई देवी का प्रादुर्भाव हुआ। प्रस्तुत देवी ने राक्षसों का शमन करते हुए देवताओं का संकटशमन किया। अत: देवों ने प्रसन्न होकर देवी को विष्टि-भद्रादि संज्ञाओं से विभूषित करके करणों में स्थापित किया।

तिथियों के पूर्वार्द्ध और परार्द्ध के अनुरूप ही भद्रा की विद्यमानता जाननी चाहिए। उत्तरार्ध की भद्रा दिन में तथा पूर्वार्द्ध की भद्रा रात्रि में शुभ होती है।

पक्ष		**कृष्ण**				**शुक्ल**			
तिथि	3	7	10	14	4		8	11	15
पूर्वार्द्ध	x	भद्रा	x	भद्रा	x		भद्रा	x	भद्रा
उत्तरार्ध	भद्रा	x	भद्रा	x	भद्रा	x	भद्रा	x	

चन्द्रमा की राशि-संचरण के अनुसार भद्रा का वास होता है :-

लोकवास	**मृत्यु**	**स्वर्ग**	**पाताल**
चन्द्रराशि	4, 5, 11, 12	1, 2, 3, 8	6, 7, 9, 10
भद्रामुख	सम्मुख	ऊर्ध्वमुख	अधोमुख

भद्रा में यात्रा निषिद्ध है, परन्तु आवश्यक होने पर जिस दिशा में भद्रा का वास, वही दिशा प्रयाणार्थ विशेषत: त्याज्य है :-

तिथि	दिग्वास	तिथि	दिग्वास
3	ईशान	4	पश्चिम
7	दक्षिण	8	आग्नेय
10	वायव्य	11	उत्तर
14	पूर्व	15	नैर्ऋत्य

1.3.29.1. भद्रा मुख-मुख :- निम्नलिखित चक्र में विभिन्न प्रहरों की निर्दिष्ट घटियों में भद्रा के मुख और पुच्छ का संकेत किया गया है। शुक्लपक्ष की भद्रा में आदिम और कृष्णपक्ष क अन्तिम घटियाँ ही इस विषय में ज्ञातव्य है।

पक्ष	कृष्ण	शुक्ल	कृष्ण	शुक्ल	कृष्ण	शुक्ल	कृष्ण	शुक्ल
तिथि	3	4	7	8	10	11	14	15
प्रहर	8	5	3	2	6	7	1	4

मुखघटी	5	5	5	5	5	5	5	5
प्रहर	7	8	2	1	5	6	4	3
पुच्छघटी	3	3	3	3	3	3	3	3

भद्रामुख व पुच्छ दोनों ही शुभकार्यों में त्याज्य है तथापि आवश्यक होने पर शुक्लपक्ष में "भद्रापुच्छ''और कृष्णपक्ष में "भद्रामुख''मङ्गलकार्यों में ग्राह्य है। प्रहर-गणना तिथि के प्रारम्भ से ही, सूर्योदय से नहीं।

1.3.29.2. भद्रा अङ्गविभाग

एक तिथि का अर्धभाग 30 घटी परिमित होती है। अत: भद्रा के विभिन्न अङ्गों में यथा-प्रदिष्ट घटियों का न्यास और तज्जनित फल निम्न है :-

घटी	5	1	11	4	6	3
भद्राङ्ग	मुख	गर्दन	वक्षस्थल	नाभि	कमर	पुच्छ
फल	कार्यनाश	मृत्यु	द्रव्यनाश	कलह	बुद्धिनाश	कार्यसिद्धि

प्रत्येक भद्रा की अन्तिम तीन घटियों में शुभकार्य किये जा सकते है। विभिन्न तिथियों में विद्यमान भद्रा को पक्ष-भेद के अनुसार संज्ञाएँ प्रदान की गयी है। कृष्णपक्ष की भद्रा को में "वृश्चिकी''तथा शुक्लपक्ष की भद्रा को "सर्पिणी''के रूप में बताया गया है। बिच्छु का डंक पुच्छ में तथा सर्प का दंश (विष) मुख में होने के कारण वृश्चिकी भद्रा की पुच्छ और सर्पिणी भद्रा का मुख विशेषत: त्याज्य है।

1.3.29.3. भद्रा में शुभाशुभ करणीय कर्म :- विष्टिकाल में किसी को बाँधना/कैद करना, विष देना, अग्नि जलाना, अस्त्र-शस्त्र का प्रयोग, कर्तन (काटना) भैंस, घोड़ा और ऊँट सम्बन्धी अखिल कर्म तथा उच्चाटनादि कर्म प्रशस्त है।

विवाहादि माङ्गलिक कृत्य, यात्रा और गृहारम्भ व गृहप्रवेश भद्रा में त्याज्य बताये गये है।

भद्रा में अपवाद :-

1. यदि दिन की भद्रा रात्रि और रात्रि की भद्रा दिन में प्रवेश कर जाये तो भद्रा निर्दोष हो जाती है। यथा - रात्रिभद्रा यदह्नि स्याद दिवा भद्रा यदा निशि। न तत्र भद्रादोष: स्यात सा भद्रा भद्रदायिनी।। - पीयूषधारा
2. मङ्गलवार, भद्रा, व्यतिपात, वैधृति तथा प्रत्यरि, जन्मतारादि मध्याह्न के उपरान्त शुभ होते है।
3. मीन संक्रान्ति में महादेव व गणेश की आराधना-अर्चना में, देवी पूजा हवनादि में तथा विष्णु-सूर्य साधना में भद्रा सर्वथा शुभदायक होती है। यथा -

   स्यात्तु भद्राय भद्रा न शंभोर्जपे मीनराशिर्न योगस्तथाप्यर्चने।

होमकाले शिवायास्तमा तद्भुव: साधने सर्वकालोऽथ मेशेनयो:।। - ज्योर्विदाभरण

1.3.30. राहुकाल का यथार्थ

अभीष्ट तारीख को स्थानीय सूर्योदय और सूर्यास्तकाल का अन्तर कर दिनमान ज्ञात कीजिए। इस दिनमान को आठ (8) से भाग देने पर यामार्ध (आधा प्रहर) ज्ञात होगा। प्रथम यामार्ध का प्रारम्भकाल सूर्योदयकाल ही है। इसमें यामार्ध के घ.मि. जोडऩे पर प्रथम यामार्ध का समाप्तिकाल (अथवा द्वितीय यामार्ध का प्रारम्भकाल) ज्ञात होगा। इसमें पुन: यामार्ध के घ.मि. जोडऩे पर द्वितीय यामार्ध का समाप्तिकाल निकल आएगा। इसी प्रकार उत्तरोत्तर बार-बार जोडऩे पर आठों यामार्धों के यथार्थ प्रारम्भ और समाप्तिकाल ज्ञात हो जाएंगे। रविवार को आठवां, सोमवार को दूसरा, मङ्गलवार को सातवां, बुधवार को पाँचवां, गुरु को छठा, शुक्र को चौथा एवं शनि को तीसरा यामार्ध राहुकाल कहलाता है। आजकल प्रयोग में लाया जाने वाला राहुकाल का प्रारम्भ-समाप्तिकाल अशास्त्रीय है।

1.3.31. शिववास का जानने का प्रकार

वर्तमान तिथि को 2 से गुणा करके 5 जोडे तत्पश्चात् 7 का भाग देवे, शेष 1 रहे तो शिववास कैलाशपर्वत पर, 2 में गौरीपाश्र्व में, 3 में वृषारूढ़, 4 से सभा में सामान्य, 5 से भोजन में, 6 से क्रीडा तथा शून्य में श्मशान में शिव का वास होता है। शिवार्चन के लिए शुभ तिथियाँ :-

शुक्लपक्ष में :- 2,5,6,7,9,12,13,14 एवं कृष्णपक्ष में :- 1,4,5,6,8,11,12,30

शिववास का फल - कैलाश में यदि शिवजी का वास हो सुखकारक होता है। गौरी के साथ शुभकारक, वृषभ पर आरूढ़ हो तो धन व वैभव से युक्त, क्रीडा में हो तो सन्तापकारक, सभा व भोजन में मध्यम फलदायी, श्मशान में मृत्युदायी होता है।

1.4. सारांश

पञ्चाङ्ग अत्यन्त विस्तृत विषय है, जिसे संक्षिप्त में कुछ पृष्ठों में सीमित करना किसी भी लेखक के लिए असम्भव है। पञ्चाङ्ग में प्रमुखतया पाँच अङ्ग होते है। यथा - तिथि, वार, नक्षत्र, योग व करण।

वर्तमान में पञ्चाङ्ग अत्यन्त विस्तृत हो चुके है। संवत्सर, राजा, मन्त्री, वर्ष का संहितात्मक विववरण, मुहूर्त्तकाल, विवाहादि मुहूर्त, गुणमिलान, राशिफल आदि अनेकानेक विषयों के साथ वर्तमान के पञ्चाङ्ग आमजन तक सम्पूर्ण वैदिक ज्ञान को अपने भीतर समाविष्ट करते हुए ज्ञानवर्धन कर रहे है। इस इकाई में यथासम्भव सभी विषयों का वर्णन करते हुए पञ्चाङ्ग का समुचित ज्ञान इस इकाई में दिया गया है।

1.5. शब्दावली

- पञ्चाङ्ग = जिसके पाँच अङ्ग हो,

- संवत्सर = भारतीय वर्ष
- अयन = सूर्य परिभ्रमण चक्र
- सौरमास = सूर्य संक्रान्ति मास
- गण्ड़ान्त = पर्व का आदि व अन्त
- काल = समय
- स्वयंसिद्ध = अबूझ
- आनयन = स्पष्ट करना

1.6. अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

1 पञ्चाङ्ग के पाँच अङ्ग कौनसे है?

उत्तर : तिथि, वार, नक्षत्र, योग व करण - इनसे मिलकर पञ्चाङ्ग का निर्माण होता है।

2 संवत्सर कितने होते है ?

उत्तर : संवत्सर 60 होते है।

3 दैवी ऋतु एवं पितर ऋतुओं के नाम लिखिए?ï

उत्तर : बसन्त, ग्रीष्म एवं वर्षा ऋतु को दैवी ऋतु एवं शरद, हेमन्त एवं शिशिर ऋतु को पितर ऋतु कहते है।

4 सौरवर्ष व चान्द्रवर्ष का मान लिखिए ?

उत्तर : सौरवर्ष : 365 दिन - 15 घटी - 31 पल - 30 विपल
चान्द्रवर्ष : 354 दिन - 22 घटी - 01 पल - 33 विपल

5 अमावस्या व पूर्णिमा के भेद बताईये?

उत्तर : प्रात: काल व्यापिनी अमावस्या को "सिनीवाली'', चतुर्दशी से विद्धा को "दर्श''तथा प्रतिपदा से युक्त अमावस्या को "कुहू''संज्ञक कहते है।
रात्रि को एक कलाहीन और दिन में पूर्णचन्द्र से सम्पन्न "अनुमति''संज्ञक पूर्णिमा चतुर्दशीयुक्त होती है, परन्तु रात्रि में पूर्ण चन्द्रमा सहित पूर्णिमा प्रतिपदा से युक्त "राका''संज्ञक होती है।

6 तिथियों की संज्ञा बताईये ?

उत्तर : नन्दा (1-6-11), भद्रा (2-7-12), जया (3-8-13), रिक्ता (4-9-14) व पूर्णा (5-10-15)।

7 तिथि गण्ड़ान्त, लग्न गण्ड़ान्त व नक्षत्र गण्ड़ान्त बताईये ?

उत्तर : पूर्णा व नन्दा तिथियों की क्रम से अन्त व आदिम दो-दो घटियों को तिथि गण्ड़ान्त कहते है। कर्क-सिंह, वृश्चिक-धनु, मीन-मेष राशियों के अन्त और आदिम की आधी-आधी घटी को

लग्नगण्ड़ान्त कहते है। रेवती-अश्विनी, अश्लेषा-मघा तथा मीन-मेष के नक्षत्रों में अन्त व आदिम की दो-दो घटियों को नक्षत्र गण्ड़ान्त कहते है।

8 नक्षत्र व दिनमान के अनुसार अभिजित का मान बताईये ?

उत्तर : उत्तराषाढ़ा नक्षत्र की 15 घटी व श्रवण नक्षत्र की 04 घटी मिलकर अभिजित संज्ञक होती है तथा दिनमान के मध्यभाग में 48 मिनट का काल अभिजित मुहूर्त कहलाता है।

9 सोमवार को करणीय कर्म बताईये ?

उत्तर : पेड़-पौधे, पुष्प व उपवन लगाना, बीजारोपण, स्त्रीविहार, गायन, यज्ञादिकार्य व नये वस्त्र धारण सोमवार को श्रेष्ठ रहता है।

10 चर करणों के नाम लिखिए ?

उत्तर : बव, बालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज, विष्टि - ये सात चर करण है।

1.7. लघुत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न - 1 : साठ सम्वत्सरों के नाम व उनके स्वामी बताईये ?

प्रश्न - 2 : तिथि का परिचय दीजिये ?

प्रश्न - 3 : नक्षत्र का परिचय दीजिये ?

प्रश्न - 4 : योग का परिचय दीजिये ?

प्रश्न - 5 : करण का परिचय दीजिये ?

1.8. सन्दर्भ ग्रन्थ

1. धर्मशास्त्र का इतिहास
लेखक - डॉ. पाण्डुरङ्ग वामन काणे
प्रकाशक :- उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान।

2. ज्योतिष सम्राट् पञ्चाङ्ग,
सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा
प्रकाशक - अ. भा. प्रा. ज्यो. शो. सं., जयपुर।

3. कालमाधव,
सम्पादक - डॉ. ब्रजकिशोर स्वाई
प्रकाशक - चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी।

4. मुहूर्त्त चिन्तामणि,
व्याख्याकार - केदारदत्त जोशी
प्रकाशक - मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

इकाई – 2

जन्म पत्रिका, सूर्योदय, वेलान्तर स्पष्टान्तर ज्ञान, इष्टकाल निर्णय

इकाई की रूपरेखा

2.0 प्रस्तावना
2.1 उद्देश्य
2.2 विषय प्रवेश
2.2.1 जन्म पत्रिका परिचय
2.2.2 तिथि
2.2.3 पंचांग को देखने की विधि
2.2.4 सूर्योदय साधन
2.2.5 वेलान्तर संस्कार
2.2.6 चरपल निकालने की विधि
2.2.7 दिनमान से सूर्योदय निकालना
2.2.8 स्थानीय सूर्यास्त
2.2.9 इष्टकाल की पहली विधि
2.2.10 परिभाषाएँ
2.2.11 इष्टकाल निकालने की दूसरी विधि
2.2.12 इष्टकाल की परिभाषा व सूत्र
2.3 सारांश
2.4 बोध प्रश्न
2.5 शब्दावली
2.6 संदर्भ ग्रंथ सूची

2.0 प्रस्तावना

ज्योतिष शास्त्र से संबंधित दूसरी इकाई है। इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि जन्म पत्रिका, सूर्यादय, वेलान्तर स्पष्टान्तर ज्ञान इष्टकाल क्या है इसके विषय में सम्यक् रूप से वर्णन किया गया है। ज्योतिष के तीन स्कन्ध हैं। सिद्धान्त, संहिता, होरा। इस इकाई के अन्तर्गत स्कन्ध आदि के अन्तर्गत आने वाले विषय जन्म पत्रिका का निर्माण किया जाता हैं। प्राचीन काल में इसे ज्योति पदार्थों के नक्षत्र, तारों, ग्रहों के स्वरूप को बताने वाला विज्ञान कहा जाता था क्योंकि जब सैद्धान्तिक गणित का

पूर्ण ज्ञान नहीं था। केवल दृष्टि से ही ग्रहो का ज्ञान किया जाता था। ईसा पूर्व 500 में ज्योतिष में गणित एवं फलित, ये दो स्कन्ध स्वतन्त्र रूप से विकसित हुये। ज्योतिष के अन्तर्गत ग्रहों की गति, स्थिति, अयनांश आदि गणित ज्योतिष के अन्तर्गत आ गए। ग्रह निरन्तर गतिशील हैं। जिस समय को बालक जन्म लेता हैं उस समय ग्रहों की कैसी स्थिति है और ग्रह कितने डिग्री पर प्रभाव डाल रहें हैं इन सबका विवेचन ''सिद्धान्त ज्योतिष'' की देन है। दृश्य गणित और सैद्धान्तिक गणित में अन्तर होने के बाद भी पंचांगों का सहारा लेते हैं। जन्म पत्रिका बनात हैं। इस इकाई में सूर्योदय, सूर्यास्त तथा दिनमान और इष्टकाल निकालने की विधियों का उल्लेख किया गया है। जन्म कुण्डली किसी भी जातक (व्यक्ति) के भूत, भविष्य एवं वर्तमान की सम्पूर्ण जानकारी कहानी होती हैं अतः शुद्ध जन्म पत्रिका बनाने के लिए निम्न जानकारी होना आवश्यक हैं।

- जातक का जन्म का वर्ष, माह एवं तारीख
- जन्म स्थान का नाम जहाँ जन्म लिया हैं। वहाँ का सूर्योदय एवं सूर्योस्त का समय और उस स्थान के अक्षांश एवं रेखांश।
- जन्म समय

उपर्युक्त जानकारी सही हैं तो शुद्ध इष्टकाल निकाला जायेगा। इस से जातक की जन्म कुण्डली सही बनेगी और उसमें भूत, भविष्य एवं वर्तमान की सही जानकारी होगी।

2.1 उद्देश्य

इस इकाई के निर्माण के निम्न उद्देश्य हैं -

- जन्मपत्रिका की विधि का ज्ञान।
- सूर्योदय, सूर्योस्त एवं इष्टकाल की विवेचना।
- भारतीय मानक समय एवं स्थानीय समय का ज्ञान।
- इष्टकाल का महत्त्व प्रतिपादित करना।
- जन्म कुण्डली निर्माण में तिथी, वार, नक्षत्र, योग एवं करण का ज्ञान कराना।

2.2 विषय प्रवेश

2.2.1 जन्म पत्रिका परिचयः- सूर्योदय, वेलान्तर, स्पष्टान्तर ज्ञान, इष्टकाल निर्णय

जन्म पत्रिका:- ज्योतिष शास्त्र के अनुसार किसी भी जातक के जन्म के समय के आकाशीय ग्रहों की स्थिति के अनुसार जन्मपत्रिका का निर्माण करते हैं, जन्मपत्रिका बनाने वाले व्यक्ति अथवा ज्योतिष

को पंचांग अथवा जंत्री का पूर्ण ज्ञान होना अत्यावश्यक है क्योंकि पंचांग पूरे एक वर्ष का कालदर्शक होता है, जिसमें वर्ष में होने वाली आकाशीय ग्रहों की स्थिति उनकी गति आदि की पूरी जानकारी होती है।

पंचांग के पाँच अंग होते हैं- तिथि, वार, नक्षत्र, योग और करण।

2.2.2 तिथि (रविचन्द्रयोर्गत्यन्तरं तिथि:):-

ज्योतिष की भाषा में तिथि चन्द्रमा की सूर्य से अंशात्मक दूरी को एक तिथि कहा गया है, प्रतिदिन लगभग 12 अंश का अन्तर, सूर्य और चन्द्रमा के भ्रमण के समय में होता हैं। दूसरे शब्दों में चन्द्रमा और सूर्य पृथ्वी से कभी एक ही अंश (0° अंश) पर और 180° अंश पर दिखाई देता हैं। इस प्रकार इस दूरी मापन को ही तिथि कहा गया हैं।

किसी अन्य परिभाषा से चन्द्रमा की एक कला को तिथि कहा गया है। तिथियॉं तीस होती हैं (प्रतिपदा से पूर्णिमा और प्रतिपदा से अमावस्या तक)

तिथियों के स्वामी:-

प्रतिपदा	आग्नि
द्वितीया	ब्रह्मा
तृतीया	गौरी
चतुर्थ	गणेश
पंचमी	शेषनाग
षष्ठी	कार्तिकेय
सप्तमी	सूर्य
अष्टमी	शिव
नवमी	दुर्गा
दशमी	काल
एकादशी	विश्वेदेव
द्वादशी	विष्णु
त्रयोदशी	काम
चतुर्दशी	शिव
पूर्णिमा	चन्द्रमा

अमावस्या पितर

तिथियों की संज्ञाऐं:-

तिथियों का वर्गीकरण पाँच भागों में किया गया हैं।

तिथियां

	नन्दा	भद्रा	जया	रिक्ता	पूर्णा
	1	2	3	4	5
	6	7	8	9	10
	11	12	13	14	15/30

सिद्धा तिथियाँ:-

मंगलवार	बुधवार	बृहस्पतिवार	बुधवार	शनिवार
3	2	5	1	4
8	7	10	6	9
13	12	15	11	14

अमावस्या के तीन भेद है -

1) प्रातःकाल से लेकर रात्रि तक रहने वाली अमावस्या को सिनीवाली।

2) चतुर्दशी से विद्ध को दर्श एवं

3) प्रतिपदा से युक्त अमावस्या को कुहु कहते हैं।

दग्धा, विष और हुताशन संज्ञक तिथियाँ:-

दग्धा, विष और हुताशन संज्ञक तिथियों में कार्य करने पर विघ्न बाधाओं का सामना करना पड़ता हैं।

दग्धा-विष-हुताशन योग संज्ञा बोधक चक्र

वार	रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरूवार	शुक्रवार	शनिवार
दग्धा संज्ञक	12	11	5	3	6	8	9

विष संज्ञक	4	6	7	2	8	9	7	
हुताशन	12	6	7	8	9	10	11	संज्ञक

वार:-

जिस दिन की प्रथम होरा का जो ग्रह स्वामी होता हैं उस दिन उसी ग्रह के नाम का वार रहता हैं। ज्योतिष शास्त्र में शनि, बृहस्पति, मंगल, रवि, शुक्र, बुध और चन्द्रमा ये ग्रह एक दूसरे से क्रमशः नीचे दिये गये हैं, एक दिन की 24 होरा होती हैं। दूसरे शब्दों में घण्टा ;भ्वनतद्ध का दूसरा नाम होरा हैं।

वार के प्रकार:-

वार	प्रकार	वार	प्रकार
बृहस्पति	सौम्य	मंगल	क्रूर
चन्द्र	सौम्य	शनि	क्रूर
बुध	सौम्य	रवि	क्रूर
शुक्र	सौम्य	-	-

नक्षत्र:-

आकाश मण्डल में जो असंख्य तारिकाओं से कही आँख, सर्प, शंकर एवं हाथ आदि की आकृति बन जाती है वे ही नक्षत्र कहलाते हैं। आकाश मण्डल की दूरी नक्षत्रों द्वारा ही ज्ञात की जाती हैं।

1) पंचक संज्ञक

धनिष्ठा	शतभिषा	पूर्वाभाद्रपद	पूर्वाभाद्रपद	रेवती
पंचक दोष				

2) मूल संज्ञक

मूल संज्ञक नक्षत्र को शुभ नहीं माना जाता हैं। यदि किसी बच्चे का जन्म ज्येष्ठा, अश्लेषा, रेवती, मूल, मघा और अश्विनी नक्षत्र में होता है, तो 28वें दिन के पश्चात् जब वहीं नक्षत्र आता हैं तब इन नक्षत्रों के दोष शमनार्थ शान्ति करवाई जाती हैं।

ज्येष्ठा और मूल नक्षत्र मूल संज्ञक तथा आश्लेषा सर्प मूल संज्ञक हैं।

3) ध्रुव संज्ञक

उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद एवं रोहिणी ध्रुव संज्ञक।

4) उग्र संज्ञक

पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद, पूर्वाफाल्गुनी, मघा, व भरणी उग्र संज्ञक।

5) चर संज्ञक

स्वाति, पुनवसु, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा चर संज्ञक।

6) मिश्र संज्ञक

विशाखा और कृत्तिका मिश्र संज्ञक कहलाता हैं।

7) लध्र संज्ञक

हस्त अश्विनी पुष्य और अभिजित् क्षिप्र या लघु संज्ञक कहलाता हैं।

8) मृदु संज्ञक

मृगशिरा, रेवती, चित्र, और अनुराधा मृदु संज्ञक है।

9) तीक्ष्ण संज्ञक

मूल, ज्येष्ठ, आर्द्रा और अश्लेषा तीक्ष्ण या दारूण संज्ञक हैं।

10) अधोमुख

मूल, आश्लेषा, विशाखा, कृत्तिका, पूर्वाफाल्गुनी पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद, भरणी और मघा मुखसंज्ञक है इन नक्षत्रों में शुभ कार्य जैसे - कुआँ, खोदना, समान एवं ओद्यौगिक क्षेत्र फैक्ट्री आदि की नींव खोदना है।

11) ऊर्ध्वमुख संज्ञक

आर्द्रा, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा उर्ध्वमुखी संज्ञक है।

12) तिर्यड्मुख संज्ञक

अनुराधा, हस्त, स्वाती, पुनर्वसु, ज्येष्ठा और अश्विनी तिर्यङ्मुख संज्ञक नक्षत्र है।

13) दग्ध संज्ञक

दग्ध नक्षत्रों में शुभ कार्य नहीं किये जाते है जैसे

1. रविवार	-	भरणी
2. सोमवार	-	चित्रा
3. मंगलवार	-	उत्तराषाढ़ा
4. बुधवार	-	धनिष्ठा
5. बृहस्पतिवार	-	उत्तराफाल्गुनी

6. शुक्रवार	-	ज्येष्ठा
7. शनिवार	-	रेवती

उपरोक्त नक्षत्र दग्धसंज्ञक कहलाते है।

14) मास शून्य संज्ञक

मास (महिना)		**नक्षत्र**
1. चैत्र	-	रोहिणी, अश्विनी
2. वैशाख	-	चित्रा और स्वाती
3. ज्येष्ठ	-	उत्तराषढ़ा और पुष्य
4. आषाढ़	-	पूर्वाफाल्गुनी और धनिष्ठा
5. श्रवण	-	उत्तराषाढ़ा
6. भाद्रपद	-	रेवती
7. आश्विनी	-	पूर्वाभाद्रपद
8) कार्तिक	-	कृत्तिका, मघा
9) मार्गशीर्ष	-	चित्रा और विशाखा
10) पौष	-	आर्द्रा, अश्विनी और हस्त
11) माघ	-	श्रवण, मूल
12) फाल्गुन	-	करणी, ज्येष्ठा मास शून्य नक्षत्र
13) माघ	-	श्रवण, मूल

नक्षत्रो के चरणानुसार नामाक्षर

राशि	नक्षत्र व उनके चरण	नाम के प्रथम अक्षर
मेष	अश्विनी 4 भर. 4 कृत्तिका 1	चू चे चो ला लि लू ले लो अ
वृष	कृत्तिका 3 रोहिणी 4 मृग. 2	इ उ ए ओ वा वि वु वे वो
मिथुन	मृगशीर्ष 2 आर्द्रा 4 पुन. 3	क कि कू घ ङ छ के को ह
कर्क	पुनर्वसु 1 पुष्य 4 अश्लेषा 4	ही हू हे हो डा डी डू डे डो
सिंह	मघा 4 पूर्वाफा. 4 उ. फा. 1	म मी मू मे मो टा टी टू टे
कन्या	उ. फा. 3 हस्त 4 चित्रा 2	टो प पी पू ष ण ठ पे पो

तुला	चित्रा 2 स्वाती 4 विशाखा 3	र री रू रे ये ता ति तू ते
वृश्चिक	विशाखा 1 अनु. 4 ज्येष्ठा 4	तो न नी नू ने नो या यी यू
धनु	मूल 4 पूर्वाषा. 4 उत्तराषा. 1	ये यो भ भी भू धा फा ढा भे
मकर	उ. षा 3 श्रवण 4 पूर्वाभाद्र 2	भो ज जी खी खू खे खो ग गि
कुंभ	धनिष्ठा 2 शत. 4 पूर्वाभाद्र 3	गू गे गो सा सी सू से सो द
मीन	पूर्वाभा. 1 उ. भाद्र 4 रेवती 4	दी दू थ झ ´ दे दो चा ची

नक्षत्र:-

ज्योतिष के अनुसार अश्विनी से लेकर रेवती तक 27 नक्षत्र होते हैं।

प्रत्येक 9 नक्षत्र के 9 स्वामी ग्रह हैं। इस प्रकार तीन नक्षत्र (उदाहरण के लिए कृतिका, उत्तरा फाल्गुनी और उत्तराषाढा का स्वामी सूर्य है। इसी प्रकार चन्द्रमा, रोहिणी, हस्त और श्रवण के स्वामी है।)

सारणी नं. 2.

इन 28 नक्षत्रों के स्वामी क्रमशः हैं-

नक्षत्र	स्वामी
1. अश्विनी	अश्वनी कुमार
2. भरणी	यम
3. कृतिका	अग्नि
4. रोहिणी	ब्रह्मा
5. मृगशिरा	चन्द्रमा
6. आर्द्रा	शिव
7. पुर्नवसु	अदिति
8. पुष्य	गुरू
9. अश्लेषा	सर्प
10. मघा	पितृ
11. पूर्वाफाल्गुनी	भग
12. उ.फाल्गुनी	अर्यमा
13. हस्त	सूर्य

14. चित्रा	त्वष्टा/विश्वकर्मा
15. स्वाती	वायु
16. विशाखा	इन्द्राणि
17. अनुराधा	मित्र
18. ज्येष्ठा	इन्द्र
19. मूल	राक्षस
20. पूर्वाषाढ़ा	जल
21. उत्तराषाढ़ा	विश्वादेव
अभिजित्	विधि
22. श्रवण	विष्णु
23. घनिष्ठा	वसु
24. शतभिषा	वरूण
25. पूर्वाभाद्रपद	अजैकपाद
26. उत्तराभाद्रपद	अहिर्बुध्न्य
27. रेवती	पूषा

अभिजित् नक्षत्र को भी 28वाँ नक्षत्र माना गया है। अभिजित् नक्षत्र सभी मांगलिक कार्यों में शुभ माना जाता है। इस नक्षत्र में उत्तराषाढ़ा की आखिरी पन्द्रह घटियाँ और श्रवण के प्रारम्भ की 04 घटियाँ इस प्रकार 19 घटियों के मान वाला नक्षत्र अभिजित् नक्षत्र कहलाता है।

करण:-

तिथि के आधे भाग को करण कहते है। करण ग्यारह होते हैं, चार स्थिर और सात चर करण।

करण के नाम-

1. बव 2. बालव 3. कालक 4. तैतिल 5. गर 6. वणिज 7. विष्टि (उसी को भद्रा कहते हैं)

ये सात चल करण हैं, जो कि प्रतिमास शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा के उत्तरार्द्ध से शुरू होकर चतुर्थी के उत्तरार्द्ध तक बीतते हैं, फिर द्वितीया वृति में पंचमी के पूर्वार्द्ध से वैसे ही प्रवृत होते हैं इस प्रकार कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी के पूर्वार्द्ध तक इन्ही का अवस्थान रहता हैं।

प्रति मास कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी के उत्तरार्द्ध मे शकुनी 1, अमावस्था के पूर्वार्द्ध में चतुर्थी पद 2, उत्तरार्द्ध में नाग 3, और शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा के पूर्वार्द्ध में किंस्तुध्न 4, ये चारों (शकुन्यादि) करण स्थायी रूप में सदैव रहा करते हैं, इसी से उनको स्थिर करण कहते हैं।

इस प्रकार 7 चल और 4 स्थिर करण माने गये हैं।

योग:-

नक्षत्र की तरह ही योग भी 27 होते है।

चन्द्रमा और सूर्य के राश्यांशों का योग जब (13 अंश 20 कला) या इसके गुणा करने पर पूर्ण एक योग का निर्माण होता है। इस प्रकार विष्कुम्भ से लगाकर वैधृति तक कूल 27 योग होते है।

योग	स्वामी	योग	स्वामी
1) विष कुम्भ	यम	6) अतिगण्ड	चन्द्रमा
2) प्रिति	विष्णु	7) सुकर्मा	इन्द्र
3) आयुष्मान	चन्द्रमा	8) धृति	जल
4) सौभाग्य	ब्रह्मा	9) शूल	सर्प
5) शोभन	बृहस्पति	10) गण्ड	अग्नि
11) वृद्धि	सूर्य	20) शिव	मित्र
12) ध्रुव	भूमि	21) सिद्ध	कार्तिकेय
13) व्याघात	वायु	22) साध्य	सावित्री
14) हर्षण	भग	23) शुभ	लक्ष्मी
15) वज्र	वरूण	24) शुक्ल	पार्वती
16) सिद्धि	गणेश	25) ब्रह्मा	अश्विनी कुमार
17) व्यनीपात	रूद्र	26) ऐन्द्र	पितर
18) वरीयान्	कुबेर	27) वेधृति	दिति
19) परिष	विश्व कर्मा		

इस प्रकार पंचांग के पाँचों अंगों का पूर्णतः ज्ञान पंचांग का भली भॉति अध्ययन करने पर ही हम जन्म पत्रिका सही ढंग से बना सकते है।

पंचांग देखने पर स्पष्ट होता है कि जातक के जन्म के समय, मास पक्ष, तिथि, वार, योग करण, नक्षत्र आदि की स्थिति और मान क्या थे।

2.2.3 पंचांग को देखने की विधि

उदाहरण के लिए किसी जातक का जन्म 23 अप्रेल, 2012 तदनुसार वैशाख शुक्ल पक्ष संवतृ 2069 द्वितीया तिथि सोमवार को हुआ तो उस मास का पंचांगदेखने पर ज्ञात हुआ कि सर्वप्रथम पंक्ति में ही तिथि, वार, नक्षत्र आदि मान सहित दिये हैं। उक्त जातक का जन्म द्वितिया तिथि 29 घटि सोमवार कृतिका नक्षत्र 1 घटि 38 पल (अगले दिन तक) सौभाग्य योग 16 घटि 03 पल एवं तैतिल करण 3 घटि 04 पल थे। इस दिन दिनमान 16 घटि 01 पल सूर्योदय 6 बजकर 01 मिनिट प्रातः और सूर्यास्त सायं 6 बजकर 56 मिनिट पर हुआ। इसी प्रकार चन्द्रमा मेष राशि में और सूर्यस्पष्ट मेष राशि के 09 अंश 09 कला 45 विकला पर स्थित था और सूर्य गति 58 कला 21 विकला थीं।

जन्म कुण्डली बनाने में पंचांगों के अलावा रेखांश, अक्षांश, मानक समय, रविक्रान्ति, वेलान्तर एवं रेखान्तर अथवा रेल्वे अन्तर की आवश्यकता होती हैं। इसकी परिभाषाएँ नीचे दी जा रहीं हैं-

(पं. श्रीबल्लभ मनीराम पंचांग के अनुसार)

2.2.4 कुछ परिभाषाएं -

1.रेखांश, अक्षांश - विश्व मानचित्र में आपने कई ऊर्ध और तियक् रेखाएं खिंचीं हुई देखी होंगी जो पूर्व से पश्चिम की और और उत्तरी ध्रुव से दक्षिणी ध्रुव की ओर खिंचीं गई हैं। हमारी पृथ्वी के बीचों बीच एक काल्पनिक रेखा पूर्व से पश्चिम की ओर पश्चिम से पूर्व की ओर खिंची गई है इसे भूमध्य रेखा कहते हैं।

अक्षांश - जो रेखाएं भूमध्य रेखा के समान्तर, भूमध्य रेखा से नीचे और ऊपर की ओर खींची गई हैं इन्हें अक्षांश रेखाएं या सिर्फ अक्षांश कहते हैं।

रेखांश - वे उर्ध्वाधर रेखाएं जो उत्तरी ध्रुव से दक्षिणी ध्रुव ओर खींची गई हैं उन्हें देशान्तर रेखाएं अथवा रेखांश कहते है।

मानक समय - वह घड़ियों का समय जो देश के किसी भी स्थान पर एक सा रहता है वह मानक समय है जबकि रेखांश में अन्तर की वजह से किसी भी स्थान विशेष का समय अलग-अलग होता है (1 अंश रेखान्तर के अन्तर पर 4 मिनट का समयान्तर आता है)

2. रवि क्रांन्ति अथवा सूर्य क्रान्ति

सूर्य की किरणें जिस अक्षांश पर लम्बवत् पड़ती है वह उस दिन की रवि क्रन्ति कहलाती है।

भूमध्य रेखा पर रवि क्रान्ति 21 मार्च और 23 सितम्बर के लगभग शून्य ऋण(00) होती है।

22 मार्च से 23 सितम्बर तक उत्तर क्रान्ति और 24 सितम्बर से 21 मार्च रवि क्रान्ति, दक्षिण क्रान्ति कहलाती है।

3. वेलान्तर

सूर्य और पृथ्वी दोनों गतिमान हैं, किन्तु प्रतिदिन दोनों की गतियों में अन्तर है, इस अन्तर को सामन्जस्य करने के लिए (मानक समय से स्थानीय या स्थानीय समय के मानक समय में जो समयान्तर ऋण अथवा धन किया जाता है, वह वेलान्तर संस्कार कहलाता है।) स्टैण्डर्ड समय बनाना हो तो रेल्वे अन्तर का चिन्ह ऋण एवं धन जो हैं, उसी प्रकार रखे जायेगें। लेकिन वेलान्तर का चिन्ह सारणी में ऋण व धन जो हैं उसमें विलोम धन हो तो ऋण और ऋण हो तो धन संस्कार करने पर स्पष्ट स्थानीय समय प्राप्त होगा ।

4. रेखान्तर (अथवा रेल्वे अन्तर)

मानक रेखांश (भारत के लिए मानक रेखांश) से स्थानीय रेखांश में प्रत्येक 1 अंश अन्तर के लिए 4 मिनट का समयान्तर स्थानीय समय से मानक समय अथवा मानक समय से स्थानीय समय में बदलने के लिए (ऋण + धन) किया जाता है वही रेखान्तर संस्कार अथवा रेखान्तर अथवा रेल्वे अन्तर कहलाता है।

2.2.5 सूर्योदय एवं सूर्यास्त साधन

जातक का जिस स्थान पर जन्म हुआ उस स्थान विशेष का सूर्योदय का स्थानीय समय लेते हैं क्योंकि एक स्थान का सूर्योदय व सूर्यास्त का समय अलग-अलग होता है। सूर्योदय और सूर्यास्त का स्थानीय समय ज्ञात करने की कई विधियाँ हैं, यहाँ की विधि से सूर्योदय साधन करते है।

विधि -

1. जिस स्थान विशेष का सूर्योदय ज्ञात करना है उस स्थान विशेष के अक्षांश और उस दिन की रविक्रान्ति (या सूर्य क्रान्ति) सारणी से ज्ञात कर लेवें (सभी पंचांग से उपरोक्त सारणियां होती हैं।)
2. इच्छित अक्षांश और रविक्रांन्ति को गुणा करें और 5 का भाग देकर चर पल बनालें।
3. इस प्रकार प्राप्त चर पलों को 2) से भाग देकर चर मिनट बना लेवें।
4. उस दिन रवि उत्तर (+) हो तो 6 घन्टे में इन चर पलों को घटाएगें। इसी प्रकार रविक्रान्ति उत्तर होने पर चर मिनिट में 6 घण्टे जोड़ने पर सूर्यास्त प्राप्त होगा।
5. इस प्रकार प्राप्त सूर्योदय का मान स्थानीय सूर्योदय का मान होगा।

   चूंकि जातक का जन्म समय का मान हम भारतीय स्टैण्डर्ड टाइम के अनुसार ही देखते हैं और सभी घड़ियों में सभी स्थानों पर एक सा ही समय दिखाती हैं। (उदाहरण के लिए यदि दिल्ली में घड़ियां दोपहर के 2:30 बजा रही हैं तो मुम्बई और कोलकाता में भी घड़ियां दोपहर के 2.30 ही बजा रही होंगी।

   क्योंकि यहाँ भारतीय का मानक समय हैं जो से लिया गया है पूंज समय है।) अतः हमें इस स्थानीय समय को मानक समय में (पूंज) बदलना होगा।

6. अतः उपरोक्त स्थानीय सूर्योदय के मान को मानक समय बनाने के लिए रेखान्तर या देशान्तर संस्कार (धन या ऋण) करना पड़ता है। एक देशान्तर का मान 4 मिनिट होता हैं।

उदाहरण के लिए जातक का जन्म जयपुर में हुआ। जयपुर का रेखांश है और IST का रेखांश है। दोनों का अन्तर किया।

IST रेखांश

जयपुर का रेक्षांश 750/50। (-) घटाया

06 - 40 शेष

शेष को 4 से गुणा करने पर

चूंकि 10 = 4 मिनिट

$60^0/40^0$

× 4

24/160 (मि./सैं.)

160 सैं. में 60 का भाग देकर मिनिट बनाएगें

24 मिनिट/160 सैंकण्ड य् 60

24 मि. + 2 मि. 40 सैं.

अतः जयपुर का देशान्तर 26 मि. 40 सैंकण्ड (ऋण)

नोटः अभीष्ट रेखांश 820/30। (ण्ण्ैण्ज्) से कम होने पर (+) धन और अधिक होने पर (-) ऋण करेंगे।

उपरोक्त ''देशान्तर सारणी'' से भी ले सकते हैं जो सभी पंचांगों में भी दी जाती है।

7. देशान्तर संख्या (इसे रेल्वे अन्तर भी कहते हैं) करने के पश्चात् वेलान्तर संस्कार करते हैं।

वेलान्तर संस्कारः-

चूंकि पृथ्वी और सूर्य की रात्रि में समानता नहीं है अतः दोनों की गति में सामन्जस्य बैठाने के लिए वेलान्तर संस्कार किया जाता है। स्टैण्डर्ड समय से स्थानीय समय बनाना हो, तो रेल्वे अन्तर का चिन्ह् (-) (+) जो है वैसे ही रखे जायेगें लेकिन वेलान्तर की चिन्ह् सारणी में (-) (+) जो हैं उससे विलोम (+) धन हो, तो (-) ऋण हो तो (+) धन संस्कार करने पर स्पष्ट स्थानीय समय प्राप्त होगा।

सारणी - बल्लभमनीराम पंचांग

1. देशान्तर सारणी - पृष्ठ. सं. 86 - 87

2. वेलान्तर सारणी - पृष्ठ सं. 95

3. चरपल सारणी - पृष्ठ सं. 89

4. रविक्रांन्ति सारणी - पृष्ठ सं. 94

2.2.7 चरपल विधि

चरपल विधि द्वारा सूर्योदय निकालने की विधि

सूत्रः- $\frac{\text{चरपत X आक्षांश रवि क्रान्ति}}{5}$

उदाहरणः-

किसी जातक का जन्म जयपुर शहर में दिनांक 30 अक्टूबर, 2012 तद्नुसार श्रीकार्तिक कृष्ण पक्ष प्रतिपदा संवत् 2069 मंगलवार को सायं 7 बजकर 25 मिनट पर हुआ चरपल से इस दिन का सूर्योदय ज्ञात करें, पुनः इष्टकाल भी ज्ञात करें।

दिनांक - 30 अक्टूबर, 2012

स्थान - जयपुर

अक्षांश - $26^0/56$

रेखांश - $75^0/50$

रविक्रांन्ति - 13/51 दक्षिण

बेलान्तर - (-) 16/21 ऋण

सूत्रः- $\frac{\text{चरपत X आक्षांश रवि क्रान्ति}}{5}$

$\frac{26^0/56 \text{ X } 75^0/50}{5}$

$\frac{372.5}{5}$

= 74.5 पल

चर मिनट = 74.5

= 29.8 मि.

= 29 मि. 48 से.

सूर्योदय -	घ.	मि.	से.	
	6	00	00	
	+	29	48	जोड़ें (रवि क्रान्ति दक्षिण होने से)
	6	29	48	स्थानीय सूर्योदय

स्थानीय सूर्योदय -	घ.	मि.	से.	
	06	29	48	
	+	26	40	
	06	56	28	स्थानीय मध्यम सूर्योदय
घटाने पर (-)		16	21	(-) बेलान्तर संस्कार
मानक सूर्योदय	06	40	07	

दिनांक 30/10/2012 को जयपुर का मानक सूर्योदय 06 बजकर 40 मि. 07 सैं. प्राप्त हुआ।

2.2.8 दिनमान से सूर्योदय निकालना

सूर्योदय निकालने की अन्य विधियाँ

1. उपरोक्त चर मिनट को द्विगुणित करें।
2. यदि रवि क्रान्ति दक्षिण (+) है तो प्राप्त चर मि. को 12 घन्टे में जोड दें, क्रान्ति दक्षिण (-) होने पर 12 घन्टे में से घटा दें। प्राप्त मान दिनमान होगा (दिनमान - सूर्योदय से सूर्यास्त तक का समय दिनमान कहलाता है।)
3. प्राप्त दिनमान का आधा दिनार्द्ध कहलाता है। यह दिनार्द्ध का मान ही स्थानीय सूर्यास्त का मान है।

सूर्योदय एवं सूर्यास्त का सूत्रः-

सूर्यास्त ´ 2	=	दिनमान (घ. मि.) ´ 2)
	=	दिनमान (घ. प.)
सूर्यास्त ´ 5	=	दिनमान (घ. मि.)
सूर्यास्त		06: 14
		X 5
		30/70

= 31/10 दिनमान

सूत्रः-

1) रात्रिमान = सूर्योदय X 5 = रात्रिमान (घ. प.)

(घ. प.)

2) रात्रिमान = 60: 00 - दिनमान

रात्रिमान ज्ञात करने के लिए 60घटि में से दिनमान घटाने जो मान प्राप्त होता हैं वह रात्रिमान कहलाता हैं।

उदाहरण

घ. प.

60 / 00

- 31 / 10 दिनमान

28 / 50 रात्रिमान

सूत्रानुसार दिनमान + रात्रि अर्द्ध + जन्म समय स्ज् ´ 2)

जन्म समय = 03 बजे प्रातःकाल

वेलान्तर 0.39

देशान्तर - 27

03/00/00 जन्म समय

- 27/00 देशान्तर 31/10 दिनमान

जन्म समय LT 02/33/00

X 2 1/2

06/22/30

28/50 रात्रिमान

2

31/10 दिनमान

14.25 रात्रि अर्द्ध

45/35

45/35/00

+ 06/22/30 जन्म समय LT

51/57/30 इष्टकाल (घ. पल)

2.2.9 स्थानीय सूर्यास्त

दिनमान
―――
2

उपरोक्त उदाहरण से चर मिनट - 29 मि. 48 से.

चर मिनट का द्विगुणित - 29 मि. 48 से. ´ 2

= 59 मि. 36 से.

दिनमान = 12 घन्टे - 59 मि. 36 से.

दिनमान = 11 घन्टे 0 मि. 24 से.

दिनार्द्ध - दिनमान -- स्थानीय सूर्यास्त
―――
2

11 घ – 24 से.
―――
2

स्थानीय सूर्यास्त -5 घ. 30 मि. 12 से.

		घ.	मि.	से.	
स्थानीय सूर्यास्त -		घ.	मि.	से.	
		12	00	00	
सूर्यास्त	(-)	05	30	12	
		06	29	48	स्थानीय सूर्योदय
		+	26	40	देशान्तर संस्कार
		06	56	28	
वेलान्तर संस्कार -		16	21	.	
मानक सूर्योदय		06	40	07	स्थानीय सूर्योदय

2.2.10 इष्टकाल निकालने की पद्धतिः-

परिभाषा- सूर्योदय के बाद जन्म समय तक जितना जन्म समय घण्टे मिनिट या घटी पल में होता हैं वह इष्टकाल कहलाता है।

जातक के जन्म समय में से सूर्योदय का मान घटाने पर जो समय ज्ञात होता है वह इष्टकाल कहलाता है।

इष्ट काल - जन्म समय - सूर्योदय का मान (स्ज्) से

उपरोक्त उदाहरण में जन्म समय सायं 7/25 बजे

जन्म समय = 12 + 7/25 घन्टे

= 19/25 सायं

इष्ट काल = जन्म समय 19/25 - सूर्योदय 6/40/07 (घटाया)

= 12 घ. 44 मि. 53 से. (घन्टा मिनट में)

´ 2 1/2

= इष्टकाल

चूंकि ज्योतिष की सभी गणनाएं अधिकतर घटी पल में होती है अतः उपरोक्त को 2) से गुणा करने पर इष्टकाल का घट्यादि मान प्राप्त होगा।

इष्टकाल (घट्यादि में) = (12/44/53) ´ 2)

= 31 घटि 52 पल

यदि किसी जातक का जन्म दिनांक 30 अक्टूबर 2012 को रात्रि के 1 बजकर 40 मिनट पर हुआ हो जन्म समय में 24 घन्टे जोड़कर समय 25 घन्टे 40 मिनट लेंगे, किन्तु दिनांक 30 अक्टूबर, 2012 दिन मंगलवार ही लेंगे न कि बुधवार जैसा कि रेल्वे में मध्य रात्रि के बाद अगल दिन मान लेते है। किन्तु ज्योतिष में दिन एवं तिथि सूर्योदय के समय के बाद से माना जाता है।

यहां पर यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि जन्म का समय जहां कहीं भी देखेंगे वह घड़ियों में सभी जगह एक सा (अर्थात् मानक समय) होगा जबकि सूर्योदय का समय सभी जगह अलग-अलग होता है इसीलिए स्थानीय सूर्योदय कहलाता है अतः इसे मानक समय में बदलना जरूरी होता है। अगर सूर्योदय का समय स्थानीय लेते हैं तो जन्म समय को भी स्थानीय मसय में बदलना होगा क्योंकि दोनों की इकाई एक होने पर ही इष्टकाल सही होगा अन्यथा इष्टकाल त्रुटिपूर्ण होगा और इष्टकाल के त्रुटिपूर्ण बनेगी।

2.2.11 इष्टकाल निकालने की दूसरी पद्धति

इस पद्धति में प्रथम पद्धति से अन्तर सिर्फ इतना है कि प्रथम पद्धति में सूर्योदय या सूर्यास्त का इष्टकाल निकालने के लिए प्रयोग किया जाता है।

किन्तु इस पद्धति में सूर्यादय या सूर्यास्त का प्रयोग नहीं किया जाता। इसके स्थान पर दिनमान या रात्रि मान प्रयोग किया जाता है।

1. सूर्यादय से लेकर 12 बजे दिन तक का जन्म समय होने पर -

सूत्रः- दिनार्द्ध - (12 - जन्म समय स्ज्) × 2))

= इष्ट काल (घटी, पल)

उदा0 जन्म समय 8 बजे होने पर तथा दिनमान 28 घटी 50 पल तथा रात्रि मान 31 घटी 10 पल है तो इष्टकाल ज्ञात होगा।

दिनार्द्ध 14/25 12.00 घण्टे दिन के दिनमान / 2 द्धिनार्अन्तर

- 10/00 - 8.00 जन्म समय स्ज्

04/25 इष्ट काल 4.00

´ 2 1/2

10.00 अन्तर

नोट - इस पद्धति में दिनमान या रात्रिमान लिये जाते है वो घण्टे मिनिट में न होकर घटी पल में होते हैं। अतः इसका प्रयोग सीधा किया जाता है इसमें 2) से गुणा नहीं किया जाता।

2.2.11 इष्टकाल निकालने के सूत्र व विधियाँ

1. सूत्रः- दिनार्द्ध = दिन के 12 बजे का इष्ट

यदि किसी व्यक्ति का जन्म, दिन के ठीक 12 बजे दिन के स्थानीय समय में हुआ है तो उसका इष्ट सीधा दिनार्द्ध ही हो जाता है।

इसी प्रकार दिनमान पूरा सूर्यास्त के समय का इष्ट होता है।

2. सूत्रः- सूर्योदय से सूर्यास्त = दिनमान (इष्ट, घटी/पल)

अगर किसी व्यक्ति का जन्म ठीक सूर्यास्त के समय में स्थानीय समय में हो तो उसका इष्ट दिनमान का सम्पूर्ण मान ही होता है।

रात्रि के वास्तविक 12 बजे इष्ट, दिनमान + रात्रि अर्द्ध के बराबर होता है।

3. सूत्रः- दिनमान + रात्रि अर्द्ध = रात्रि 12 बजे (स्थानीय समय) (इष्ट, घटी/पल)

दिन के 12 बजे से रात्रि 12 बजे तक का समय होने पर -

4. सूत्रः- दिनार्द्ध + (जन्म समय × 2 ½ इष्ट काल

रात्रि 8 बजे जन्म समय स्ज्

दिनमान - 28/50 रात्रि मान 31/10

दिनार्द्ध	14/25	08: 00	जन्म समय
जन्म समय (घ. प.) (+)	20/00	2 1/2	
	34/25	20/00	

दिनमान -- स्थानीय सूर्यास्त / 2 दिनार्द्ध -

28 /50 / 2 दिनार्द्ध -

रात्रि बारह बजे से अगले सूर्योदय होने का समय, का जन्म समय होने तक

5. सूत्रः-

दिनमान + रात्रि अर्द्ध + (जन्म समय 2 ½ = इष्टकाल

उदाहरणः-

जन्म दिनांक 03/09/2012

जन्म समय 03 बजे प्रातःकाल

जन्म स्थान कोटा

अक्षांश 25/10

रविक्रांति + 07/28

35/56 (चर पल) 2 ½

= 14/22 चर मिनिट

रविक्रांति होने की वजह से 6 घण्टे में से चर मिनिट निकालने पर सूर्योदय आयेगां।

घं0/मि0/सैं0

06/00/00

\- 00/14/22

05/45/38

= 5/46 सूर्योदय

12 घंण्टे में से सूर्योदय घटाने पर सूर्योस्त प्राप्त होगा

घं0/मि0/सैं0

12/00/00

\- 05/46/00

06/14/00 सूर्योस्त

2.3 सारांश

इस इकाई में जन्म कुण्डली निर्माण की विधि द्वारा जन्म कुण्डली आसानी से बनाई जा सके इसका प्रयास किया गया है। इसमें तिथी, वार, नक्षत्र, योग, करण, जन्म समय, जन्म स्थान एवं जन्म वर्ष की जानकारी कराई गई हैं। सूर्योदय, वेलान्तर, स्पष्टान्तर ज्ञान एवं इष्टकाल निर्णय की सुगम पद्धति बताई गयी हैं। जिससे ज्योतिष सीखने वालें छात्र जन्म कुण्डली का निर्माण कर सकेगा।

2.4 बोध प्रश्न

1 पंचांग कितने अंग होते हैं ?

उत्तर पंचाग के पांच अंग होते हैं।

तिथी, वार, नक्षत्र, योग एवं करण।

2 तिथियों का वर्गीकरण करिए ?

उत्तर तिथियों की पाँच संज्ञाऐं होती हैं

नन्दा	भद्रा	जया	रिक्ता	पूर्णा
1	2	3	4	5
6	7	8	9	10
11	12	13	14	15/30

3 नक्षत्र कितने होते हैं ? नाम सहित लिखिए?

उत्तर नक्षत्र 27 होते हैं।

1. अश्विनी	2. भरणी	3. कृतिका	4. रोहिणी
5. मृगशिरा	6. आर्द्रा	7. पुर्नवसु	8. पुष्य
9. अश्लेषा	10. मघा	11. पूर्वाफाल्गुनी	12. उ.फाल्गुनी
13. हस्त	14. चित्रा	15. स्वाती	16. विशाखा
17. अनुराधा	18. ज्येष्ठा	19. मूल	20. पूर्वाषाढ़ा
21. उत्तराषाढ़ा	22. श्रवण	23. घनिष्ठा	24. शतभिषा
25. पूर्वाभाद्रपद	26. उत्तराभाद्रपद	27. रेवती	

1 अमावस्या के कितने भेद होते हैं ?

उत्तर अमावस्या के तीन भेद होत हैं-

2 प्रातःकाल से लेकर रात्रि तक रहने वाली अमावस्या को सिनीवाली।

3 चतुर्थदशी से विद को दर्श एवं

4 प्रतिपदा से युक्त अमावस्या को कुहु कहते हैं।

5 इष्टकाल किसे कहते हैं ?

उत्तर जातक के जन्म समय में से सूर्योदय का मान घटानें पर जो समय ज्ञात होता हैं वह समय इष्टकाल कहलाता हैं।

2.4 निबन्धात्मक प्रश्न

1 सूर्योदय साधन करने की विधि समझाइयें ?

2 इष्टकाल निकालने की विधि उदाहरण सहित समझाइयें ?

2.5 शब्दावली

इस इकाई में जन्म कुण्डली निर्माण की विधि द्वारा जन्म कुण्डली आसानी से बनाई जा

इष्टकाल = जन्म का घटियादि मान

पंचांग - तिथी, वार, नक्षत्र, योग एवं करण

मृदु = सौंम्य,

उग्र = अशुभ

अद्धदिनमान = अहोरात्र (पूरे दिन की, रात्रिमान, रात्रि का सम्पूर्ण मान)

IST = भारतीय मानक समय

LT = स्थानीय समय

2.6 संदर्भ ग्रंथ सूची

1 भारतीय ज्योतिष लेखक डॉ. नेमीचंद्र शास्त्री

2 पंचांग बल्लभमनीराम

लेखकः- श्रीमती विजयलक्ष्मी शर्मा

कनिष्ठ लिपिक वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

इकाई - 3

इष्टकाल से जन्म कुण्डली निर्माण, ग्रह साधन, (चालन धन-ऋण) भयात्-भभोग

इकाई की रूपरेखा

3.0 प्रस्तावना

3.1 उद्देश्य

3.2 विषय प्रवेश

3.2.1 लग्न

3.2.2 भयात और भभोग साधन

3.2.3 चालन

3.2.4 ग्रह स्पष्ट

3.3 सारांश

3.4 शब्दावली

3.5 अभ्यास प्रश्न

3.6 संदर्भ ग्रंथ सूची

3.0 प्रस्तावना

इस इकाई में जन्म कुण्डली का निर्माण इष्टकाल से किया गया हैं। पूर्व की इकाई में जन्म पत्रिका के निर्माण में पंचांग की सहायता से तिथि, वार, नक्षत्र, योग और करण एवं सूर्योदय, वेलान्तर, स्थानीय समय और इष्टकाल की विधि समझायी गयी हैं। इसके पश्चात् इस इकाई 03 में इष्टकाल से जन्म कुण्डली का निर्माण किया गया हैं।

भयात भभोग साधन के द्वारा ग्रह स्पष्ट बताए गये हैं। चालन धन (+), ऋण (ग) को विधि द्वारा स्पष्ट किया गया हैं एवं चालन द्वारा ग्रह स्पष्ट किया गया हैं। इसमें विद्यार्थीयों को जन्म कुण्डली निर्माण सरल पद्धति से उदाहरण सहित समझाया गया हैं।

3.1 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य छात्रों को जन्म कुण्डली निर्माण किस प्रकार किया जाता हैं उदाहरण सहित विस्तृत रूप से समझाया गया हैं। जिससे छात्रों को आसानी से समझ सकें और जन्म कुण्डली का निर्माण स्वयं कर सकें। छात्रों कि सुविधा के लिये लग्न सारणी इस ईकाई में दी गई हैं।

3.2 विषय प्रवेश

इष्टकाल से जन्मकुण्डली निर्माण

3.2.1 लग्नग

पूर्व के क्षितिज पर जन्म के समय और आकाश के मिलन पर जो ग्रह उदय हो रहा उसका बड़ा महत्त्व हैं। किसी भी घटना विशेष पर पूर्व के क्षितिज पर जिस राशि का उदय जितने अंश/कला/विकला पर हो रहा हैं वह उस घटना का लग्न हैं। इसलिए सभी शुभ कार्यो में लग्न का बड़ा महत्त्व हैं।

लग्न की गणना के लिए इष्टकाल सूर्य के अंश लग्न सारणी का विचार किया जाता हैं।

कुण्डली बनाने में इष्टकाल एवं लग्न की गणना सूक्ष्म होनी चाहिए अन्यथा सारी गणनाएॅं गलत सिद्ध होगी। लग्न, कुण्डली का महत्त्वपूर्ण अंग हैं। गलत लग्न होने पर कुण्डली भी गलत बनेगी। 24 घण्टे में 12 लग्न होते हैं।

उदाहरण 1.

किसी बालक का जन्म 14 जनवरी 2004 को 3 बजकर 20 मिनिट सायंकाल को कोटा में हुआ, तो लग्न निकाले।

स्थान कोटा, जन्म समय 3:20 दोपहर

जन्म समय = 15:20 बजे 14 जनवरी 2004

सूर्योदय (कोटा) = 7:18 बजे

इष्टकाल = जन्म समय ग सूर्योदय

(घ०/मि०)

= 15:20 ग 7:18

= 8:02

इष्टकाल = 20/05

14 जनवरी 2004 = 08-29^0 – 04 – 10

लग्न सारणी से 8^0 पर सूर्योदय = 51/06

इष्टकाल +20/05

लग्न स्पष्ट 11/11

= 71/11

- 60/00

11/11

लग्न स्थिति

11/04 पर	10 पर अन्तर हैं 60 कला का	
11/17 पर	1 पर अन्तर है	
00/10 का	1 कक्ष	7 पर अन्तर हैं = 42 कला का

11/11

11/04

00/07 (अन्तर)

अतः लग्न स्थिति

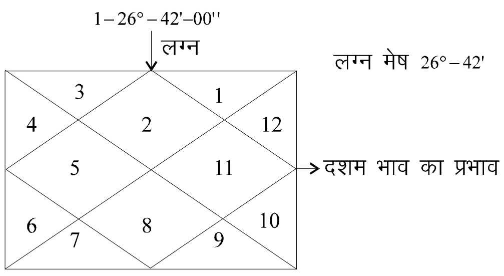

उदाहरण 2.

जन्म दिनांक 3 सितम्बर 2012 (03/09/2012) जन्म समय 3:00 प्रातःकाल इष्टकाल 51.57.30 (हमने ऊपर निकाला हुआ है।)

दिनांक 03/09/2012 के सूर्यांश 4 राशि 16 अंश 18 कला और 21 विकला हैं, लग्न सारणी से (बल्लभमनीराम पंचांग पेज 53 से) सूर्यांश के अनुपातक घटि पल प्राप्त कर इष्ट काल में जोड़े

	घटि		पल		विपल	
इष्ट कालग	51	-	57	-	30	
सूर्यांश के घटी पल (+)	26	-	12	-	00	जोड़ने पर
	78	-	09	-	30	
	60	-	00	-	00	(60 घटी घटायी)
(प्राप्त घटीपल)	18	-	09	-	30	

इन प्राप्त घटी पल के पुनः उसी लग्न सारणी में देखने पर लग्न के राशि अंश प्राप्त हुए।

18 घटी 09 पल पर लग्न 3 राशि 4 अंश

इस प्रकार लग्न कर्क राशि के 4^0-18-09 आया इससे लग्न कुण्डली बनाकर ग्रह के स्पष्ट मान से ग्रहो की स्थापना करने पर जन्म कुण्डली प्राप्त होगी।

इस प्रकार प्राप्त जन्म कुण्डली

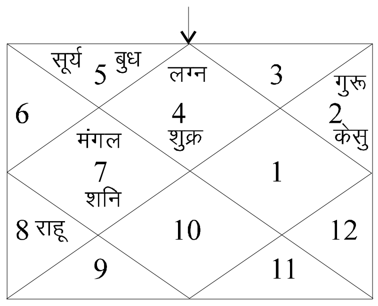

3.2.2 भयात और भभोग साधनग

यदि पंचांग अपने यहाँ का नहीं हो तो पंचांग के तिथि, नक्षत्र, योग और करण के घटी, पलों में देशान्तर संस्कार करके अपने स्थानगजहाँ की जन्मपत्री बनानी हो, वहाँ के नक्षत्र का मान निकाल लेना चाहिए।

यदि इष्टकाल से जन्मनक्षत्र के घटी, पल कम हों तो वह नक्षत्र गत और आगामी नक्षत्र जन्मनक्षत्र कहलाता है तथा जन्मनक्षत्र के घटी, पल इष्टकाल के घटी, पलों से अधिक हों तो जन्मनक्षत्र के पहले का नक्षत्र गत और वर्तमान नक्षत्र कहलाता हैं। गत नक्षत्र के घटी, पलों को 60 में से घटाने पर जो शेष आवे, उसे दो जगह रखना चाहिए तथा एक स्थान पर इष्टकाल को जोड़ देने से भयात् और दूसरे स्थान पर जन्मनक्षत्र जोड़ देने पर भभोग होता हैं।

नोट -

1) इष्टकाल ग इष्टकाल अधिक है तो जन्म नक्षत्र अगला होगा।

2) इष्टकाल ग इष्टकाल नक्षत्र के मान से कम है तो जन्म नक्षत्र वहीं होगा।

भभोग निकालने का तरीकाग

1) अगर नक्षत्र का मान इष्टकाल से कम हैं तो भभोग निकालने के लिए (60 घटी ग पूर्व नक्षत्र का मान + अगले नक्षत्र का मान जोड़ दें।) (नक्षत्र अगला माना जायेगा।)

2) अगर इष्टकाल के मान से उस दिन के नक्षत्र का मान अधिक हो तो 60 घटी में पिछले नक्षत्र का मान घटाये - इस नक्षत्र का मान जोड़ दें। नक्षत्र वर्तमान माना जायेगा। (60 - पिछला नक्षत्र + वर्तमान नक्षत्र)

भयात निकालने के लिए -

1) यदि इष्टकाल के मान से गत नक्षत्र का मान कम है तो इष्टकाल में से गत नक्षत्र को घटाने पर भयात प्राप्त होगा। (जन्म नक्षत्र अगला माना जायेगा।)

सूत्र भयात = इष्टकाल ग नक्षत्र का मान

2) अगर नक्षत्र का मान इष्टकाल के मान से अधिक है तो जन्म नक्षत्र वही माना जायेगा गत दिन के नक्षत्र को 60 घटि में से घटा कर इष्टकाल जोड़ने पर भयात प्राप्त होगा।

सूत्र

भयात = 60 घटी ग गत नक्षत्र का मान + इष्टकाल

= 60 ग गत नक्षत्र + इष्टकाल

नोट

जन्म तारीख पर यदि वर्तमान नक्षत्र गत नक्षत्र हो जाता है, तो भयात = इष्टकाल ग गत नक्षत्र होता हैं। अर्थात् इष्टकाल में से गत नक्षत्र को घटाने पर है। भयात् हो जाता हैं।

उदाहरण 3.

जन्म दिनांक 10 अगस्त 2003 जन्म समय 12 बजकर 40 मिनिट सायंकाल

सूर्योदय 6.02 बजे, भयात भभोग निकालो ?

जन्म समय ग सूर्योदय

घं.: मि.

जन्म समय = 12: 40

= - 06: 02

= 6: 38

´ $2^{1/2}$

इष्टकाल = 16/35 (घ० पल) प्राप्त हुआ।

गत नक्षत्र पू० षाढ़ा = 04/28 (घ० पल) तक

वर्तमान नक्षत्र उ० षाढ़ा = 01.53 (घ० पल) तक

गत नक्षत्र पू० षाढ़ा का मान इष्टकाल के मान से कम है अतः जन्म नक्षत्र हुआ उ० षाढ़ा

भयात = इष्टकाल ग गत नक्षत्र

= 16/35 - 4/28

भयात = 12/07 (घ० पल)

भभोग = 60 ग गत नक्षत्र का मान + अगला नक्षत्र

= 60 - 4/28 + 1/53

= 55/32 + 1/53

भभोग = 57/25 (घ० पल)

चरण = $\frac{57/25}{4}$

= 14/ 21/15 प्रथम चरण

= 28/ 42/ 30 द्वितीय चरण

= 43/ 03/ 45 तृतीय चरण

अतः नक्षत्र उ० षाढ़ा का प्रथम चरण का जन्म है।

उदाहरण 4.

जन्म दिनांक 10 अगस्त 2003 जन्म समय 6 बजकर 25 मिनिट प्रातःकाल सूर्योदय 6.02 भयात, भभोग निकालो ?

10/08/2003 वर्तमान नक्षत्र पूर्वाषाढ़ा = 4/28 घ० पल

09/08/2003 का गत नक्षत्र = 6/48 घ० पल

जन्म समय 6:25

सूर्योदय 6:02

इष्टकाल = 6:25 - 6:02

= 00:23 मि०

= $00:23 \times 2^{1/2}$

= 57 पल 30 विपल

भभोग = 60 ग गत नक्षत्र का मान + वर्तमान नक्षत्र

= 60 - 7.48 + 4.28

= 64.28 - 7.84

= 56.40

भभोग = 56 घ० 40 पल

प्रथम चरण = 14 घ० 10 पल

द्वितीय चरण = 28 घ० 20 पल

तृतीय चरण = 42 घ० 30 पल

भयात = 60 - गत नक्षत्र का मान + इष्टकाल

= 60 - 7.48 +

= 52.12 + 0.57.30

= 53 घ० 9 पल 30 विपल

अतः जातक का जन्म नक्षत्र पूर्वा षाढ़ा के चौथे चरण का हैं।

उदाहरण 5.

जन्म दिनांक 11 जुलाई 2003 समय 9:30 प्रातःकाल सूर्योदय 5:48 प्रातःकाल का भयात् भभोग ज्ञात करे ?

इष्टकाल (घ० मि०) = 9:30 - 5:48

= 3".42X2$^{1/2}$

इष्टकाल (घटी/पल) = 9:15

सौर स्पर्श = 2/24'/03'/07''(मिथुन राशी /24'/03'/07'')

इष्टकाल (घटी/पल) = 9:15

सूर्यांश का मान = 1624'/03'/07''11लग्न सिंह राशि के / पर है

लग्न = 25/26

लग्न स्पष्ट 4/11^{0}/55'

लग्न सिंह राशि के / पर है

लग्न 11^{0} -55

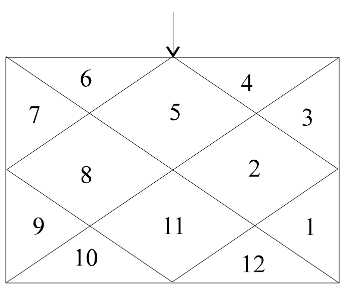

इष्टकाल ग 9/15

गत नक्षत्र ग अनुराधा 58/00

वर्तमान नक्षत्र ग ज्येष्ठा 52/33

भभोग = 60 - 58/00 + 52/33 = 54/33 प्रथम चरण 13/33/5

भयात = 60 - 58/00 + 9.15 = 2 + 9.15 = 11/15 द्वितीय चरण 27/03/30

जातक का जन्म ज्येष्ठा नक्षत्र के पहले चरण का होगा।

उदाहरण 6.

जातक का जन्म दिनांक 03/08/2003 इष्टकाल 14/26/53 सूर्योदय 05/57 भयात भभोत ज्ञात करे ?

वल्लभमनीराम पंचांग सेग

नक्षत्र	घटी/पल	घ./मि.	सूर्योदय घ./मि.
दिनांक 03/08/2003 हस्त	28/12	17/47	5/57
02/08/2003 पूर्व उ०फाल्गुनी	30/58	18/58	5/57

03/08/2003 जन्म दिनांक 28/12 + 1/22/30 स्टेण्डर्ड सूर्योदय 6.20

दिनांक 03/08/2003 सूर्योदय शेखावाटी (-) 5.57

वास्तविक मान रामगढ़ 28/34/30 0.33

पूर्व नक्षत्र 30/58 + 1/22/30 $2^{1/2}$

दिनांक 02/08/2003 01/22/30

वास्तविक मान रामगढ़ 32/20/30

कोटा सूर्यास्त 5/58

सूर्योदय रामगढ़ - 5/57

0/01

$2^{1/2}$

पूर्व नक्षत्र 32/20

\- 00/03

कोटा पूर्व नक्षत्र मान 32/17

इष्टकाल + $\underline{14^0 - 26'-53''}$

भयात 42^0 - 09'-53'' कोटा मे वर्तमान नक्षत्र का मान

अतः भयात =42^0 - 09'-53'' रामगढ़ का मान 29/34

भभोग 60^0 -000'-00''सूर्योदय का अन्तर ग 00/03

- 32^0 -17'-00''कोटा का मान 29/31

$\underline{+29^0 - -31'-00''}$

भभोग 57^0 - 41'-00''

भयात् 42^0 -09'-53'' एवं भभोग 55-57^0 -41'-00''प्राप्त हुआ हैं।

टिप्स:

1) यदि इष्टकाल का मान पंचांग में उस दिन के नक्षत्र के मान से कम हैं तो वह नक्षत्र जन्म नक्षत्र कहलाता हैं और उससे पहले का नक्षत्र गत नक्षत्र हैं।

2) यदि इष्टकाल का मान पंचांग के उस दिन के नक्षत्र मान से अधिक हैं तो वह नक्षत्र गत नक्षत्र कहलाता है। अगामी नक्षत्र जन्म नक्षत्र हैं।

3.2.3 चालनग चालन (धन + ऋण) साधनग

पंचांगों में प्रत्येक पक्ष (साप्ताहिक) इष्टकाल ग्रह स्पष्ट दिये रहते हैं। उनके नीचे की पंक्ति में दैनिक गति का मान दिया रहता हैं। पंचांग में दिए गए इन्हीं ग्रहों में से अभीष्ट काल के ग्रह स्पष्ट करने को ग्रह साधन कहा जाता हैं। पंचांग में साप्ताहिक ग्रह स्पष्ट की पंक्ति दी होती हैं। उसी के अनुसार यदि अपने इस समय से आगे की प पंक्ति होती हो, तो पंक्ति की गणना रविवार से शुरू की गई हैं। अर्थात् रविवार की संख्या 1, सोमवार की संख्या 2, मंगलवार की संख्या 3, बुधवार की संख्या 4, गुरूवार की संख्या 5, शुक्रवार की संख्या 6, शनिवार की संख्या 7 आदि से घटि पलों में से इष्टकाल की घटी पल घटाने से शेष तुल्य ऋण चालन होता हैं। यदि पंक्ति पीछे की हो और इष्टकाल आगे का हो, तो इष्टकाल के वार, घटी, पलों में से पंक्ति के वार घटी, पलों को घटाने पर जो मान प्राप्त होता हैं। उसे धन चालन कहते हैं। इस ऋण व धन चालन को पंचांग में दी गई ग्रह गति से गुणा करने पर जो अंश आदि आये उसे उन्हें धन या ऋण चालन के अनुसार पंचांग में दिये गये ग्रह मान मं जोड़ने या घटाने पर स्पष्ट ग्रह आते हैं।

राहु और केतु वक्री ग्रह कहलाते हैं। इनके लिए हमेशा ऋण चालन में प्राप्त अंशादि फल को जोड़ने और धन चालन से प्राप्त अंशादि फल को घटाने से जो मान प्राप्त होता हैं। वहीं उसका स्पष्ट मान होता हैं।

उदाहरणग (चालन)

जन्म दिनांक 03 सितम्बर 2012 जन्म समय 3:00 प्राप्तः काल इष्टकाल 51.57.30

पंचांग में पंक्तिस्थ कुण्डली की तारीख 1 सितम्बर 2012 तथा इष्ट 00.00 पल दिया हुआ है। अपनी जन्म तारीख से पंक्तिस्थ कुण्डली की तारीख पीछे होने की वजह से चालन की गति धनात्मक (+) रहेगी। इन दोनों तारीखों व इष्टो का अन्तर हमारा वह चालन होगा, जिससे हम सभी ग्रहों को स्पष्ट करेंगे।

	दिन	इष्ट	घटी	पल
जन्म	3	51	57	30
पंक्तिस्थग	1	00	00	00
चालन	+2	51	57	30

उदाहरणग

(बल्लभबलीराम के अनुसार)

जन्म दिनांक 14 नवम्बर 2012, जन्म सयम 6:00 सायंकाल

जन्म समय इष्टकाल = 31/30 चालन ज्ञात करें ?

पंचांग में पंक्तिस्थ कुण्डली की तारीख 17 नवम्बर 2012 दे रखी है तथा वहीं पर ही पंक्तिस्थ कुण्डली की इष्टघटी 00 घटी 00 पल दे रखी है। इस प्रकार हमारी जन्म तारीख पंक्तिस्थ तारीख से पीछे पड़ रही हैं। अतः हमें पंक्तिस्थ कुण्डली से ग्रह स्पष्ट करने के लिए पीछे चलना पड़ेगा। अतः चालन (ग) ऋणात्मक रहेगा और अपनी जन्म तारीख और इष्ट को पंक्तिस्थ तारीख और इष्ट पर घटाने पर जो मान आयेगा। वह चालन होगा जिससे हम ग्रह स्पष्ट करेगें।

दिन	इष्ट	घ०	पल
17 /	00 /	00 /	00 ग पंक्तिस्थ
14 /	31 /	30 /	00 ग जन्म

चालन - (-) 02/28/30/00

3.2.4 ग्रह स्पष्ट

इष्टकाल से कुण्डली बनाने के पश्चात् उसके ग्रह स्पष्ट कर लेना चाहिए। फलादेश ठीक तभी होगा जब ग्रहों का सही स्पष्ट मान प्राप्त होगा। यहां पर ग्रहस्पष्टीकरण का तात्पर्य ग्रहों के राश्यादि मान से हैं।

प्रत्येक जन्म कुण्डली में जन्म लग्न चक्र के पूर्व ग्रह स्पष्ट चक्र लिखना आवश्यक होता हैं। सूर्य, मंगल, बुध, गुरू, शुक्र, शनि, राहु व केतु की ग्रह स्पष्ट करने की विधि एक समान होती हैं। जबकि चन्द्रमां के ग्रह स्पष्ट करने की विधि अगल होती हैं। यह विधि इकाई में दी गई हैं।

पंचांगों में ग्रह स्पष्ट दिया जाता हैं। लेकिन कहीं तरह के पंचांगो में विविध प्रकार से ग्रह स्पष्ट की विधि दे रखी हैं जैसे किसी में अष्टमी, अमावस्या और पूर्णिमा की पंक्ति रहती हैं और किसी पंचांग में

प्रातःकालिन या सूर्योदय कालिन। इष्टकाल या सूर्योदय कालिन ग्रह स्पष्ट की पंक्ति दी जाती हैं। उसके अनुसार दैनिक गति (दो दिन के ग्रहों का अन्तर करने पर दैनिक गति आती हैं) को गति से गुणा कर 60 का भाग देने से जो अंश, कला, विकला आये उसे मिश्र मान कालिन या सूर्योदय कालिन ग्रह स्पष्ट पंक्ति में ऋण या धन करने पर इष्ट कालिन ग्रह स्पष्ट प्राप्त होते हैं।

हम भयात्भभोग के द्वारा चन्द्रस्पष्ट कर चुके है। इसलिए यहाँ पर हम चन्द्रस्पष्ट को छोड़कर बाकी सभी ग्रहों को स्पष्ट करेगें। हम पूर्व के चालन में दिये गये उदाहरण से ही ग्रह स्पष्ट करते हैं।

उदाहरण -

जन्म दिनांक 3 सितम्बर 2012 चालन ज्ञात करेंगे।

दिन इष्ट घ० पल

चालन = (+) 2 / 51 / 57 / 30

	पं. श द्वि. भा कृ. 1 श. इष्टघटी 0/00							
	सू.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.	रा.	के.
राशि	4	6	4	1	2	6	7	1
अंश	14	11	5	20	29	02	6	6
कला	58	22	47	31	50	22	00	00
विकला	11	21	25	50	30	48	12	12
गति	58	39	117	6	63	5	3	3
कला	04	12	09	5	41	41	11	11

सूत्रः

चालन में दिये गये दिन की गति से गुणा करके कला विकला से जोड़ा जाता हैं।

चालन दिन ′ ग्रह गति = कला विकला

इष्ट में गति करके 60 का भाग लगाया जाता हैं। जो मान आता हैं। उसे सम्बन्धित ग्रह के कला विकला में चालन के अनुसार (+) धन या ऋण (-) कर दिया जाता हैं।

नोट:

वक्री ग्रह की गति चालन की गति से विपरित होती हैं। यदि चालन धनात्मक (+) हैं तो वक्री ग्रह में (-) ऋणात्मक चालन की गति हो जायेगा।

ग्रह स्पष्टः

सूत्रः

	+ 03° – 04'–00"	
शुक्र स्पष्ट	03 – 02° – 54'–30"	
शनि	06 – 02° – 22'–48"	
	+ 17'–12"	
शनि स्पष्ट	06 – 02° – 40'–00"	
राहु	07 – 06° – 00'–12"	(वक्री ग्रह की चालन गति विपरीत)
	– 09'–08"	
राहु स्पष्ट	07 – 05° – 51'–04"	
केतु स्पष्ट	01 – 05° – 51'–04"	

उदहारण 2

जन्म दिनांक 5/10/2012 जन्म के समय दोपहर 12 बजकर 6 मिनिट जन्म स्थ कोटा इष्टकाल 14 घटी 17 पल 30 विपल

सूर्य गति = 59'/10"

$$= \frac{\text{इष्ट} \times \text{ग्रहगति}}{60} = \text{मान (कला/विकला)}$$

$$= \frac{14'/18'' \times 59'/10''}{60} = 13 \text{ कला } 46 \text{ विकला}$$

05/18°/10/15'
\+ 13/46"

सूर्य स्पष्ट 05/18°/24'/01"

मंगल गति = 42 कला 19 विकला

$$= \frac{14'/18'' \times 42'/19''}{60} = 9 \text{ कला } 48 \text{ विकला}$$

07/04°/28'/35"
\+ 09'/48"

मंगल स्पष्ट 07/04°/38'/23"

बुध गति = 89'/13"

$$= \frac{14'/18'' \times 89'/13''}{60} = 20 \text{ कला } 46 \text{ विकला}$$

06/05°/22''/26'

\+ 20''/46'

बुध स्पष्ट 06/05°/43''/12'

गुरू गति = 0'/13''

$= \frac{14'/18'' \times 00'/13''}{60}$ = 0 कला 18 विकला

01/22°/18'/48''

− 18''

गुरू स्पष्ट 01/22°/18'/30''

शुक्र की गति = 01°/10'/06''

$= \frac{14'/18'' \times 70'/06''}{60}$ = 16 कला 20 विकला

04/07°/55'/15''

\+ 16'/20''

शुक्र स्पष्ट 04/08°/11'/35''

शनि की गति $= \frac{14'/18'' \times 07'/03''}{60}$ = 01 कला 20 विकला

06/06°/01'/48''

\+ 01'/20''

शनि स्पष्ट 06/06°/03'/08''

राहु की गति $= \frac{14'/18'' \times 03'/11''}{60}$ = 00 कला 42 विकला

07/04°/12'/03''

− 42''

राहु स्पष्ट 07/04°/11'/21''

केतु स्पष्ट 01/04°/11'/21''

चालन दि./घ./पल

05/14/18 जन्म कालीन

\+ 05/00/00 पंक्तिस्थ

पं.आ.कृ. 5 शु. इष्ट घटि 00/00								
राशि	सू.	मं.	बु.	गु.	शु.	शनि	राहु	केतु
राशि	5	7	6	1	4	6	7	1
अंश	18	04	05	22	7	6	4	4
कला	10	28	22	18	55	1	12	12
विकला	15	35	26	48	15	48	3	3
गति	59	42	89	0	70	7	3	3
कला	10	19	13	13	6	2	11	11

उदाहरण – 3

दिनांक 13/07/2009 समय 9 बजकर 45 मिनिट रात्रि इष्ट 39 घटी 47 पल 30 विपल स्थान कोटा

सूर्य गति = 57'/14''

$$= \frac{39'/48''\times 57'/14''}{60}$$

$$= \frac{2388''\times 3434''}{60}$$

= 37'/58''

रा. अं. क. वि.

सूर्य 02/26°/47'/09''

\+ 37'/58''

सूर्य स्पष्ट 02/27°/25'/07''

मंगल की गति = 42'/12''

$$= \frac{39°/48''\times 42°/12''}{60}$$

$$= \frac{2388''\times 2532''}{60}$$

$$= \frac{6046416''}{60}$$

$= 28'/00''$ (कला विकला)

	01/06°/40'/33''
	+ 28'/00''
मंगल स्पष्ट	01/07°/08'/33''
बुध की गति	= 129'/38''
	$= \frac{39'/48'' \times 129'/38''}{60}$
	$= \frac{2388'' \times 7816''}{60}$
	= 01°/26'/25''
	02/25°/29'/35''
	+ 01°/26'/25''
बुध स्पष्ट	02/26°/56'/00''
गुरू की गति	= 05'/07''
	$= \frac{39'/48'' \times 05'/17''}{60}$
	$= \frac{2388'' \times 307''}{60}$
	= 03'/24''
	10/01°/50'/55''
	− 03'/24''
गुरू स्पष्ट	10/01°/47'/31''
शुक्र की गति	= 66'/55''
	$= \frac{39'/48'' \times 66'/55''}{60}$
	$= \frac{2388'' \times 4015''}{60}$
	= 44'/23''
	01/14°/17'/16''
	+ 44'/23''
शुक्र स्पष्ट	01/15°/01'/39''

शनि की गति = 05'/11''

$$= \frac{39'/48'' \times 05'/11''}{60}$$

$$= \frac{2388'' \times 311''}{60}$$

= 03'/26''

	04/23°/43'/07''
+	03'/26''
शनि स्पष्ट	04/23°/46'/33''

राहु की गति = 03'/11''

$$= \frac{39'/48'' \times 03'/11''}{60}$$

$$= \frac{2388'' \times 191''}{60}$$

= 02'/07''

	09/06°/44'/01''
−	02'/07''
राहु स्पष्ट	09/06°/41'/54''
केतु स्पष्ट	03/06°/41'/54''

चालन दि. घ. प.

13 / 39 / 48 जन्म कालीन

\+ 13 / 00 / 00 पंक्तिस्थ

00 / 39 / 48 चालन

पं श्रा. कृ. 6 सो. इष्ट घटी 00 / 00								
	सूर्य	मंगल	बुध	गुरू	शुक्र	शनि	राहु	केतु
राशि	2	1	2	10	1	4	9	3
अंश	26	6	25	1	14	23	6	6
कला	47	40	29	50	17	43	44	44
विकला	9	33	35	55	16	7	1	0
गति	47	42	129	5	66	5	3	1
कला	14	12	39	7	55	11	11	11

लग्न सारणी -

श्रीगणेशायनमः ॥ अथ लग्नसारिणी अयनांशाः २४ चरखंडाः ६३।५१।२१ अक्षप्रभाः ६।२३ अक्षांशाः २८।०

राशयः	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
मेष	२	२	३	३	३	३	३	३	३	३	४	४	४	४	४	४	४	५	५	५	५	५	५	५	६	६	६	६	६	६
०	५२	५९	६	१३	२०	२७	३५	४३	५१	५९	८	१६	२४	३२	४१	४९	५७	५	१४	२२	३०	३९	४७	५५	३	१२	२०	२८	३६	४५
वृषभ	६	७	७	७	७	७	७	७	८	८	८	८	८	८	९	९	९	९	९	९	१०	१०	१०	१०	१०	१०	११	११	११	११
१	५३	१	९	१८	२६	३४	४३	५३	३	१३	२३	३३	४३	५३	३	१३	२३	३३	४३	५३	३	१४	२४	३४	४४	५४	४	१४	२४	३४
मिथुन	११	११	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१३	१३	१३	१३	४३	१४	१४	१४	१४	१४	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१६	१६	१६	१६	१६	१७
२	४४	५४	४	१४	२४	३४	४५	५६	७	१९	३०	४२	५३	५	१६	२८	३९	५१	२.	१४	२५	३७	४८	५९	११	२२	३४	४५	५७	८
कर्क	१७	१७	१७	१७	१८	१८	१८	१८	१८	१९	१९	१९	१९	१९	२०	२०	२०	२०	२०	२१	२१	२१	२१	२१	२१	२२	२२	२२	२२	२२
३	२०	३१	४३	५४	६	१७	२९	४०	५२	४	१५	२७	३९	५०	२	१४	२५	३७	४९	०	१२	२४	३५	४७	५९	१०	२२	३४	४५	५७
सिंह	२३	२३	२३	२३	२३	२४	२४	२४	२४	२४	२५	२५	२५	२५	२५	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२७	२७	२७	२७	२७	२८	२८	२८	२८
४	९	२०	३२	४४	५५	७	१९	३०	४१	५३	४	१५	२७	३८	४९	१	१२	२४	३५	४६	५८	९	२०	३२	४३	५४	६	१७	२९	४०
कन्या	२८	२९	२९	२९	२९	२९	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३१	३१	३१	३१	३१	३२	३२	३२	३२	३२	३३	३३	३३	३३	३३	३३	३४	३४
५	५१	३	१४	२५	३७	४८	०	११	२२	३४	४५	५६	८	१९	३०	४२	५३	५	१६	२७	३९	५०	१	१३	२४	३५	४७	५८	१०	२१
तुला	३४	३४	३४	३५	३५	३५	३५	३५	३६	३६	३६	३६	३६	३७	३७	३७	३७	३७	३८	३८	३८	३८	३८	३८	३९	३९	३९	३९	३९	४०
६	३२	४४	५५	६	१८	२९	४१	५२	४	१६	२७	३९	५१	२	१४	२६	३७	४९	१	१२	२४	३६	४७	५९	११	२२	३४	४६	५७	९
वृश्चिक	४०	४०	४०	४०	४१	४१	४१	४१	४१	४२	४२	४२	४२	४२	४३	४३	४३	४३	४३	४४	४४	४४	४४	४४	४४	४५	४५	४५	४५	४५
७	२१	३२	४४	५६	७	१९	३१	४२	५३	५	१६	२८	३९	५१	२	१४	२५	३७	४८	०	११	२३	३४	४५	५७	८	२०	३१	४३	५४
धनु	४६	४६	४६	४६	४६	४७	४७	४७	४७	४७	४७	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४९	४९	४९	४९	४९	४९	५०	५०	५०	५०	५०	५०	५१
८	६	१७	२९	४०	५२	३	१५	२५	३५	४५	५५	५	१५	२५	३५	४५	५५	५	१५	२५	३५	४५	५५	६	१६	२६	३६	४६	५६	६
मकर	५१	५१	५१	५१	५१	५२	५२	५२	५२	५२	५२	५२	५३	५३	५३	५३	५३	५३	५३	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५५	५५	५५	५५
९	१६	२६	३६	४६	५६	६	१७	२५	३३	४१	५०	५८	६	१४	२३	३१	३९	४७	५६	४	१२	२१	२९	३७	४५	५४	२	१०	१८	२७
कुंभ	५५	५५	५५	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५७	५७	५७	५७	५७	५७	५७	५७	५७	५८	५८	५८	५८	५८	५८	५८	५८	५९	५९
१०	३५	४३	५१	०	८	१६	२५	३२	३९	४६	५३	०	८	१५	२२	२९	३६	४३	५१	५८	५	१२	१९	२६	३४	४१	४८	५५	२	९
मीन	५९	५९	५९	५९	५९	५९	०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	१	२	२	२	२	२	२	२
११	१७	२४	३१	३८	४५	५२	०	७	१४	२१	२८	३५	४३	५०	५७	४	११	१८	२६	३३	४०	४७	५४	३	९	१६	२३	३०	३७	४५

नोट – छात्रों की सुविधा के लिये लग्न सारणी में लिखे गये हिन्दी के अंकों को निम्न प्रकार से अंगेजी के अंकों को समझे

¼1-1] 2-2] 3-3] 4-4] 5-5] 6-6] 7-7] 8-8] 9-9½

3.3 सारांश

इस इकाई के द्वारा जन्म कुण्डली में इष्टकाल से इस प्रकार कुण्डली का निर्माण किया गया हैं कि चन्द्र स्पष्ट एवं चन्द्र गति द्वारा भयात्गभभोग उदाहरण सहित जानकारी प्रस्तुत की गई हैं और इस इकाई में यह समझाने का प्रयास किया गया हैं कि ग्रह स्पष्ट एवं चालन किस प्रकार किया जाता हैं उदाहरण सहित जानकारी दी गई हैं।

3.4 अभ्यास प्रश्न

1 ग्रह स्पष्ट करने का सूत्र बताइये?

2 चालान साधन का सूत्र बताइये?

उत्तर दिन × ग्रह गति

3 भयात का सूत्र बताइये?

उत्तर भयातग60 घटी ग गत नक्षत्र का मान ग इष्टकाल

4 भभोग का सूत्र बताइये?

उत्तर 60ग घटीगपूर्व नक्षत्र का मान + अगला नक्षत्र का मान

5 चालन का सूत्र बताइये?

उत्तर चालन में दिए गए दिन की गति से गुणा करके कलागविकला से जोड़ा जाता हैं।

चालन दिन × ग्रह गति +कलागविकला

निबन्धात्मक प्रश्न

1 जन्म दिनांक 11 जुलाई 2003 जन्म समय 9:30 सुबह का भयातगभभोग ज्ञात करें?

2 जन्म दिनांक 03/09/2012 जन्म समय 3:00 सुबह के ग्रह स्पष्ट ज्ञात करों?

3.6 संदर्भ ग्रंथ सूची

नेमीचन्द्र शास्त्री

बल्लभमनीराम

लेखकः- श्रीमती विजयलक्ष्मी शर्मा

कनिष्ठ लिपिक वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

इकाई - 4

लग्नस्पष्ट साधन, भुक्त-भोग्य साधन

इकाई की रूपरेखा

4.0 प्रस्तावना
4.1 उद्देश्य
4.2 विषय प्रवेश
4.2.1 सूर्य के अनुसार लग्न की जानकारी
4.2.2 चन्द्र गति साधन
4.2.3 चन्द्र स्पष्ट साधन
4.2.4 भुक्त-भोग्य प्रकार
4.2.5 विंशोन्तरी दशा
4.2.6 महादशा में अर्न्तदशा
4.2.7 ग्रह दशा जानने की विधि
4.3 सारांश
4.4 शब्दावली
4.5 अभ्यास प्रश्न
4.6 संदर्भ ग्रंथ सूची

4.0 प्रस्तावना

जिस इष्टकाल की जन्म पत्रिका बनानी हो उसके ग्रह स्पष्ट करना अति आवश्यक हैं क्योंकि ग्रहों के स्पष्ट मान की जानकारी के बिना अन्य फलादेश ठीक नहीं हो पाते हैं। ग्रह स्पष्ट करने का तात्पर्य राशियादि मान से हैं। दूसरी बात यह हैं कि कुण्डली के द्वादश भावों में ग्रहों का स्थापन, ग्रहमान, राशियादि ग्रह ज्ञात हो जाने पर किया जा सकता हैं। अतएव प्रत्येक जन्म कुण्डली में जन्मांग चक्र के पूर्व ग्रह स्पष्ट चक्र लिखना अनिवार्य हैं। चन्द्रमां को छोड़कर शेष आठ ग्रहों को स्पष्ट करने की विधि एक-सी हैं।

लेकिन चन्द्रमां को स्पष्ट करने की विधि अलग हैं। अन्य ग्रहों की गति पंचांग में लिखीं रहती हैं। चन्द्रमां की गति एवं स्पष्ट निकालनें की विधि अन्य ग्रहों की विधि से अलग हैं।

अतः चन्द्रमां की गति एवं स्पष्ट करने की विधि का अध्ययन इस ईकाई में स्पष्ट किया गया। पूर्व ईकाईयों में लग्न निकालना अन्य ग्रहों का स्पष्ट करना भयात्-भभोग निकालनें के बारे में स्पष्ट किया जा चुका हैं। इस अध्याय में भयात्-भभोग (मुक्त-भोग्य) के आधार पर चन्द्र गति एवं स्पष्ट निकालनें की विधियों का अध्ययन किया गया हैं।

4.1 उद्देश्य

उस ईकाई में छात्रों को चन्द्र ग्रह की गति एवं स्पष्ट करना सुगम पद्धति द्वारा समझाया गया हैं। अन्य ग्रहों की गति एवं स्पष्ट करने की विधि चन्द्र गति व स्पष्ट करने से भिन्न हैं अतः उसका भिन्नता को स्पष्ट करना बताया गया हैं।

4.2 विषय प्रवेश

इस इकाई 4 में लग्न साधन, चन्द्र साधन कर भुक्त-भोग्य प्रकार से विंशोन्तरी दशा एवं अर्न्तदशा को विस्तार से समझाया जा रहा हैं-

4.2.1 सूर्य के अनुसार लग्न की जानकारी

जन्म के समय पूर्वी क्षितिज पर सूर्य जिस भी राशी में उदय होता है वह उस जातक का जन्म लग्न होगा।

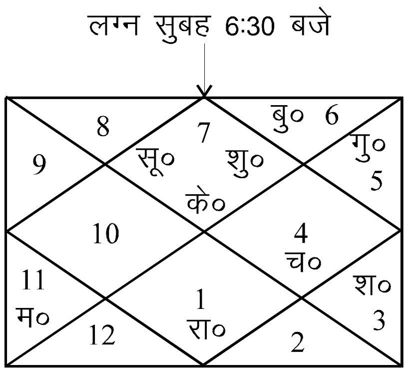

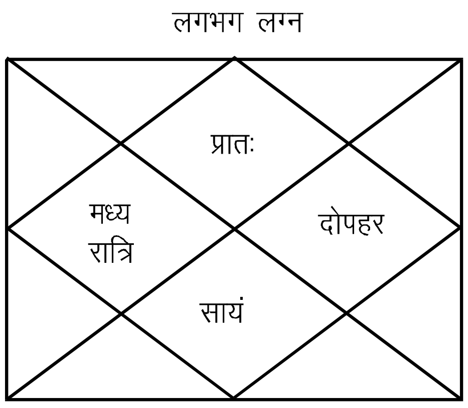

सूर्योदय सुबह 6:30 बजे - सुबह का लग्न ''तुला''

दोपहर का लग्न ''मकर''

सायं का लग्न ''मेष''

रात्रि का लग्न ''कर्क''

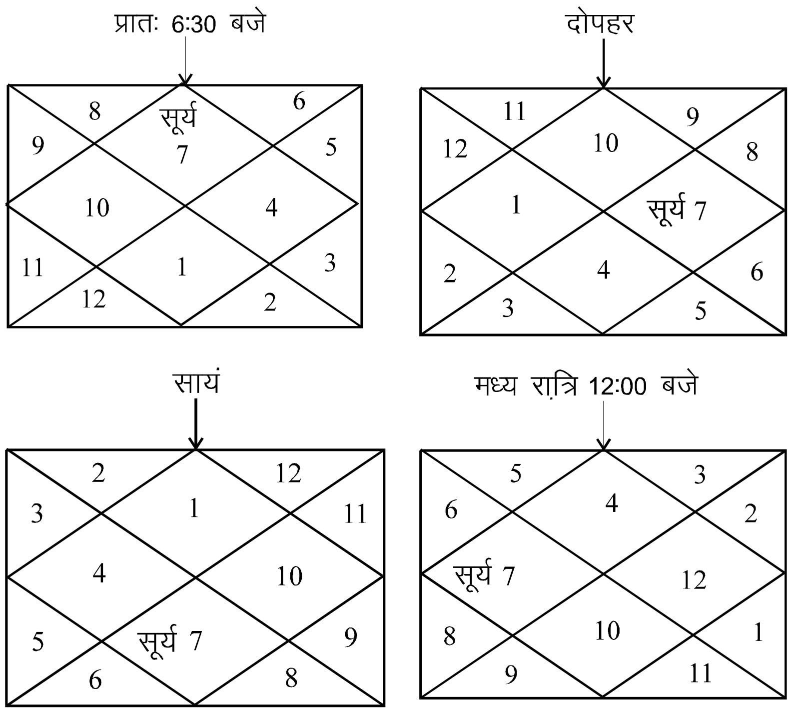

4.2.2 चन्द्र गति साधन:-

एक नक्षत्र के कलात्मक मान को 3600 पल से गुणा करके पलात्मक भभोग का भाग देने पर चन्द्र गति प्राप्त होती हैं। वह चन्द्र गति पलात्मक होगी।

चन्द्र स्पष्ट

एक नक्षत्र का मान $= 13^0 -20'$

$= 13X60'+20'$

$= 780'+20'$

$= 800$

पूर्व भभोग = एक नक्षत्र का मान = (कला)

चन्द्र गति साधन = $\frac{800x3600 \text{ पल}}{\text{भभोग पल}}$

= चन्द्र गति (कला विकला में)

4.2.3 चन्द्र स्पष्ट

भयात् पलात्मक को 40 से गुणा करने पर जो मान आये उसमें तिगुनें पलात्मक भभोग का भाग देने पर जो पलात्मक मान प्राप्त होगा। उसको राशि अंश कला, विकला में परिवर्तित करके गत नक्षत्र की क्रम संख्या को नक्षत्र के मान 800 कला से गुणा करने पर जो राशि अंश कला विकला आए उसमें जोड़ देने पर चन्द्र स्पष्ट होगा।

चन्द्र स्पष्ट करने के लिए पहले षष्ठि प्रमाण भुक्ति (वर्तमान नक्षत्र की) निकालनी होती है। भभोग की घटियां कमी 60 से कम कभी 60 से अधिक होती हैं तथा 60 घटि की अनुपातिक घटियां भभात की कितनी होती हैं। इसे निकालना पड़ता हैं। इसी को ''षष्ठि प्रमाण भुक्ति'' कहते हैं अर्थात् पूर्ण भभोग में 60 घटि तो भयात में कितनी अनुपातिक घटियां होगी या सम्पूर्ण भभोग को 60 घटि के बराबर माना जाए तो भयात् को कितनी घटि के बराबर मानना पड़ेगा।

भयात गतघटी पर चद्र सारणी

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
0	0	0	0	0	0	0	0	0	0
0	0	0	0	0	1	1	1	2	2
13	26	40	53	6	20	33	46	0	1
20	40	0	20	40	0	20	40	0	20
11	12	13	14	15	16	17	18	19	20
0	0	0	0	0	0	0	0	0	0
2	2	2	3	3	3	3	4	4	4
26	40	53	6	20	33	46	0	13	26
40	0	20	40	0	20	40	0	20	40
21	22	23	24	25	26	27	28	29	30
0	0	0	0	0	0	0	0	0	0
4	4	5	5	5	5	6	6	6	6
40	53	6	20	33	46	0	13	26	40
0	20	40	0	20	40	0	20	40	0
31	32	33	34	35	36	37	38	39	40
0	0	0	0	0	0	0	0	0	0

6	7	7	7	7	8	8	8	8	8
53	6	20	33	46	0	13	26	40	53
20	40	0	20	40	0	20	40	0	20
41	42	43	44	45	46	47	48	49	50
0	0	0	0	0	0	0	0	0	0
9	9	9	9	10	10	10	10	10	11
6	20	33	46	0	13	26	40	53	6
40	0	20	40	0	20	40	0	20	40
51	52	53	54	55	56	57	58	59	60
0	0	0	0	0	0	0	0	0	0
11	11	11	12	12	12	12	12	13	13
20	33	46	0	13	26	40	53	6	20
0	20	40	0	20	40	0	20	40	0

सर्वर्क्ष पर गति बोधक स्पष्ट सारणी

54	55	56	57	58	59	60
888	872	857	842	827	813	800
48	40	8	6	34	33	0
61	62	63	64	65	66	67
786	774	761	750	738	727	716
54	12	57	0	30	18	28

उदाहरण 1

जन्म समय 10:15 बजे सुबह दिनांक 2/11/2003 स्थान कोटा सूर्योदय 6:39 बजे भयात भभोग व चन्द्र गति ज्ञात करें।

वर्तमान नक्षत्र = धनिष्ठा

सूर्योदय का समय अन्तर

दिया गया सूर्योदय का समय 6: 39

पंचांग का सूर्योदय समय - 6: 30

0/09 (मिनिट)

× $2^{1/2}$

22/30 (घटी/पल)

घ0 प0 वि0

(सुबह 6:30 बजे) 49/35/00

नक्षत्र मान का अन्तर - 22/30

धनिष्टा का मान 49/12/30

सुबह (6:39 बजे)

गत नक्षत्र श्रवण का मान 48/15/00 (-) 22/20 = 47/52/30 (घ0 प0 वि0)

भुक्तकाल (भयात = 60 - गत नक्षत्र + इष्ट काल + इष्ट काल)

इष्टकाल = 10:15 – 6:39

(घ0 मि0) = 3'':36''

इष्टकाल = 9/00 (घ0 प0)

भयात = 60 - गत नक्षत्र + इष्टकाल

= 60 - 47/52/30 + 9/00/00

= 12/07/30 +9/00/00

= 21: 07: 30 (घ0 प0 वि0)

= 1260 + 7 = 1267 60 + 30 = 76050 (वि0)

भभोग = 60 - गत नक्षत्र + वर्तमान नक्षत्र

= 12/07/30 + 49/12/30

(घ0/प0/वि0)

= 61/20/00

= 61 - 20 60

= 3660 + 20

= 3680 पल 60

= 220800 विपल

चन्द्र गति = $\frac{3600X800}{3680}$

= $\frac{10800}{23}$

= 782 पल 36 विपल

चन्द्र गति = 13^0-02-36''

चन्द्र साधन

चन्द्र स्पष्ट करने के लिए पहले षष्टि प्रमाण भुक्ति (वर्तमान नक्षत्र की) निकालनी होती हैं। भभोग की घटियां कमी 60 से कम कभी 60 से अधिक होती हैं तथा 60 घटि की अनुपातिक घटियां भयात की कितनी होती हैं। इसे निकालना पड़ता हैं। इसी को ''षष्टि प्रमाण भुक्ति'' कहते हैं अर्थात् पूर्ण भभोग में 60 घटि तो भयात् में कितनी अनुपातिक घटियां होगी या सम्पूर्ण भभोग को 60 घटि के बराबर माना जाये तो भयात् को कितनी घटि के बराबर मानना पड़ेगा।

सूत्र = $\frac{\text{भयात X 60}}{\text{भभोग}}$

= षष्ठि प्रमाण भुक्ति

या = $\frac{\text{भयात X 60}}{\text{पलात्मक भभोग}}$

1) चन्द्र साधन सूत्र = $\frac{\text{(गत नक्षत्र की षष्ठि प्रमाण भुक्ति + वर्तमान नक्षत्र की षष्ठी प्रमाण भुक्ति) X 2}}{9}$

= चन्द्र स्पष्ट

2) सूत्र = = $\frac{\text{भयात X 40}}{\text{भभोग X 3}}$

= वर्तमान नक्षत्र के चन्द्र स्पष्ट

इसमें गत नक्षत्रों की संख्या का चन्द्र स्पष्ट जोड़ दे तो चन्द्र स्पष्ट हो जायेगा।

$$\text{वर्तमान नक्षत्र स्पष्ट} = \frac{21/07/30 \times 40}{61/20 \times 3} \text{ (कला में)} \quad \text{भयात} = 21/07/30$$

$$= \frac{76050 \times 40}{3680 \times 3 \times 60} \text{ (अंश में)} \quad \text{भभोग} = 61/20$$

$$= 4^\circ - 35' - 32''$$

गत नक्षत्र का मान (श्रवण 22वां नक्षत्र) → $9 - 23^\circ - 20' - 00''$

$+ \quad 4^\circ - 35' - 32''$

चन्द्र स्पष्ट → $9 - 27^\circ - 55' - 32''$

7

नक्षत्र के अनुसार चन्द्र स्पष्ट करने के लिए इस सारणी को देखें। अगर किसी जातक का जन्म अश्विनी नक्षत्र के अंत में होता हैं तो इस सारणी के अनुसार चन्द्र स्पष्ट 0 राशि 13 अंश 20 कला 0 विकला लिखेंगे।

नक्षत्रोंपरि स्पष्ट राशियादि चन्द्र सारणी

1	2	3	4	5	6	7	8	9
अश्वि.	भरणी	कृति.	रोहि.	मृग.	आर्द्रा	पुर्न.	पुष्य	आश्लेषा
0	0	1	1	2	2	3	3	4
13	26	10	23	6	20	3	16	0
20	40	0	20	40	0	20	40	0
0	0	0	0	0	0	0	0	0
10	11	12	13	14	15	16	17	18
मघा	पू.फा.	उ.फा	हस्त	चित्रा	स्वाति	विशा.	अनुरा.	ज्येष्ठा
4	4	5	5	6	6	7	7	8
13	26	10	23	6	20	3	16	0
20	40	0	20	40	0	20	40	0
0	0	0	0	0	0	0	0	0
19	20	21	22	23	24	25	26	27
मूल	पू.षा.	उ.षा.	श्रवण	धनि.	शतभि.	पू.भा.	उ.भा.	रेवती

8	8	9	9	100	10	11	11	12
13	26	10	23	6	20	3	16	0
20	40	0	20	40	0	20	40	0
0	0	0	0	0	0	0	0	0

4.2.4 विशोन्तरी दशा

विंशोन्तरी महादशा में भुक्त-भोग्य साधन

सूत्र

विंशोन्तरी महादशा का भुक्त निकालने के लिए ग्रह की दशा वर्ष को भयात् से गुणा करके उसमें भभोग का भाग दिया जाता हैं।

सूत्र

$$\text{भुक्त} = \frac{\text{दशा वर्ष X भयात}}{\text{भभोग}}$$

भोग्य = दशा वर्ष - भुक्त

नक्षत्र का वह मान जो भुक्त या बीत चुका होता उसे हम गत नक्षत्र कहते हैं और नक्षत्र वर्तमान होता हैं उसे हम जन्म नक्षत्र कहते हैं। विशोन्तरी दशा में सर्वप्रथम जन्म नक्षत्र के विशोन्तरी दशा अनुसारेण स्वामी ग्रह की दशा होती हैं। फिर क्रमशः अन्य ग्रहों की दशा होती हैं। जन्म नक्षत्र का वह भाग जो बीत जाता हैं, दशा वर्ष में उतना मान निकाल लिया जाता हैं और जो शेष भोगना बाकी हैं। उसमें ग्रह, दशा व वर्ष का मान जोड़ा जाता हैं। अतः भुक्त भोग्य निकालने की आवश्यकता पड़ती हैं।

विशोन्तरी महादशा के भुक्त-भोग्य साधन जन्म समय जन्म समय जो विशोन्तरी दशा चल रही हैं उसके पूर्ण वर्ष में से कितने वर्ष जन्म के पूर्व भुक्त हो चुके हैं और कितने वर्ष अब भोगना शेष हैं। इसके जानने की गणितात्मक विधि यह हैं कि जिस नक्षत्र में जन्म हुआ हैं उस नक्षत्र का योग काल और भुक्त काल निकाल लें और उन दोनों के घटी पल को एक वर्ण बनाकर भयात् (भुक्त-घटी-पल) में महादशा वर्ष का गुणा कर भभोग (भोग्यकाल) से भाग दे जो लब्धी भुक्त वर्ष मास, दिन, आदि प्राप्त हो जाएगें। उस समय को महादशा के पूर्ण वर्ष में से घटा देगें। जो शेष बचे वहीं वर्ष आदि महादशा के भोग्य वर्ष आदि होगें अर्थात् इतने समय उस ग्रह की दशा और भोगनी पड़ेगी।

विंशोत्तरी दशा में 120 वर्ष की पर आयु मानकर चलते हैं और उसी के आधार पर ग्रहों का विभाजन किया जाता हैं। जिस नक्षत्र में जन्म हुआ हो उसी के अनुसार ग्रह दिशा का विचार किया जाता हैं।

नीचे लिखीं गई सारणी में ग्रहों की दशा निम्न प्रकार हैं -

सूर्य की दशा 6 वर्ष

चन्द्रमा की दशा	10 वर्ष
भौम की दशा	7 वर्ष
राहु की दशा	18 वर्ष
बृहस्पति की दशा	16 वर्ष
शनि की दशा	19 वर्ष
बुध की दशा	17 वर्ष
केतु की दशा	7 वर्ष
शुक्र की दशा	20 वर्ष

जन्म नक्षत्रों के अनुसार कृत्तिका, उत्तराफाल्गुनी और उत्तराषाढ़ में जन्म हो तो सूर्य की माहदशा रोहिणी, हस्त, श्रवण, में चन्द्रमा, मृगशिरा, चित्रा व धनिष्ठा में मंगल, आर्द्रा, स्वात्ति, शतभिषा में राहु व पुर्नवसु, विशाखा व पूर्व भाद्र पदमें गुरू, पुष्य, अनुराधा व उत्तरा भाद्रपद में शनि, आश्लेषा, ज्येष्ठा व रेवती में बुध, मघा, मूल व अश्विनी में केतु, भरणी, पूर्वाकाल गुनी व पूर्वाषाढ़ा में शुक्र की माह दशा रहती हैं।

4.2.7 ग्रह की दशा जानने की विधि-

कृत्तिका नक्षत्र से जन्मनक्षत्र तक गिनकर 9 का भाग देने से एकादि शेष में क्रम से सूर्य, चन्द्रमां, भौम, राहु, गुरू, शनि, बुध, केतु और शुक्र की दशा होती हैं।

उदाहरण-

यहाँ कृत्तिका से जन्म नक्षत्र चित्रा तक गिनती करने पर संख्या 12 हुई, फिर उसमंे 9 का भाग दें, जो शेष बचे उसे सूर्यादि क्रम से गिनती कर लं। मान लो किसी जातक का जन्म चित्रा नक्षत्र में हुआ हैं तो उसकी कौनसी दशा हैं, ज्ञात करने के लिए चित्रा तक (कृत्तिका से प्रारम्भ करके) गिना तो गिनती में 12 अंक आये। इस 12 को 9 से भाग दिया तो शेष 3 बचे। इसके पश्चात् सूर्य आदि क्रम से गिनती की तो तीसरी महादशा मंगल की होगी।

।।जन्म नक्षत्र से ग्रहदशा बोधक चक्र।।

ग्रह	सूर्य	चन्द्र	भौम	राहु	गुरू
वर्ष	6	10	7	18	16
नक्षत्र	कृत्तिका	रोहिणी	मृगशिरा	आर्द्रा	पुर्नवसु
	उत्तराफाल्गुनी	हस्त	चित्रा	स्वात्ति	विशाखा
	उत्तराषाढ़ा	श्रवण	धनिष्ठा	शतभिषा	पू.भाद्रपद
ग्रह	शनि	बुध	केतु	शुक्र	

वर्ष	19	17	7	20
नक्षत्र	पुष्य	आश्लेषा	मघा	पूर्वाफाल्गुनी
	अनुराधा	ज्येष्ठा	मूल	पूर्वाषाढ़ा
	उत्तराभाद्रपद	रेवती	अश्विनी	भरणी

जन्म के नक्षत्रों के अनुसार ऋ कृत्तिका, उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढा जन्म हो तो सूर्य महादशा, रोहणी, हस्त, श्रवण में चन्द्रमा, मृगशिरा, चित्रा व धनिष्ठा में मंगल, आर्द्रा, स्वाति, शतभिषा में राहु व पुर्नवसु, विशाखा व पूर्वभाद्रपद में गुरू, पुष्य, अनुराधा व उत्तरा भाद्रपद में शनि, आश्लेषा, ज्येष्ठा व रेवती में बुध, मघा, मूल व अश्विनी में केतु, भरणी, पूर्वाफाल्गुनी व पूर्वाषाढा में शुक्र की महादशा रहती हैं।

उदाहरण

जन्म दिनांक 9/11/2003 भयात भभोग द्वारा विंशोन्तरी दशा

1 नक्षत्र का मान = कोटा जन्म 11:05 बजे

सूर्योदय 06:43 सुबह

जन्म समय 11: 05 बजे

\- 06: 43

04: 22

X 2 1/2

10/55 इष्टकाल (घटी-पल)

8/11/2003 अश्विनी नक्षत्र का मान 14/57 - 0/32 (समय में करेक्शन)

= 14/25 नक्षत्र का मान 06: 30 सुबह

9/11 भरणी नक्षत्र का मान = 22/02 - 0/32 सूर्योदय 06: 43 पर

= 21/30 - 06: 30

इष्टकाल का मान उस दिन के नक्षत्र के मान से कम हैं। 00: 13

अतः वर्तमान नक्षत्र भरणी हुआ X 2 1/2

भयात् = 60 - गत नक्षत्र + इष्टकाल 00/32 घटी

= 60 - 14/25 + 10/55

= 45/35 + 10/55

भयात् = 56/30

पलात्मक भयात् = 56 ´ 60 + 30

पलात्मक भयात् = 3390

भभोग = 60 - गत नक्षत्र + वर्तमान नक्षत्र

= 45/3+ + 21/30

= 67/05

पलात्मक भभोग = 67 ´ 60 + 05

पलात्मक भभोग = 4025 पल

भुक्त दशा = $\frac{\text{दशा वर्ष} \times \text{भयात्}}{\text{भभोत}}$

भोग्य = दशा वर्ष × भुक्त

गत नक्षत्र अश्विनी - शुक्र की महादशा

शुक्र की दशा वर्ष = 20 वर्ष

= $\frac{3390 \times 20}{4025}$

= 16 वर्ष 10 माह 4 दिन (भुक्त)

	वर्ष माह दिन
शुक्र की महा दशा वर्ष	20/00/00
भुक्तदशा	16/10/04
	03/01/26

= 3 वर्ष 1 माह 26 दिन भोग्य अर्थात् भोगना है

वर्तमान नक्षत्र स्पष्ट = $\frac{\text{भयात्} \times \text{नक्षत्र कामान}}{\text{भभोत}}$

= $\frac{3390 \times 800}{4025}$

चन्द्रगति = $\frac{673}{3}$

वर्तमान नक्षत्र का मान = 00-13^0-20’-00’’

चन्द्रगति = 00-11^0-13’-47’’

चन्द्रस्पष्ट = 00-24^0-33’-47’’

विशोंतरी दशाचक्रम्मिदम

	शुक्र	सूर्य	चन्द्र	भौम	राहु	गुरू	शनि	बुध	केतु	ग्रह
	20	6	10	7	18	16	19	17	7	वर्ष
भुक्त	भोग्य									
16	03									वर्ष
10	01									दिन
04	26									मास
00	00									घटी
00	00									पल
09/11/2003	05/01/2007	05/01/2013	05/01/2023	05/01/2030	05/01/2048	05/01/2064	05/01/2083	05/01/2100	05/01/2107	

बच्चे ने जन्म लिया था तब शुक्र की महादशा चल रहीं थी और उसमें से 16 वर्ष 10 माह और 4 दिन बीत चुके हैं या भुक्त अर्थात् भोग चुका हैं। शेष 3 वर्ष 1 मास 26 दिन दशा वर्ष भोगनी शेष हैं।

उदाहरण 1

जन्म समय 02: 32 दोपहर जन्म दिनांक 23/04/2012 जन्म स्थान कोटा भयात-भभोग (भुक्त-भोग्य) प्रकार से विंशोन्तरी दशा निकालें।

जन्म समय 02: 32 दोपहर (14 घण्टा 32 मिनिट)

जन्म दिनांक 23 अप्रैल 2012

जन्म स्थान कोटा

सूर्योदय 06 बजकर 02 मिनिट

इष्टकाल = 14 घण्टा 32 मिनिट - 06 घण्टा 02 मिनिट

= 08 घण्टा 30 मिनिट (इष्टकाल)

= 21 घटी 15 पल

दिनांक	नक्षत्र	घ./प.	घं./मि.
22/04/2012	भरणी	53/46	27/32
23/04/2012	कृतिका	60/00	14/32
	(तिथि क्षय)		
24/04/2012		61/38	06/40 तक

(बल्लभमनीराम पंचांग के अनुसार)

गत नक्षत्र भरणी = 53/46

जन्म नक्षत्र कृत्तिका = 61/38

सूत्र- भयात ज्ञात करने का सूत्र

भयात = 60 - गत नक्षत्र + इष्टकाल

= 60/00 - 53/46 + 21/15

= 6/14 + 21/15

= 27/29 (घ0 प0)

= 27 × 60 +29

= 1620 +29

= 1649 पलादि भयात्

सूत्र- भभोग ज्ञात करने का सूत्र

भभोग = 60 - गत नक्षत्र + वर्तमान नक्षत्र

= 60 - 53/46 + 61/38

= 6/14 +61/38

= 67/62 (घटी/पल)

= 67 × 60 + 52

= 4020 + 52

= 4072 पलादि भभोग

सूत्र-

चन्द्र गति $= \frac{3600 \times 800}{4072}$

$= \frac{2880000}{4072}$

= 707 पल-विपल

= 11^0-47

चन्द्र स्पष्ट $= \frac{\text{भयादि पलादि} \times 40}{\text{भभोग पलादि} \times 3}$

$= \frac{1649 \times 40}{4072 \times 3}$

$= \frac{65960}{12216}$

= 05^0-23’-28’’

गत नक्षत्र का मान (भरणी दूसरा नक्षत्र) = $2 \times 13^0/2$

= 00-26^0-40’-00’’

+ 00-05^0-23’-00’’

चन्द्र स्पष्ट 01-02^0-03’-58’’

पलात्मक भयात् = 1649 पलात्मक भयात्

4.2.5 विशोन्तरी दशा

सूर्य के दशा वर्ष से गुणा किया × 6

9894 -4072

1649

× 6

9894 -4072 भभोग

4072 / 9894 \ 2 वर्ष
− 8144
1750
× 12
4072 / 21000 \ 5 मास
− 2036
0640
× 30
4072 / 19200 \ 4 दिन
− 16148
3052
× 60
4072 / 1831204 \ 44 घटी
− 16288
20240
− 16288
3952
× 60
4072 / 237120 \ 58 पल
− 20360
33520
− 32570
950

सूर्य के भुक्त वर्षादि = 2 वर्ष 5 मास 4 दिन 44 घटी 58 पल प्राप्त हुए जिसमें से सूर्य के ग्रह वर्ष 6 में से घटाया शेष भोग्य वर्षादि होगा।

सूर्य के ग्रह वर्ष	6.00.00.00.00
भुक्त वर्षादि -	2.05.04.44.58
	3.06.25.15.02 भोग्य वर्षादि

जातक को 3 वर्ष 6 मास 25 दिन 15 घटी 02 पल सूर्य की महादशा भोगना हैं।

इसका दशा चक्र बनाने के लिए जिस ग्रह की दशा चल रही हैं उससे प्रारम्भ करके उससे आगे के ग्रहों को क्रमवार लिख देना चाहिए।

उपरोक्त उदाहरण जन्म कुण्डली का विंशोन्तरी दशा चक्र नीचे लिखे अनुसार बनेगी।

विंशोन्तरी दशा चक्र											
	सूर्य 6		चन्द्र	भौम	राहु	गुरू	शनि	बुध	केतु	शुक्र	ग्रह
	भुक्त	भोग्य	10	07	18	16	19	17	7	20	वर्ष
वर्ष	02	03									वर्ष
मास	05	06									मास
दिन	04	25									दिन
घटी	44	15									घटी
पल	58	02									पल
	23/04/2012	18/11/2015	18/11/2025	18/11/2032	18/11/2050	18/11/2066	18/11/2085	18/11/2102	18/11/2109	18/11/2129	

4.2.6 महादशा में अन्तर्दशा साधन -

प्रत्येक एक ग्रह की महादशा में 9 ग्रह क्रमशः अपना भोग्य लेते हैं जिसे अन्तर्दशा कहते हैं। जैसे- सूर्य की महादशा में पहली अन्तर्दशा सूर्य की दूसरी चन्द्रमा की, तीसरी भोम की, चौथी राहु की, पांचवीं जीव की, छठी शनि की, सातवीं बुध की, आठवीं केतु की और नवीं दशा शुक्र की होती हैं।

जिस ग्रह की दशा हो उससे सूर्य, चन्द्रमां, भौम, राहु, जीव, शनि, बुध, केतु एवं शुक्र की अन्तर्दशाएं होती हैं।

अन्तर्दशा निकालनें की विधिः-

1) दशा-दशा का परस्पर गुणा करने पर शेष आये उसमें 10 का भाग देने से लब्ध मास और शेष को तीस से गुणा करने से दिन प्राप्त होगें।

2) दशा-दशा का परस्पर गुणा करने पर जो गुणनफल प्राप्त होगें उसमें इकाई के अंग को छोड़ बाकी बचे अंक मास और इकाई के अंक को 3 से गुणा करने पर दिन प्राप्त होगें।

उदाहरण

सूत्र- दशा वर्ष ′ दशा वर्ष ÷ 10 = अन्तर्दशा माह

मंगल की महादशा में मंगल की अर्न्तदशा निकालनी है, तो मंगल की दशा वर्षो में 7 का गुणा किया जाएगां।

मंगल में मंगल की अर्न्तदशा 7 ´ 7 = 49 ÷ 10

= 4 मास 7 दिन

मंगल में राहु की अर्न्तदशा 7 ´ 18 = 126 ÷ 10

= 1 वर्ष 18 दिन

मंगल में गुरू की अर्न्तदशा 7 ´ 16 = 112 य् 10

= 11 मास 6 दिन

मंगल में शनि की अर्न्तदशा 7 ´ 19 = 133 ÷ 10

= 1 वर्ष 1 मास 9 दिन

मंगल में बुध की अर्न्तदशा 7 ´ 17 = 119 ÷ 10

= 11 मास 27 दिन

मंगल में केतु की अर्न्तदशा 7 ´ 7 = 49 ÷ 10

= 4 मास 27 दिन

मंगल में शुक्र की अर्न्तदशा7 ´ 20 = 140 ÷ 10

= 1 वर्ष 2 मास

मंगल में सूर्य की अर्न्तदशा 7 ´ 6 = 42 ÷10

= 4 मास 6 दिन

मंगल में चन्द्रमां की अर्न्तदशा 7 ´ 10 = 70 ÷ 10

= 7 मास

चन्द्रमा की महादशा में नौ ग्रहों की अन्तर्दशा-

चन्द्रमा की महादशा में चन्द्र का अन्तर 10 ´ 10 = 100 ÷10

= 10 मास

चन्द्रमा की महादशा में भौम का अन्तर 10 ´ 07 = 70 ÷10

= 7 मास

चन्द्रमा की महादशा में राहु का अन्तर 10 ´ 18 = 180 ÷10

= 1 वर्ष 6 मास

चन्द्रमा की महादशा में जीव का अन्तर 10 ´ 16 = 160 ÷ 10

= 1 वर्ष 4 मास

चन्द्रमा की महादशा में शनि का अन्तर 10 ´ 19 = 190 ÷10

= 1 वर्ष 7 मास

चन्द्रमा की महादशा में बुध का अन्तर 10 ´ 17 = 170 ÷ 10

= 1 वर्ष 5 मास

चन्द्रमा की महादशा में केतु का अन्तर 10 ´ 07 = 70 ÷10

= 7 मास

चन्द्रमा की महादशा में शुक्र का अन्तर 10 ´ 20 = 200 ÷ 10

= 1 वर्ष 8 मास

चन्द्रमा की महादशा में सूर्य का अन्तर 10 ´ 06 = 60 ÷ 10

= 6 मास

इसी प्रकार अन्य ग्रहों की महादशा में से अन्तर्दशा निकाल लेनी चाहिए।

ग्रहों के अन्तर्दशा के चक्र नीचे दिये जा रहें है -

सूर्यान्तर्दशा चक्र

ग्रह	सूर्य	चन्द्र	भौम	राहु	गुरु	शनि	बुध	केतु	शुक्र
वर्ष	0	0	0	0	0	0	0	0	1
मास	3	6	4	10	9	11	10	4	0
दिन	18	0	6	24	18	12	6	6	0

चन्द्रान्तर्दशा चक्र

ग्रह	चन्द्र	भौम	राहु	गुरू	शनि	बुध	केतु	शुक्र	सूर्य
वर्ष	0	0	1	1	1	1	0	1	0
मास	10	7	6	4	7	5	7	8	6
दिन	0	0	0	0	0	0	0	0	0

भौमान्तर्दशा चक्र

ग्रह	भौम	राहु	गुरु	शनि	बुध	केतु	शुक्र	सूर्य	चन्द्र
वर्ष	0	1	0	1	0	0	1	0	0
मास	4	0	11	1	11	4	2	4	7
दिन	27	18	6	9	27	27	0	6	0

राहुवान्तर्दशा चक्र

ग्रह	राहु	गुरू	शनि	बुध	केतु	शुक्र	सूर्य	चन्द	भौम		
वर्ष	2	2	2	2	1	3	0	1	1मास	8	4
	10	6	0	0	10	6	0				
दिन	12	24	6	18	18	0	24	0	18		

जीवान्तर्दशा चक्र

ग्रह	गुरू	शनि	बुध	केतु	शुक्र	सूर्य	चन्द	भौम	राहु		
वर्ष	2	2	2	0	2	0	1	0	2		
मास	1	6	3	11	8	9	4	11	4दिन	18	12
	6	6	0	18	0	6	24				

शन्यान्तर्दशा चक्र

ग्रह	शनि	बुध	केतु	शुक्र	सूर्य	चन्द	भौम	राहु	गुरू
वर्ष	3	2	1	3	0	1	1	2	2
मास	0	8	1	2	11	7	1	10	6
दिन	3	9	9	0	12	0	9	6	12

बुधान्तर्दशा चक्र

ग्रह	बुध	केतु	शुक्र	सूर्य	चन्द	भौम	राहु	गुरू	शनि

वर्ष	2	0	2	0	1	0	2	2	2 मास	4	11
	10	10	5	11	6	3	8				
दिन	27	27	0	6	0	27	18	6	9		

केत्वान्तर्दशा चक्र

ग्रह	केतु	शुक्र	सूर्य	चन्द	भौम	राहु	गुरू	शनि	बुध
वर्ष	0	1	0	0	0	1	0	1	0
मास	4	2	4	7	4	0	11	1	11
दिन	27	0	6	0	27	18	6	9	27

शुक्रान्तर्दशा चक्र

ग्रह	शुक्र	सूर्य	चन्द	भौम	राहु	गुरू	शनि	बुध	केतु		
वर्ष	3	1	1	1	3	2	3	2	1 मास	4	0
	8	2	0	8	2	10	2				
दिन	0	0	0	0	0	0	0	0	0		

4.3 सारांश

इस ईकाई के विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता हैं। कि चन्द्रमा गति व स्पष्ट निकालने की विधि अन्य ग्रहों की गति एवं स्पष्ट निकालने की विधि से किस प्रकार भिन्न हैं। इस में चन्द्र ग्रह की गति एवं स्पष्ट को निकालने की विधियों का विस्तार से वर्णन किया गया हैं। विशेष रूप से उससे भयात्-भभोग (मुक्त-भोग्य) के आधार पर चन्द्र गति व स्पष्ट को करने की विधियों का सविस्तार उदाहरण सहित पूर्ण विवेचन किया गया हैं।

4.4 शब्दावली

- जीव - गुरू
- भौम - मंगल
- भुक्त - गत नक्षत्र (भोग चुका), का वह मान जो बीत चुका हैं
  (विशोंतरी में दशा वर्ष का वह मान जो बीत चुका हैं)

- भोग्य - वर्तमान नक्षत्र (भोगना) का वह मान जो भोगा जाना बाकी हैं। (विशोंतरी में दशा वर्ष का वह मान जो जन्म दिनांक से भोगा जाना हैं।

4.5 अभ्यास प्रश्न

1 एक नक्षत्र का मान कितना होता है ?

उत्तर एक नक्षत्र का मान होता है।

2 चन्द्रमां की गति साधन करने का सूत्र बताइए ?

उत्तर चन्द्र गति साधन सूत्र = 800×20’

भभोत पल

= चन्द्र गति कला विकला में

3 चन्द्र स्पष्ट करने के कितनी विधियां हैं ? एवं चन्द्र स्पष्ट की विधियों के सूत्र लिखिएं?

उत्तर चन्द्र स्पष्ट करने के दो विधियां है, जो निम्न प्रकार है-

1) (गत नक्षत्र की षष्ठि प्रमाण भुक्ति + वर्तमान नक्षत्र की षष्ठी प्रमाण भुक्ति× 2

9

2) = भयात×60

भभोत ×3

4 जन्म नक्षत्र व गत नक्षत्र को स्पष्ट कीजिये ?

उत्तर जिस नक्षत्र में जातक का जन्म होता है, वह उसका जन्म नक्षत्र कहलाता हैं और जन्म नक्षत्र के पूर्व का गत नक्षत्र कहलाता हैं।

5 भयात् एवं भभोग निकालने का सूत्र बताईये ?

उत्तर सूत्र-

भयात् = 60 - गत नक्षत्र + इष्टकाल

भभोग = 60 - गत नक्ष + वर्तमान नक्षत्र

निबंधात्मक प्रश्न:-

1 जातक का जन्म 26/07/2009 को सायंकाल 07:55 पर कोटा में हुआ सूर्योदय 05:55 जन्म नक्षत्र हस्त का मान 28/32 तथा गत नक्षत्र का 29/48 (घटी/पल) हैं। इस आधार पर जातक का चन्द्र स्पष्ट कीजिए ?

2 चन्द्र स्पष्ट द्वारा भयात्-भभोग (भुक्त-भोग्य) से विंशोन्तरी दशा का साधन कीजिए?

4.6 संदर्भ ग्रंथ सूची

भारतीय ज्योतिष नेमीचन्द शास्त्री

बल्लभमनीराम

लेखकः- श्रीमती विजयलक्ष्मी शर्मा

कनिष्ठ लिपिक वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

इकाई - 5

दशम साधन, नतोन्नत प्रकार व चलित चक्र

इकाई की रूपरेखा

5.0 प्रस्तावना
5.1 उद्देश्य
5.2 विषय प्रवेश
5.2.1 दशम भाव साधन
5.2.2 नतकाल
5.2.3 दशम भाव विधि
5.2.4 चलित चक्र
5.2.5 द्वादश स्पष्ट चक्र
5.3 सारांश
5.4 बोध प्रश्न
5.5 शब्दावली
5.6 संदर्भ ग्रंथ सूची

5.0 प्रस्तावना

ज्योतिष फलित में ग्रहों की सही स्थिति किस भाव में हैं, इसके लिए भाव स्पष्ट किए जाते हैं। इससे यह पता चलता हैं कि जो ग्रह जन्मांग में जिस भाव में स्थित ग्रह होता हैं वहाँ के फलो के लिए उत्तरदायी होते हुए भी उस भाव का फल नहीं करता क्योंकि वह उस भाव में स्थित न होकर सन्धि या दूसरे भावों में स्थित होकर वहांँ के फलो को ही देने वाला हो जाता हैं। अतः हमे हमारे मनीषियों ने भाव स्पष्टः करके ग्रहों के फलों को बताने की आज्ञा प्रदान की हैं बिना भाव स्पष्टः किए ही जो ज्योतिषी भावों में स्थित ग्रहों का फल करते हैं वह अन्धेरे कमरे में किसी वस्तु को देखने की बात कहते हैं। इस प्रकार वह अपना और ज्योतिष शास्त्र का बहुत बड़ा नुकसान करते हैं। अतः महर्षियों के अनुसार हमें नतोन्नत करके दशम भाव स्पष्टः कर चलित चक्र का निर्माण कर भावों को स्पष्टः कर ग्रहों के फलों का विचार करना चाहिए।

5.1 उद्देश्य

इस इकाई में यह बताने की कोशिश की गई हैं कि दशम लग्न साधन की लग्न कुण्डली में अत्यधिक आवश्यकता होती हैं। इसके बिना सही फलित नहीं किया जा सकता। बहुत सरल पद्धति द्वारा नतोन्नत साधन से लग्न के द्वारा दशम भाव साधन किया गया हैं साथ में सुविधा के लिए दशम लग्न सारणी एवं दशम सारणी दी गई हैं। दशम भाव साधन एवं चलित चक्र कि सारणी भी बनाई हैं। इसमें भाव एवं

सन्धि को किस प्रकार कुण्डली में ग्रहों को स्थापित किया जाता हैं। सीधी सरल भाषा एवं गणित द्वारा समझाया गया हैं।

5.2 विषय प्रवेश

5.2.1 दशम भाव साधन:-

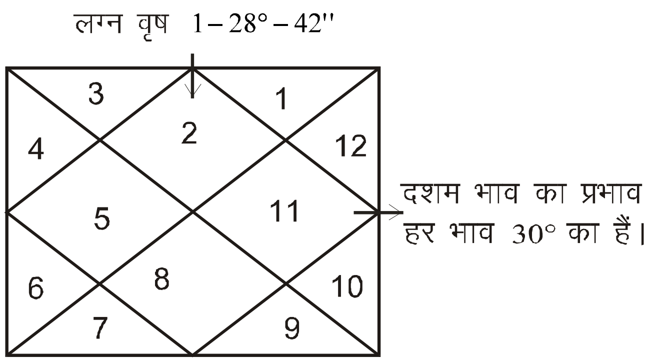

लग्न का भाव:-दशम भाव लग्न पर प्रभाव डालता हैं।

इष्टकाल से नतकाल सूर्यांश (दशम भाव सारणी से)

5.2.2 नतकाल:-नतकाल के दो भाग होते हैं -

1) पूर्वनत काल 2) पश्चिम नत

अर्द्धरात्रि के बाद से लेकर अर्द्ध दिन तक जो जातक उत्पन्न होगा उसका नतकाल पूर्वनत कहलायेगा क्योंकि उस समय सूर्य पूर्व के पाले में आ जायेगा। अर्द्धदिन के बाद से लेकर अर्धरात्रि तक का नतकाल पश्चिम नत कहलायेगा।

पूर्वनत के दो भाग हैं -

1) पूर्वनत काल

i) अर्द्धरात्री से सूर्योदय तक का नतकाल

ii) सूर्योदय से अर्द्धदिन तक का नतकाल

2) पश्चिम नतकाल

i) अर्द्धदिन से लेकर सूर्यास्त तक का नतकाल

ii) सूर्यास्त से लेकर अर्द्धरात्री तक का नतकाल

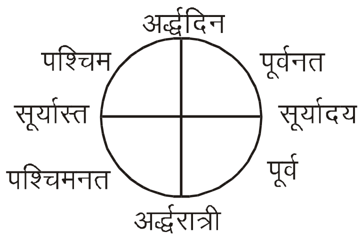

पूर्वनत:- नतकाल निकालने की विधि -

1) पूर्वनत में यदि अर्द्धरात्रि के बाद से लेकर सूर्योदय तक का इष्टकाल हो तो 60 में से इष्टकाल घटाकर दिनार्द्ध जोड़ देते हैं।

सूत्र -नतकाल = 60 - इष्टकाल + दिनार्द्ध

2) अगर सूर्योदय से दिनार्द्ध के पूर्व का इष्टकाल हो तो दिनार्द्ध में से इष्टकाल घटाओं

सूत्र -नतकाल = दिनार्द्ध - इष्टकाल

पश्चिम नत:-1) दिनार्द्ध से सूर्यास्त तक का अगर (पश्चिम नत) इष्टकाल हो तो पश्चिम नत होगा -

सूत्र -पश्चिम नत = दिनार्द्ध - (दिनमान + इष्टकाल)

(दिनार्द्ध में से दिनमान और इष्टकाल घटा देते हैं।)

2) अगर सूर्यास्त से लेकर अर्द्धरात्री के पूर्व तक का इष्टकाल हो तो इष्टकाल में से दिनामान घटाकर दिनार्द्ध जोड़े देगें।

सूत्र -

पश्चिम नत = इष्टकाल - दिनमान + दिनार्द्ध

= इष्टकाल - दिनार्द्ध

उन्नत - 30 घटी में से नत घटा देगें जो शेष बचेगा वह उन्नत कहलाएगां हैं। मध्याह्न और अर्द्ध रात्रि में 30 घटी का अन्तर होता हैं। मध्याह्न में दशम का स्थान है तो अर्द्धरात्रि में चतुर्थ का स्थान हैं। मध्याह्न से अर्द्धरात्रि की दूरी को नत और अर्द्धरात्रि से इष्ट की दूरी को उन्नत कहते हैं।

5.2.3 दशम भाव निकालनें की विधि -

उस दिन सूर्य के अंशो का मान दशम - लग्नसारणी में दशम भाव में देखना हैं। यदि पूर्वनत काल हैं तो सूर्य के अंशों के मान में से नतकाल को घटा देगें और अगर पश्चिम नत हैं तो उसमें जोड़ देगें अब जो मान आयेगा उसे दशम - लग्नसारणी में देखें और उसी तरह जहाँ संख्या आयेगी उसे आगे पीछे के मान से सही मान ज्ञात करेगें।

इस तरह प्राप्त राशि के मान अंश, कला व विकला में आयें, वही दशम भाव होगा। (जो कुण्डली के लग्न के दशम भाव के समान होगा)।

इस प्रकार ज्ञात चतुर्थभाव में से लग्न का मान घटा देंगे। जो मान आया उसमें 6 का भाग देंगे ये षष्ठांश आया। (यह अंश, कला और विकला में आयेगा) इसके बाद प्रत्येक भाव की स्थिति ज्ञात करेगें।

चतुर्थ भाव = स्पष्ट लग्न

शेष = ×30÷ षष्ठांश

शेष = ×30+कला ÷ षष्ठांश कला

शेष = ×90+वि ÷ षष्ठांश विकला

दशलग्न सारणी

दशमसारिणी सुगमा.

अंशाः	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
९ मकर	४ १९	४ ३०	४ ४१	४ ५१	५ १	५ १२	५ २३	५ ३३	५ ४३	५ ५३	६ ३	६ १३	६ २३	६ ३३	६ ४३
१० कुंभ	९ २२	९ ३२	९ ४२	९ ५२	१० २	१० १२	१० २२	१० ३१	१० ४०	१० ४९	१० ५९	११ ८	११ १७	११ २६	११ ३६
११ मिन	१४ ४	१४ १३	१४ २२	१४ ३२	१४ ४१	१४ ५०	१५ ०	१५ ९	१५ १८	१५ १७	१५ ३७	१५ ४६	१५ ५५	१६ ४	१६ १४
० मेष	१८ ४२	१८ ५१	१९ ०	१९ १०	१९ १९	१९ २८	१९ ३८	१९ ४८	१९ ५८	२० ८	२० १८	२० २८	२० ३८	२० ४८	२० ५८
१ वृषभ	२३ ३७	२३ ४७	२३ ५७	२४ ७	२४ १७	२४ २७	२४ ३७	२४ ४८	२४ ५८	२५ १०	२५ २०	२५ ३१	२५ ४२	२५ ५२	२६ ३
२ मिथुन	२८ ५५	२९ ६	२९ १६	२९ २७	२९ ३८	२९ ४९	३० ०	३० १०	३० २१	३० ३२	३० ४३	३० ५३	३१ ४	३१ १५	३१ २६
३ कर्क	३४ १८	३४ २९	३४ ३९	३४ ५०	३५ १	३५ १२	३५ २३	३५ ३३	३५ ४३	३५ ५३	३६ ३	३६ १३	३६ २३	३६ ३३	३६ ४३
४ सिंह	३९ २२	३९ ३२	३९ ४२	३९ ५२	४० २	४० १२	४० २२	४० ३१	४० ४०	४० ४९	४० ५९	४१ ८	४१ १७	४१ २६	४१ ३६
५ कन्या	४४ ४	४४ १३	४४ २२	४४ ३२	४४ ४१	४४ ५०	४५ ०	४५ ९	४५ १८	४५ २७	४५ ३७	४५ ४६	४५ ५५	४६ ४	४६ १४
६ तुला	४८ ४१	४८ ५१	४९ ०	४९ १०	४९ १९	४९ २८	४९ ३८	४९ ४८	४९ ५८	५० ८	५० १८	५० २८	५० ३८	५० ४८	५० ५८
७ वृश्चिक	५३ ३७	५३ ४७	५३ ५७	५४ ७	५४ १७	५४ २७	५४ ३७	५४ ४८	५४ ५८	५५ ९	५५ २०	५५ ३०	५५ ४१	५५ ५२	५६ ३
८ धनु	५८ ५५	५९ ६	५९ १६	५९ २७	५९ ३८	५९ ४९	० ०	० १०	० २१	० ३२	० ४३	० ५३	१ ४	१ १५	१ २६

अंशाः	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
९ मकर	६ ५३	७ २	७ १२	७ २२	७ ३२	७ ४२	७ ५२	८ २	८ १२	८ २२	८ ३२	८ ४२	८ ५२	९ २	९ १२
१० कुंभ	११ ४५	११ ५४	१२ ४	१२ १३	१२ २२	१२ ३१	१२ ४१	१२ ५०	१२ ५९	१३ ८	१३ १८	१३ २७	१३ ३६	१३ ४६	१३ ५५
११ मिन	१६ २३	१६ ३२	१६ ४१	१६ ५१	१७ ०	१७ ९	१७ १९	१७ २८	१७ ३७	१७ ४६	१७ ५६	१८ ५	१८ १४	१८ २३	१८ ३३
० मेष	२१ ८	२१ १८	२१ २७	२१ ३७	२१ ४७	२१ ५७	२२ ७	२२ १७	२२ २७	२२ ३७	२२ ४७	२२ ५७	२३ ७	२३ १७	२३ २७
१ वृषभ	२६ १३	२६ २४	२६ ३५	२६ ४६	२६ ५६	२७ ७	२७ १८	२७ २९	२७ ४०	२७ ५०	२८ १	२८ १२	२८ २३	२८ ३३	२८ ४४
२ मिथुन	३१ ३६	३१ ४७	३१ ५८	३२ ९	३२ १९	३२ ३०	३२ ४१	३२ ५२	३३ ३	३३ १३	३३ २४	३३ ३५	३३ ४६	३३ ५६	३४ ७
३ कर्क	३६ ५३	३७ २	३७ १२	३७ २२	३७ ३२	३७ ४२	३७ ५२	३८ २	३८ १२	३८ २२	३८ ३२	३८ ४२	३८ ५२	३९ २	३९ १२
४ सिंह	४१ ४५	४१ ५४	४२ ३	४२ १३	४२ २२	४२ ३२	४२ ४१	४२ ५०	४२ ५९	४३ ८	४३ १८	४३ २७	४३ ३६	४३ ४५	४३ ५५
५ कन्या	४६ २३	४६ ३२	४६ ४१	४६ ५१	४७ ०	४७ ८	४७ १८	४७ २७	४७ ३७	४७ ४६	४७ ५५	४८ ४	४८ १४	४८ २३	४८ ३२
६ तुला	५१ ८	५१ १८	५१ २८	५१ ३७	५१ ४७	५१ ५७	५२ ७	५२ १७	५२ २७	५२ ३७	५२ ४७	५२ ५७	५३ ७	५३ १७	५३ २७
७ वृश्चिक	५६ १३	५६ २४	५६ ३५	५६ ४६	५६ ५६	५७ ७	५७ १८	५७ २९	५७ ४०	५७ ५०	५८ १	५८ १२	५८ २३	५८ ३३	५८ ४४
८ धनु	१ ३६	१ ४७	१ ५८	२ ९	२ १९	२ ३०	२ ४१	२ ५२	३ ३	३ १३	३ २४	३ ३५	३ ११	३ ५८	४ ९

छात्रों की सुविधा के लिए दशम सारणी में लिखे गये हिन्दी अंकों को निम्न प्रकार से अंग्रेजी के अंकों को समझे-

लग्न से दशमभाव साधन सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	२२	१३	१४
तु. ६	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३
	०	१	२	३	४	५	६	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५
	४५	४	५०	५२	५४	५९	५९	१	२	५	८	१५	२३	३४	४२
	७	५	८	१३	१५	१९	२२	२	५	१४	३८	५५	१७	१२	३
वृ. ७	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४
	४	५	६	७	८	९	११	१२	१३	१४	१६	१७	१८	१९	२०
	१०	१९	२९	३८	४३	५३	३	२०	३५	४९	४	१६	३०	४४	५८
	७	५	३	२	०	१	५	१३	२५	३५	४५	८	३	१०	१
ध. ८	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५
	१०	११	१३	१४	१५	१६	१८	१९	२०	२१	२२	२४	२५	२६	२७
	३९	५३	६	२०	३४	४८	२	१५	२९	४३	५७	११	१४	१९	२७
	१४	१	५	३	१५	२२	११	३	२९	१०	१५	२५	४८	३७	३७
म. ९	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६
	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८
	३८	३९	४०	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८	४९	५०	५२	१०
	१	२	५	२	१	०	३	१	५०	२२	११	८	१५	३	३२
कुं.१०	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७
	११	१२	१३	१४	१४	१५	१६	१७	१८	१८	१९	२०	२१	२१	२२
	४०	५	२२	९	५६	४३	३०	२१	१४	५१	३८	२४	५	४६	३८
	५१	३२	३३	३३	३०	२२	७	५	९	१०	५२	८	३	१५	२७
मी.११	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८
	३	४	४	५	६	६	७	८	९	९	१०	१०	११	१२	१२
	२४	५	४९	२८	९	५०	३२	१२	३	३४	१५	५६	२७	१३	५९
	३९	१२	५	३	०	८	२	६	७	५	३	४५	४७	३६	२६

१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अंश
३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	४	४	४	तु. ६
१६	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२६	२७	२८	२९	०	१	३	
५०	१	१०	५९	२८	३८	४८	५६	९	१५	२४	३३	४२	५२	१	
०	१	८	१५	२८	८	९	३५	४२	५६	२	८	३	३	७	
४	४	४	४	४	४	४	५	५	५	५	५	५	५	५	वृ. ७
२२	२३	२४	२५	२७	२८	२९	०	२	३	४	५	६	८	९	
१२	२५	३८	५५	७	१९	३४	४८	२	१६	३०	४३	५३	११	२५	
२	५	३	५७	१२	२५	१८	२१	७	८	५	३	१	१५	०	
५	५	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	ध. ८
२८	२९	०	१	२	३	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	
३०	३०	४२	४७	५३	५८	४	१०	१५	१२	२६	३२	३४	३६	४०	
३७	४२	३	४	५	३	१५	१२	२०	३०	५	८	३	४५	०	
६	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	म. ९
२९	०	०	१	२	३	४	५	५	६	७	८	९	१०	११	
१	१	५२	४३	३३	२४	१५	६	५७	४६	३८	२९	२०	१०	७	
४०	४५	५०	७	३	४	९	१३	२१	२७	३५	४०	४५	५०	५०	
७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	८	८	८	८	कुं. १०
२३	२४	२४	२५	२५	२६	२७	२७	२८	२९	२९	०	१	२	२	
३९	१६	५९	१२	५६	३४	१५	५६	३७	१८	५९	४०	२१	३०	३	
३७	४८	५९	१	२	३	६	८	१०	१२	५	३०	१५	१६	४	
८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	मी. ११
१३	१४	१५	१५	१६	१७	१७	१८	१९	१९	२०	२१	२१	२२	२३	
४०	२०	०	३५	२४	५	४६	२८	९	५७	३१	१२	५३	३४	१५	
१२	४२	३५	१	२	८	५	७	३	५३	५९	१	५	३	४	

लग्न से दशमभाव साधन सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
मे. ०	८	८	८	८	८	८	८	८	८	९	९	९	९	९	९
	२३	२४	२५	२५	२६	२७	२८	२८	२९	०	०	१	२	३	३
	५६	३७	१८	५९	४०	२१	२	४३	२४	५	४०	२८	१५	५	४३
	२६	५६	२६	३८	४३	४२	४७	२२	२७	५२	११	५९	२६	३	३८
वृ. १	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९
	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
	४३	२३	२९	१९	१०	१	५२	४२	३३	२४	१८	६	८	९	१०
	३९	२१	६	२४	४२	२४	६	५४	४४	३०	१८	२	५४	५४	५४
मि. २	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	११	११
	१५	१६	१७	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२९	०	१
	४६	५२	५७	३	९	१५	२०	२९	३१	२७	४१	५१	५	९	३२
	४८	४२	५८	२	२७	३	३८	१३	५१	२४	२०	२०	१२	८	५३
क. ३	११	११	११	११	११	११	११	११	०	०	०	०	०	०	०
	२१	२२	२३	२४	२६	२७	२८	२९	१	२	३	४	६	७	८
	१४	१७	४१	५५	९	२३	३६	५०	४	१८	३२	४७	२	१९	३१
	०	४५	३५	२३	१६	२४	४१	२६	५३	१९	७	५१	२२	४१	१५
सिं. ४	०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	१	१	. १	१	१
	२७	२८	२९	०	१	२	४	५	६	७	८	९	१०	१२	१३
	९	१८	५७	३७	४६	५५	४	१४	२३	३२	२२	६	२०	३५	४४
	२५	३९	५२	३	१९	३३	४८	२	१६	३०	५४	३२	५	८	१२
क. ५	१	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२
	२९	०	१	२	३	४	५	६	७	८	१०	११	१२	१३	१४
	३८	४१	४३	४५	४७	५०	५२	५४	५९	५९	१	३	५	७	१०
	२	८	८	१२	१	०	५	८	३	०	१३	२१	३५	५२	८

१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अंश
९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	मे.०
४	५	६	६	७	८	९	१०	११	११	१२	१३	१४	१५	१५	
३६	२३	१०	५७	४४	३१	१८	५	७	४२	३२	२४	२४	६	५६	
४९	१०	४६	४६	४८	४०	५१	१	१४	५०	४३	४८	५०	१	४८	
१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	११	१०	१०	१०	१०	वृ.१
०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	
११	१२	१३	१३	१५	१६	१७	१८	१८	२०	२१	२४	२३	३५	४१	
५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	३४	३०	४०	१७	
११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	मि.२
२	४	५	६	७	८	१०	११	१२	१३	१५	१६	१७	१८	२०	
४६	०	१४	२८	४१	५५	९	२३	३७	५१	४	१८	३१	४६	०	
३७	३८	२४	१०	५५	५५	४०	२९	१७	२	५७	४२	२७	२१	१३	
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	क. ३
९	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२६	
४५	०	९	१८	२७	३७	४६	५५	४	१४	२३	३२	४१	५०	०	
४२	१३	३५	३९	५२	६	१९	३५	४८	१२	१६	२९	४३	५६	१२	
१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	सिं.४
१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	
३५	४४	१०	१२	१४	१६	१८	२७	३०	३२	३४	३६	३८	४०	५२	
१२	१९	२०	५५	४	८	९	१०	१५	५५	७	२	५	८	१	
२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	क.५
१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	
१२	१४	१६	१४	२१	२१	२९	२७	३०	३२	३५	३७	४०	४२	४३	
१	०	७	१४	२२	३०	३२	१	५	८	९	७	२५	५०	५९	

दशम लग्न सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
	३३	३३	३३	३४	३४	३४	३४	३४	३४	३४	३५	३५	३५	३५	३५	३५	३६	३६	३६	३६	३६	३६	३७	३७	३७	३७	३७	३७	३८	३८
तु. ६	३२	४२	५१	१	१०	२०	२९	३९	४८	५८	७	१७	२७	३६	४६	५६	६	१५	२५	३५	४५	५५	५	१५	२५	३५	४५	५५	५	१५
	४६	११	३६	४	३२	२	३३	५	४४	१४	५१	२९	१०	५१	३४	१९	५	५३	४३	३५	३०	२३	२०	१९	२१	२६	२६	२९	३९	४९
	३८	३८	३८	३८	३९	३९	३९	३९	३९	३९	४०	४०	४०	४०	४०	४१	४१	४१	४१	४१	४१	४२	४२	४२	४२	४२	४३	४३	४३	४३
बृ. ७	२६	३६	४६	५६	७	१७	२७	३८	४८	५९	९	२०	३०	४१	५१	२	१२	२३	३४	४४	५५	६	१७	२७	३८	४९	०	११	२२	३२
	०	१३	२८	४३	४	२४	४७	१०	३५	२	३१	२	३४	७	४२	१९	५७	३६	१६	५८	४२	२६	११	५७	४५	४३	२२	१४	३	५४
	४३	४३	४४	४४	४४	४४	४४	४५	४५	४५	४५	४५	४५	४६	४६	४६	४६	४६	४६	४७	४७	४७	४७	४७	४८	४८	४८	४८	४८	४८
धं. ८	४३	५४	५	१६	२७	३८	४९	०	१०	२१	३२	४३	५४	५	१६	२७	३७	४८	५९	१०	२१	३२	४२	५३	४	१५	२५	३६	४७	५७
	४६	३८	३१	२५	१८	१२	६	०	५४	४८	४१	३५	२८	२२	१४	६	५७	४८	३८	२७	१५	३	४९	३४	१७	२	४३	२४	३	४१
	४९	४९	४९	४९	४९	५०	५०	५०	५०	५०	५०	५१	५१	५१	५१	५१	५१	५२	५२	५२	५२	५२	५२	५३	५३	५३	५३	५३	५३	५४
म. ९	८	१८	२९	३९	५०	०	११	२१	३२	४२	५२	३	१३	२३	३३	४४	५४	४	१४	२४	३४	४४	५४	४	१४	२४	३४	४४	५३	३
	१८	५३	२६	५८	२९	५७	२४	४९	१३	३६	५६	१७	३१	४६	५९	११	२०	२८	३४	३८	४१	४१	३९	३७	२९	२५	१७	७	५५	४१
	५४	५४	५४	५४	५४	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५७	५७	५७	५७	५७	५७	५८	५८	५८	५८	५८	५८
कुं. १०	१३	२३	३२	४२	५२	१	११	२०	३०	३९	४९	५८	८	१७	२७	३६	४५	५५	४	१४	२३	३२	४१	५१	०	९	१८	२८	३७	४६
	२६	९	५०	३०	९	४६	१६	५५	२७	५८	२८	५६	२३	४९	१४	३७	५९	२१	४१	१	१९	३७	५४	१०	२५	३९	५३	६	१९	३२
	५८	५९	५९	५९	५९	५९	५९	०	०	०	०	०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	२	२	२	२	२	२	३	३	३
मी. ११	५५	४	१४	२३	३२	४१	५०	०	९	१८	२७	३६	४५	५५	४	१३	२२	३१	४१	५०	५९	८	१८	२७	३६	४५	५५	४	१४	२३
	४४	५५	७	१७	२८	३९	४९	०	१०	२१	३२	४२	५३	४	१६	२८	४०	५३	७	२१	३५	५०	६	२३	४१	५९	१८	३९	०	२

नियम – सूर्यफल इष्टकाल में जोड़ने से लग्नसारणी द्वारा जो अंक घटयादि निकलेगा, उसमें से 15 दण्ड घटाकर जो घटयादि होगा वह दशम सारणी में जिस राश्यंश का फल होगा, वही दशम लग्न होगा।

दशम लग्न सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
	३	३	३	४	४	४	४	४	४	४	५	५	५	५	५	५	६	६	६	६	६	६	७	७	७	७	७	७	८	८
मे. ०	३२	४२	५१	१	१०	२०	२९	३९	४८	५८	७	१७	२७	३६	४६	५६	६	१५	२५	३५	४५	५५	५	१५	२५	३५	४५	५५	५	१५
	४६	११	३६	४	३२	२	३३	५	४४	१४	५१	२९	१०	५१	३४	१९	५	५३	४३	३५	३०	२३	२०	१९	१९	२१	२६	३१	३९	४९
	८	८	८	८	९	९	९	९	९	९	१०	१०	१०	१०	१०	११	११	११	११	११	११	१२	१२	१२	१२	१२	१३	१३	१३	१३
वृ. १	२६	३६	४६	५६	७	१७	२७	३८	४८	५९	९	२०	३०	४१	५१	२	१२	२३	३४	४४	५५	६	१७	२७	३८	४९	०	११	२२	३२
	०	१३	२९	४३	४	२४	४७	१०	३५	२	३१	२०	३४	७	४२	१९	५७	३६	१६	५८	४३	२६	११	५७	४५	३३	२२	१४	३	५४
	१३	१३	१४	१४	१४	१४	१४	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१७	१७	१७	१७	१७	१८	१८	१८	१८	१८	१८
मि. २	४३	५४	५	१६	२७	३८	४९	०	१०	२१	३२	४३	५४	५	१६	२७	३७	४८	५९	१०	२१	३२	४२	५३	४	१५	२५	३६	४७	५७
	४६	३८	३१	२५	१८	१२	६	०	५४	३८	४१	३५	२८	२२	१४	६	५७	४८	३८	२७	१५	३	४९	३४	१७	२	४३	२४	३	४१
	१९	१९	१९	१९	१९	२०	२०	२०	२०	२०	२०	२१	२१	२१	२१	२१	२१	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२३	२३	२३	२३	२३	२३	२४
क. ३	८	१८	२९	३९	५०	०	११	२१	३२	४२	५२	३	१३	२३	३३	४४	५४	४	१४	२४	३४	४४	५४	४	१४	२४	३४	४४	५३	३
	१८	५३	२६	५८	२९	५७	२४	४९	१३	३६	५६	१७	३१	४६	५८	११	२१	२८	३४	३८	४१	४१	३९	३७	२९	२५	१७	७	५५	४१
	२४	२४	२४	२४	२४	२५	२५	२५	२५	२५	२५	२५	२६	२६	२६	२६	२६	२६	२७	२७	२७	२७	२७	२७	२८	२८	२८	२८	२८	२८
सिं. ४	१३	२३	३२	४२	५२	१	११	२०	३०	३९	४९	५८	८	१७	२७	३६	४५	५५	४	१४	२३	३२	४१	५१	०	९	१८	२८	३७	४६
	२६	९	५०	३१	९	४६	१६	५५	२७	५८	२८	५५	२३	४९	१४	३७	५९	२१	४१	१	१९	३७	५४	१९	२५	३९	५३	७	१९	३२
	२८	२९	२९	२९	२९	२९	२९	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३१	३१	३१	३१	३१	३१	३१	३२	३२	३२	३२	३२	३२	३३	३३	३३
कं. ५	५५	४	१४	२३	३२	४१	५०	०	९	१८	२७	३६	४५	५५	४	१३	२२	३१	४१	५०	५९	८	१८	२७	३६	४५	५५	४	१४	२३
	४४	५५	७	१८	२८	३९	४९	०	१०	२१	३२	४२	५३	४	१६	२८	४०	५३	७	२१	३५	५०	६	२३	४१	५९	१८	३९	०	२२

नियम – सूर्यफल इष्टकाल में जोड़ने से लग्नसारणी द्वारा जो अंक घटयादि निकलेगा, उसमें से 15 दण्ड घटाकर जो घटयादि होगा वह दशम सारणी में जिस राश्यंश का फल होगा, वहीदशम लग्न होगा।

लग्न से दशमभाव साधन सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	२२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अंश
तु. ६	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	४	४	४	तु. ६
	०	१	२	३	४	५	६	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२६	२७	२८	२९	०	१	३	
	४५	४	५०	५२	५४	५९	५९	१	२	५	८	१५	२३	३४	४२	५०	१	१०	५९	२८	३८	४८	५६	९	१५	२४	३३	४२	५२	१	
	७	५	८	१३	१५	१९	२२	२	५	१४	३८	५५	१७	१२	३	०	१	८	१५	२८	८	९	३५	४२	५६	२	८	३	३	७	
वृ. ७	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	५	५	५	५	५	५	५	५	वृ. ७
	४	५	६	७	८	९	११	१२	१३	१४	१६	१७	१८	१९	२०	२२	२३	२४	२५	२७	२८	२९	०	२	३	४	५	६	८	९	
	१०	१९	२९	३८	४३	५३	३	२०	३५	४९	४	१६	३०	४४	५८	१२	२५	३८	५५	७	१९	३४	४८	२	१६	३०	४३	५३	११	२५	
	७	५	३	२	०	१	५	१३	२५	३५	४५	८	३	१०	१	२	५	३	५७	१२	२५	१८	२१	७	४	५	३	१	१५	०	
ध. ८	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	ध. ८
	१०	११	१३	१४	१५	१६	१८	१९	२०	२१	२२	२४	२५	२६	२७	२८	२९	०	१	२	३	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	
	३९	५३	६	२०	३४	४८	२	१५	२९	४३	५७	११	१४	१९	२७	३०	३०	४२	४७	५३	५८	४	१०	१५	१२	२६	३२	३४	३६	४०	
	१४	१	५	३	१५	२२	११	३	२९	१०	१५	२५	४८	३७	३७	३७	४२	३	४	५	३	१५	१२	२०	३०	५	८	३	४५	०	
म. ९	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	म. ९
	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	०	०	१	२	३	४	५	५	६	७	८	९	१०	११	
	३८	३९	४०	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८	४९	५०	५२	१०	१	१	५२	४३	३३	२४	१५	६	५७	४६	३८	२९	२०	१०	७	
	१	२	५	२	१	०	३	१	५०	२२	११	८	१५	३	३२	४०	४५	५०	७	३	४	९	१३	२१	२७	३५	४०	४५	५०	५०	
कुं.१०	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	८	८	८	८	कुं. १०
	११	१२	१३	१४	१४	१५	१६	१७	१८	१८	१९	२०	२१	२१	२२	२३	२४	२४	२५	२५	२६	२७	२७	२८	२९	२९	०	१	२	२	
	४०	५	२२	९	५६	४३	३०	२१	१४	५१	३८	२४	५	४६	३८	३९	१६	५९	१२	५६	३४	१५	५६	३७	१८	५९	४०	२१	३०	३	
	५१	३२	३३	३३	३०	२२	७	५	९	१०	५२	८	३	१५	२७	३७	४८	५९	१	२	३	६	८	१०	१२	५	३०	१५	१६	४	
मी.११	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	मी. ११
	३	४	४	५	६	६	७	८	९	९	१०	१०	११	१२	१२	१३	१४	१५	१५	१६	१७	१७	१८	१९	१९	२०	२१	२१	२२	२३	
	२४	५	४९	२८	९	५०	३२	१२	३	३४	१५	५६	२७	१३	५९	४०	२०	०	३५	२४	५	४६	२८	९	५७	३१	१२	५३	३४	१५	
	३९	१२	५	३	०	८	२	६	७	५	३	४५	४७	३६	२६	१२	४२	३५	१	२	८	५	७	३	५३	५९	१	५	३	४	

लग्न से दशमभाव साधन सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अंश
मे. ०	८	८	८	८	८	८	८	८	८	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	मे.०
	२३	२४	२५	२५	२६	२७	२८	२८	२९	०	०	१	२	३	३	४	५	६	६	७	८	९	१०	११	११	१२	१३	१४	१५	१५	
	५६	३७	१८	५९	४०	२१	२	४३	२४	५	४०	२८	१५	५	४३	३६	२३	१०	५७	४४	३१	१८	५	७	४२	३२	२४	२४	६	५६	
	२६	५६	२६	३८	४३	४२	४७	२२	२७	५२	११	५९	२६	३	३८	४९	१०	४६	४६	४८	४०	५१	१	१४	५०	४३	४८	५०	१	४८	
वृ. १	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१९	१०	१०	१०	१०	वृ.१
	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	
	४३	२३	२९	१९	१०	१	५२	४२	३३	२४	१८	६	८	९	१०	११	१२	१३	१३	१५	१६	१७	१८	१८	२०	२१	२४	२३	३५	४१	
	३९	२१	६	२४	४२	२४	६	५४	४४	३०	१८	२	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	३४	३०	४०	१७	
मि. २	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	मि.२
	१५	१६	१७	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२९	०	१	२	४	५	६	७	८	१०	११	१२	१३	१५	१६	१७	१८	२०	
	४६	५२	५७	३	९	१५	२०	२९	३१	२७	४१	५१	५	९	३२	४६	०	१४	२८	४१	५५	९	२३	३७	५१	४	१८	३१	४६	०	
	४८	४२	५८	२	२७	३	३८	१३	५१	२४	२०	२०	१२	८	५३	३७	३८	२४	१०	५५	५५	४०	२९	१७	२	५७	४२	२७	२१	१३	
क. ३	११	११	११	११	११	११	११	११	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	क. ३
	२१	२२	२३	२४	२६	२७	२८	२९	१	२	३	४	६	७	८	९	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२६	
	१४	१७	४१	५५	९	२३	३६	५०	४	१८	३२	४७	२	१९	३१	४५	०	९	१८	२७	३७	४६	५५	४	१४	२३	३२	४१	५०	०	
	०	४५	३५	२३	१६	२४	४१	२६	५३	१९	७	५१	२२	४१	१५	४२	१३	३५	३९	५२	६	१९	३५	४८	१२	१६	२९	४३	५६	१२	
सिं. ४	०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	१	१	• १	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	सिं.४
	२७	२८	२९	०	१	२	४	५	६	७	८	९	१०	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	
	९	१८	५७	३७	४६	५५	४	१४	२३	३२	२२	६	२०	३५	४४	३५	४४	१०	१२	१४	१६	१८	२७	३०	३२	३४	३६	३८	४०	५२	
	२५	३९	५२	३	१९	३३	४८	२	१६	३०	५४	३२	५	८	१२	१२	१९	२०	५५	४	८	९	१०	१५	५५	७	२	५	८	१	
क. ५	१	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	क.५
	२९	०	१	२	३	४	५	६	७	८	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	
	३८	४१	४३	४५	४७	५०	५२	५४	५९	५९	१	३	५	७	१०	१२	१४	१६	१४	२.१	२१	२९	२७	३०	३२	३५	३७	४०	४२	४३	
	२	८	८	१२	१	०	५	८	३	०	१३	२१	३५	५२	८	१	०	७	.१४	२२	३०	३२	१	५	८	९	७	२५	५०	५९	

लग्न सन्धि = लग्न का मान +षष्ठांश

(प्रथम भाव)

द्वितीय भाव = लग्न सन्धि + षष्ठांश

द्वितीय भाव सन्धि = द्वितीय भाव + षष्ठांश

तृतीय भाव = द्वितीय भाव सन्धि + षष्ठांश

तृतीय भाव सन्धि = तृतीय भाव + षष्ठांश

चतुर्थ भाव = सन्धि (तृ0 भाव) + षष्ठांश

चतुर्थ भाव के बाद अंश में से षष्ठांश को घटा देगें जो मान आया उसे चतुर्थ भाव में जोड़ने पर चतुर्थ की सन्धि आयेगी।

सूत्र - - षष्ठांश = शेषांक

भाव में से अन्तर शेष को जोड़ा तो

चतुर्थ भाव सन्धि अन्तर (शेष)

चतुर्थ भाव सन्धि = - षष्ठांश + चतुर्थ भाव

सन्धि अन्तर

चतुर्थ भाव की सन्धि में यह सन्धि अन्तर जोड़ने पर पंचम भाव आयेगा।

पंचम भाव = चतुर्थ भाव सन्धि + अन्तर (- षष्ठांश)

पंचम भाव सन्धि = पंचम भाव + (- षष्ठांश)

षष्टम भाव = पंचम भाव की सन्धि + (- षष्ठांश)

षष्टम भाव सन्धि = षष्टम भाव + (- षष्ठांश)

इसी प्रकार लग्न के मान में 6 राशि जोड़ने पर सप्तमभाव आयेगा।

सप्तम भाव = लग्न का मान + 6^s

सप्तम भाव संधि = लग्न सन्धि + 6^s

अष्टम भाव = द्वितीय भाव + 6^s

अष्टम भाव सन्धि = द्वितीय भाव सन्धि + 6^s

इसी प्रकार प्रत्येक भाव में 6 राशि जोड़कर बारह भाव की सन्धि तक ज्ञात करेगें।

उदाहरण 1. 23/08/2003 को जातक का जन्म 03:15 प्रातःकाल (27: 15) पर हुआ दशमभाव ज्ञात करो ?

पंचाग से 23/08/2003 का सूर्यादय = 6.07

सूर्यांश = $04^0/05^0/03'/08''$

दिनमान = 32/06

इष्टकाल = 27:15 - 06:07

(घण्टा मिनट) = 21:08

इष्टकाल (घटीपल) = 52/50

लग्न सारणी से सूर्यांश 24: 07

इष्टकाल 04/05 पर + 52: 50

16: 57

लग्न सारणी से (16/57) (घटी/पल) पर लग्न =

इष्टकाल = 52/50

लग्न = 2-28^0-00'

दिनमान = 32/06 दिनार्द्ध = 16/03

नतकाल = 60 - इष्टकाल + दिनार्द्ध

= 60 - 52/50 + दिनार्द्ध

7/10

दिनार्र्द्ध = 16/03

पूर्व नतकाल 23/13

(जन्म अर्द्धरात्रि से लेकर सूर्योदय से पहले हुआ हैं।)

दशम सारणी से सूर्यांश (04-05^0) पर = 40/12

पूर्व नतकाल (-) 23/13

16/59

लग्न 2 – 28° – 00'

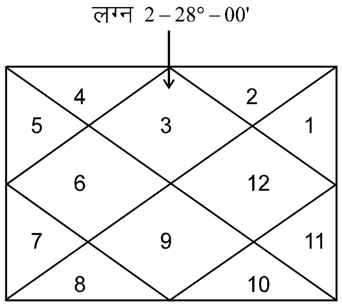

लग्न सन्धि 3 – 11° – 28'–50''

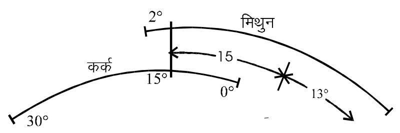

दशम लग्न 16/59 (दशम सारणी से) = 11-18^0-53^0-20''

दशम लग्न = 11-18^0-53^0-20''

+06-00^0-00'-00''

चतुर्थ भाव = 05^s -18^0-53^0-20''

लग्न = 02^s-28^0-00'-20''

षष्ठांश सन्धि = 02^s-20^0-00'-20''

षष्ठांश = $\frac{02\text{-}20^0\text{-}53'\text{-}20''}{6}$ = 00-13^0-25'-53''

लग्न = 02-28^0-00'-00''

षष्ठांश + 00-13^0-28'-53''

लग्न सन्धि = 00-11^0-28'-53''

षष्ठांश + 00-13^0-28'-53''

द्वितीय भाव = 03-24^0-57'-46''

षष्ठांश + 00-13^0-28'-53''

द्वितीय भाव सन्धि= 04-08^0-26'-39''

षष्ठांश + 00-13^0-28'-53''

तृतीय भाव = 05-05^0-24'-25''

षष्ठांश + 00-13^0-28'-53''

तृतीय भाव सन्धि= 05-05^0-24'-25''

षष्ठांश + 00-13^0-28'-53''

चतुर्थ भाव = 05-18^0-53'-18'' उपरोक्त

00-30^0-00'-00''

षष्ठांश	-	00-13^{0}-28’-53’’
षष्ठांश अन्तर		00-16^{0}-31’-07’’ शेष
चतुर्थ भाव		05-18^{0}-53’-18’’
षष्ठांश अन्तर	+	00-16^{0}-31’-07’’
चतुर्थ भाव सन्धि		06-05^{0}-24’-25’’
षष्ठांश अन्तर	+	00-16^{0}-31’-07’’
पंचम भाव		06-21^{0}-55’-32’’
षष्ठांश अन्तर	+	00-16^{0}-31’-07’’
पंचम भाव सन्धि		07-08^{0}-26’-39’’
षष्टम भाव अन्तर	+	00-16^{0}-31’-07’’
षष्टम भाव		08-11^{0}-28’-53’’
षष्टम अन्तर	+	00-16^{0}-31’-07’’
षष्टम भाव सन्धि		08-11^{0}-28’-53’’
सप्तम भाव	=	लग्न का मान +6^{s}
	=	02-28^{0}-00’-0’’+6^{s}
सप्तम भाव	=	08-28^{0}-00’-00’’
लग्न सन्धि	=	06-00^{0}-00’-00’’
	+	09-11^{0}-28’-53’’
सप्तम भाव सन्धि	=	09-11^{0}-28’-46’’
द्वितीय भाव	=	03-24^{0}-57’-46’’
	+	06-00^{0}-00’-00’’
अष्टम भाव		09-24^{0}-57’-46’’
द्वितीय सन्धि		04-08^{0}-26’-39’’
	+	06-00^{0}-00’-00’’
अष्टम भाव सन्धि		10-08^{0}-26’-39’’
तृतीय भाव	=	04-21^{0}-55’-32’’

	+	06-00⁰-00'-00''
नवम भाव		10-21⁰-55'-32''
तृतीय भाव सन्धि		05-05⁰-24'-25''
	+	06-00⁰-00'-00''
नवम भाव सन्धि		11-50⁰-24'-25''
चतुर्थ भाव	=	05-18⁰-53'-20''
	+	06-00⁰-00'-00''
दशम भाव		11-18⁰-53'-32'' उपरोक्त
चतुर्थ भाव सन्धि		06-05⁰-24'-25''
	+	06-00⁰-00'-00''
दशम भाव सन्धि		00-05⁰-024'-25''
पंचम भाव		06-21⁰-55'-32''
	+	06-00⁰-00'-00''
एकादश भाव		00-21⁰-55'-32''
पंचम सन्धि		07-08⁰-26'-39''
	+	06-00⁰-00'-00''
एकादश भाव सन्धि		01-08⁰-26'-39''
षष्टम भाव		07-24⁰-57'-46''
	+	06-00⁰-00'-00''
द्वादश भाव		01-24⁰-57'-46''
षष्टम सन्धि		08-11⁰-28'-53''
	+	06-00⁰-00'-00''
द्वादश भाव सन्धि		02-11⁰-28'-53''

उदा0 1 चलित चक्र में 24 कोष्ठक बनाये जाते हैं। 12 कोष्ठक बारह भावों के एवं 12 कोष्ठक सन्धियों के। कुछ विद्वान जन्म कुण्डली की तरह 12 कोष्ठक ही बनाते हैं। वे सन्धिगत ग्रह को अगले भाव में लिख देते हैं। चलित चक्र बनाने के लिए पहले हम ग्रह स्पष्ट लेते हैं। फिर भाव स्पष्ट को। यदि ग्रह स्पष्ट, भाव

स्पष्ट के तुल्य या कम होगा तो उसी भाव में लिखा जायेगा। यदि ग्रह स्पष्ट ग्रह सन्धि तुल्य या अगले भाव से कम होगा तो सन्धि में लिखा जायेगा।

उपरोक्त उदाहरण का चलित चक्र बनाते हैं-

- ग्रह वाले कोष्ठक में सूर्य स्पष्ट 04-05^0-55’-58’’ हैं और भाव स्पष्ट में द्वितीय भाव 03-24^0-57’-46’’ हैं, और द्वितीय भाव सन्धि के 04-08^0-26’-36’’ हैं जो सूर्य स्पष्ट से ज्यादा हैं इस कारण सूर्य द्वितीय भाव मे स्थित है।

- चन्द्रमा स्पष्ट 02-19^0-48’-29’’ हैं और भाव स्पष्ट में, द्वादश भाव की सन्धि 02-11^0-28’-53’’ हैं और लग्न स्पष्ट 02-28^0-00’-00’’ हैं जो कि चन्द्र स्पष्ट से अधिक हैं और द्वादश भाव की सन्धि से कम हैं अतः चन्द्रमा द्वादश भाव सन्धि में होगा।

- मंगल स्पष्ट 10-11^0-49’-02’’ हैं और भाव स्पष्ट में अष्टम भाव की सन्धि 10-08^0-26’-39’’ से नवम भाव स्पष्ट 10-21^0-55’-32’’ अधिक हैं जो मंगल अष्टम भाव की सन्धि में होगा।

- बुध स्पष्ट 05-02^0-09’-05’’ हैं और भाव स्पष्ट में तृतीय भाव स्पष्ट 04-21^0-55’-32’’ से चतुर्थ भाव स्पष्ट 05-18^0-53’-18’’ अधिक हैं जो कि बुध स्पष्ट में अधिक है इस कारण बुध स्पष्ट तृतीय भाव में होगा।

- गुरू स्पष्ट 04-05^0-21’-03’’ हैं। द्वितीय भाव स्पष्ट 03-24^0-57’-46’’ पर हैं और द्वितीय भाव की सन्धि 04-08^0-26’-39’’ हैं जो गुरू स्पष्ट से अधिक हैं। अतः गुरू द्वितीय भाव में होगा।

- शुक्र स्पष्ट 04-07^0-42’-56’’ हैं द्वितीय भाव स्पष्ट में 03-24^0-57’-46’’ पर हैं और द्वितीय भाव सन्धि 04-08^0-26’-39’’ हैं जो कि द्वितीय भाव स्पष्ट से अधिक हैं और द्वितीय भाव की सन्धि से कम हैं इस कारण शुक्र द्वितीय भाव में रखा जायेगा।

- शनि स्पष्ट 02-15^0-44’-23’’ हैं द्वादश भाव की सन्धि 02-11^0-28’-53’’ पर हैं और लग्न स्पष्ट 02-28^0-00’-00’’ पर हैं। शनि स्पष्ट, लग्न स्पष्ट से कम हैं और द्वादश भाव की सन्धि से अधिक हैं। इस कारण शनि ग्रह को द्वादश भाव की सन्धि में रखा जायेगा।

- राहु स्पष्ट 01-00^0-40’-11’’ है और एकादश भाव 00-21^0-55’-32’’ हैं जो कि राहु स्पष्ट से कम हैं राहु को एकादश भाव में रखा जायेगा।

- केतु स्पष्ट 07-00^0-40’-11’’ हैं और पंचम भाव 06-21^0-55’-32’’ हैं और पंचम भाव की सन्धि 07-08^0-26’-39’’ हैं। पंचम भाव, केतु स्पष्ट से कम हैं और पंचम भाव की सन्धि, केतु स्पष्ट से ज्यादा हैं इस कारण केतु पंचम भाव में होगा।

5.2.4 चलित चक्र (24 कोष्ठक)

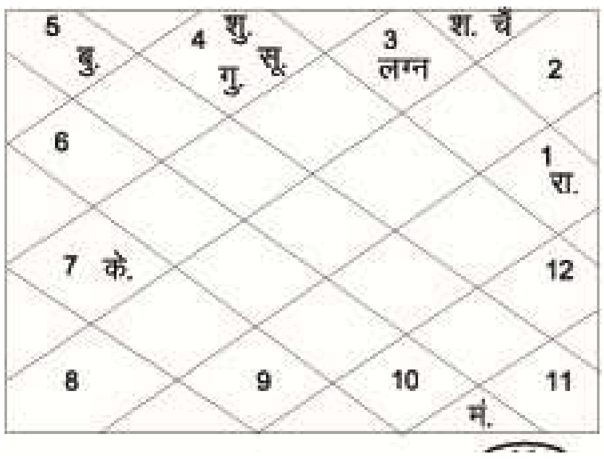

सूर्य स्पष्ट = 04 – 05° – 55'–58''
चन्द्रमा = 02 – 19° – 48'–29''
मंगल = 10 – 11° – 49'–02''
बुध = 05 – 02° – 09'–05''
गुरू = 04 – 05° – 29'–03''
शुक्र = 04 – 07° – 42'–56''
शनि = 02 – 15° – 44'–23''
राहु = 01 – 00° – 40'–11''
केतु = 07 – 00° – 40'–11''

5.2.5 द्वादश स्पष्ट चक्र

''द्वादश भाव स्पष्ट चक्र''

	प्रथम	सन्धि	द्वितीय	सन्धि	तृतीय	सन्धि	चतुर्थ	सन्धि	पंचम	सन्धि	षष्ठ	सन्धि
राशि	02	03	03	04	04	05	05	06	06	07	07	08
अंश	28°	11°	24°	08°	21°	05°	18°	05°	21°	08°	24°	11°
कला	00'	28'	57'	26'	55'	24'	53'	24'	55'	26'	57'	28'
विकर्ण	00''	53''	46''	39''	32''	25''	18''	25''	32''	39''	46''	53''
	सप्तम	सन्धि	अष्टम	सन्धि	नवम	सन्धि	दशम	सन्धि	एकादशी	सन्धि	द्वादश	सन्धि
राशि	08	09	09	10	10	11	11	00	00	01	01	02
अंश	28°	11°	24°	08°	21°	05°	18°	05°	21°	08°	24°	11°
कला	00'	28'	57'	26'	55'	24'	53'	24'	55'	26'	55'	28'
विकर्ण	00''	53''	46''	39''	32''	25''	20''	25''	32''	39''	46''	53''

उदा0 2. जन्म समय 3 बजकर 42 मिनिट सायंकाल दशम साधन एवं चलित चक्र ज्ञात करें।

दिनांक - 25/08/2003 पचांग से

सूर्योदय - 6: 08

सूर्यांश - 04/06/58/34

दिनमान - 31/57

दिनार्द्ध = 15/58

जन्म समय = 15: 42

सूर्योदय - 06: 08

इष्टकाल 09: 34

इष्टकाल (घटी/पल) = 23/55

सूर्यांश (04/06/53/34) पर लग्नांश 04/06 → 24/19

04/07 → 24/30

सूर्य अंश = 24/30

इष्टकाल + 23/55

48/25

लग्न सारणी से 48/25 पर लग्न

नतकाल (पश्चिम नत) = दिनार्द्ध - दिनमान + इष्टकाल

= 15/58 - 31/57 + 23/55

= 39/53 - 31/57

पश्चिम नत = 7/56

(दशम सारणी से) सूर्य अंश 04/07

= 40/31

नतकाल + 7/56

48/27

दशम लग्न 48/27 पर → 5-28^0-26'-40''

दशम भाव = 5-28^0-26'-40''

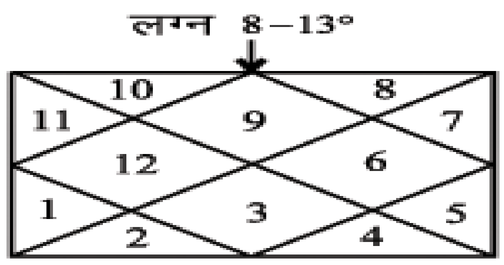

दशम भाव	-	5-28^0-26’-40’’
	+	06-00^0-00’-00’’
चतुर्थ भाव	=	11-28^0-26’-40’’
लग्न	-	08-13^0-00’-00’’
षष्ठाश	03-15^0-26’-40’’	
षष्ठांश	=	03-15^0-26’-40’’ / 6
षष्ठांश	=	03-15^0-26’-40’’
लग्न सन्धि	=	लग्न का मान +षष्ठांश
प्रथम भाव (लग्न)=		08-13^0-00’-00’’
	+	00-17^0-34’-27’’
लग्न सन्धि		09-00^0-34’-27’’
षष्ठांश	+	00-17^0-34’-27’’
द्वितीय भाव		09-18^0-08’-54’’
द्वितीय भाव		09-18^0-08’-54’’
षष्ठांश	+	0-17^0-34’-27’’
द्वितीय भाव सन्धि		10-05^0-43’-21’’
षष्ठांश	+	00-17^0-34’-27’’
तृतीय भाव		10-23^0-07’-48’’
षष्ठांश	+	00-17^0-34’-27’’
तृतीय सन्धि		11-10^0-50’-15’’
षष्ठांश	+	00-17^0-34’-27’’
चतुर्थ भाव		11-28^0-26’-42’’
		00-30^0-00’-00’

षष्ठांश	-	00-17^0-34’-27’’
सन्धि अन्तर		00-12^0-25’-33’’
शेषांक		
चतुर्थ भाव		11-28^0-26’-40’’
सन्धि अन्तर	+	00-12^0-25’-33’’
चतुर्थ भाव सन्धि		00-10^0-52’-13’’
चतुर्थ भाव सन्धि		00-10^0-52’-13’’
सन्धि अन्तर	+	00-12^0-25’-33’’
पंचम भाव		00-23^0-17’-46’’
	+	00-12^0-25’-33’’
पंचम भाव सन्धि		01-05^0-43’-19’’
अन्तर	+	00-12^0-25’-33’’
षष्टम भाव		01-18^0-08’-52’’
	+	00-12^0-25’-33’’
षष्ठम् भाव सन्धि		02-00^0-34’-25’’
लग्न का मान		08-13^0-00’-00’’
	+	06-00^0-00’-00’’
सप्तम भाव		02-13^0-00’-00’’
लग्न सन्धि		09-00^0-34’-27’’
	+	06-00^0-00’-00’’
सप्तम भाव सन्धि		03-00^0-34’-27’’

द्वितीय भाव + 6 = अष्टम भाव

अष्टम भाव	=	09-18^0-08’-54’’+6
	=	03-18^0-08’-54’’
अष्टम भाव सन्धि	=	10-05^0-43’-21’’+6
	=	04-05^0-43’-21’’

नवम भाव	=	10-23^0-17’-48’’
	+	06-00^0-00’-00’’
		04-23^0-17’-48’’
नवम भाव सन्धि	=	11-10^0-52’-15’’
	+	06-00^0-00’-00’’
		05-10^0-52’-15’’
चतुर्थ भाव	=	11-28^0-26’-42’’
	+	06-00^0-00’-00’’
दशम भाव		05-28^0-26’-42’’
चतुर्थ भाव सन्धि	=	00-10^0-52’-13’’
	+	06-00^0-00’-00’’
दशम भाव सन्धि		06-10^0-52’-13’’
पंचम भाव	=	00-23^0-17’-46’’
	+	06-00^0-00’-00’’
एकादश भाव		06-23^0-17’-46’’
पंचम भाव सन्धि		01-05^0-43’-19’’
	+	06-00^0-00’-00’’
एकादश भाव सन्धि		07-05^0-43’-19’’
षष्ठ भाव =		01-18^0-08’-52’’
	+	06-00^0-00’-00’’
द्वादश भाव		07-18^0-08’-52’’
षष्ठ भाव सन्धि		02-00^0-34’-25’’
द्वादश भाव सन्घि	+	06-00^0-00’-00’’
		08-100^0-34’-52’’

''द्वादश भाव स्पष्ट चक्र''												
	प्रथम	सन्धि	द्वितीय	सन्धि	तृतीय	सन्धि	चतुर्थ	सन्धि	पंचम	सन्धि	षष्ठ	सन्धि
राशि	8	9	9	10	10	11	11	0	0	1	1	2
अंश	13°	00°	18°	05°	23°	10°	28°	10°	23°	05°	18°	00°
कला	00'	34'	08'	43'	17'	52'	26'	52'	17'	43'	08'	34'
विकर्ण	00''	27'	54''	21''	48'	15''	40''	13''	46''	19''	52''	25'
	सप्तम	सन्धि	अष्टम	सन्धि	नवम	सन्धि	दशम	सन्धि	एकादशीसन्धि		द्वादश	सन्धि
राशि	2	3	3	4	4	5	5	6	6	7	7	8
अंश	13°	00°	18°	05°	23°	10°	28°	10°	23°	05°	18°	00°
कला	00'	34'	08'	43'	17'	52'	26'	52'	17'	43'	08'	34'
विकर्ण	00''	27'	54''	21''	48'	15''	40''	13''	46''	19''	52''	25'

चलित चक्रः-

चलित चक्र में 24 कोष्ठक बनाये जाते हैं। 12 कोष्ठक 12 भावों के एवं 12 कोष्ठक सन्धियों के होते हैं। वे सन्धिगत ग्रह हो अगले भाव में लिख देते हैं। ग्रह स्पष्ट और भाव स्पष्ट करने के पश्चात् ही चलित चक्र बनाया जा सकता हैं। यदि ग्रह स्पष्ट, भाव स्पष्ट के समान या कम होता है तो उसी भाव में लिखा जायेगा यदि स्पष्ट ग्रह सन्धि के समान या अगले भाव से कम होगा तो सन्धि में लिखा जायेगा।

उदाहरण 5.

- सूर्य स्पष्ट हैं, 04-07^{0}-22'-29'' और अष्टम भाव की सन्धि 04-05^{0}-43'-21'' हैं जो कि सूर्य स्पष्ट से कम हैं और इस कारण सूर्य अष्टम भाव की सन्धि में रखा जायेगा।
- चन्द्र स्पष्ट 03-09^{0}-16'-45'' हैं और सप्तम भाव की सन्धि 03-00^{0}-34'-27'' हैं जो कि चन्द्रमा स्पष्ट से कम हैं इस लिए चन्द्रमा सप्तम भाव की सन्धि में होगा।
- मंगल स्पष्ट 10-11^{0}-46'-40'' हैं और द्वितीय भाव की सन्धि 10-05^{0}-43'-21'' से मंगल स्पष्ट अधिक हैं तृतीय भाव 10-23^{0}-17'-48'' से मंगल स्पष्ट कम हैं। इस कारण मंगल स्पष्ट द्वितीय भाव की सन्धि में होगा।
- बुध स्पष्ट 05-02^{0}-34'-08'' हैं और नवम भाव 04-23^{0}-17'-48'' हैं जो कि बुध स्पष्ट से कम हैं। नवम भाव सन्धि हैं जो कि बुध स्पष्ट से अधिक हैं। इस कारण नवम भाव में बुध रहेगां।
- गुरू स्पष्ट 04-05^{0}-42'-33'' है अष्टम भाव 03-18^{0}-08'-54'' हैं जो कि गुरू स्पष्ट से कम हैं और अष्टम भाव की सन्धि 04-05^{0}-43'-21'' हैं जो गुरू स्पष्ट से अधिक हैं इसलिए गुरू अष्टम भाव में होगा।

- शुक्र स्पष्ट 04-09^{0}-45'-57'' हैं और अष्टम भाव की सन्धि 04-05^{0}-43'-21'' हैं जो कि शुक्र स्पष्ट से कम हैं। इसलिए शुक्र को अष्टम भाव की सन्धि में रखा जायेगा।
- शनि स्पष्ट 02-15^{0}-52'-54'' हैं सप्तम भाव 02-13^{0}-00'-00'' हैं जो कि शनि स्पष्ट से कम हैं इसलिए शनि स्पष्ट की सप्तम भाव में होगा।
- राहु स्पष्ट 01-00^{0}-35'-16'' हैं और पंचम भाव 00-23^{0}-17'-46'' हैं जो कि राहु स्पष्ट भाव से कम हैं इसलिए राहु को पंचम भाव में रखा जायेगा।
- केतु स्पष्ट 07-00^{0}-35'-16'' हैं और एकादश भाव 06-23^{0}-17'-46'' हैं जो कि केतु स्पष्ट के भाव से कम हैं। इसलिए केतु एकादश भाव में ही रहेगा।

सारणी द्वारा लग्न स्पष्ट निकालने की सुगम विधि -

जिस दिन का लाभ बनाना हो, उस दिन के सूर्य के राशि, अंश,पंचांग में देखकर लिख लेना चाहिए। पृष्ठ सं; 6,7 पर दी गई है लग्न सारणी में राशि का कोष्ठक बायी और अंश का कोष्ठक उपरी भाग में है। सूर्य केजो राशि, अंक लिखे हैउसका फल लग्न सारणी में अर्थात् सूर्य की राशि के सामने और अंश के नीचे जो अंक मिले उसे ईष्टकाल के घटी, पलों मं जोड दें, वहीं योग या उसके लगभग अंक ईष्टकाल केघटी पलों में जोड़ दे, वही योग या उसके लगभग अंक जिस कोष्ठक में मिले उसके बायीं तरफ राशि का अंक और उपर अंश का अंक प्रापत होगा। वही राशयादि लग्न मान होगा। इसके बाद त्रैराशिक गणित द्वारा कला, विकला का भी प्रमाण निकाल लेना चाहिए।

उदाहरण ' वि;सं; 2001 वैशाख शुक्ल 2 सोमवार को 23 घटी 22 पल ईष्टकाल का लग्न बनता है। इस दिन पंचाग में सूर्य स्पष्ट 01/10/28/57 लिखा है। इसको एक स्थान पर लिख लिया । लग्न सारणी में शून्य राशि अर्थात् मेष राशि के सामने और 10 अंश के नीचे 4/7/42 संख्या लिखि है,इसे ईष्टकाल में जोड़ा ।

22/22/10 ईष्टकाल में

+4/07/42

27/29/42

इस योगफल को पुन: लग्न सारणी में देखने पर निम्नलिखित अंक कहीं नहीं मिले 27/29/42 किन्तु सिंह राशि के 23 वें अंश के कोष्ठक में 27/24/59 संख्यामिली। इस राशि के 24 वें अंश के कोष्ठक में 27/36/6 अंक संख्या है। यह संख्या अभीष्ट योग की अंक संख्या से अधिकहै। अत: 23 अंक सिंह का ग्रहण करना चाहिए। अतएवं लग्न का मान 4/23 रायादि हुआ। कला, विकला निकालने के लिए 23 वें अंश 24 वें अंश कोष्ठक के अंकों का एवं पूर्वोक्त योगफल और 23 वें अंश के कोष्ठक के अंशों का अन्तर कर लेना चाहिए।

द्वितीय अन्तर की संख्या को 60 से गुणा कर गुणनफल में प्रथम अन्तर संख्या का भाग देने से कलायें आयेगी। शेष को पुन: 60 से गुणा करके उसी संख्या का भाग देने से विकला आयेगी।

प्रस्तुत उदाहरण् के अनुसार

24 ^{0} एवं सिंह राशि की संख्या 27/36/6 में से

23 ^{0} एवं सिंह राशि की संख्या – 27/124/59 को घटाया

11/07 इसे एक जातीय बनाया

11107×60 – 660+7 ; 667

इष्टकाल में सूर्यफल को जोड़ने से जो फल आया है। वह है 27/29/42 इस योगफल में से 23 अंश की संख्या को घटाया 27/29/42

- 27/24/59

4/43 इसे एक जातीय बनाया

4143×60 – 240+43 – 283

283×60 – 16980÷667 – 25 कला

16980/667 25 25 कला

291 शेष त्योग दिया अत: राश्यादि स्पष्ट लग्न 4/2325'/27'' हूआ।

दशमभाव साधन करने के लिए सारणी द्वारा सुगम विधि

1 नत काल को इष्टकाल मानकर जिस दिन का दशम भाव साधन करना हो उसे दिन के सूर्य के राशि अंश पंचांग में देखकर लिख देना चाहिए पृ. 8एवं 9 पर दी गई दशम लग्न सारणी में राशि को कोष्ठक बायीं और अंश का कोष्ठक उपरी भाग में है। सूर्य के जो राशि अंश लिखे है उनका फल सारणी में सूर्य की राशि के सामने और अंश के नीचे जो अंक संख्या मिले उसे पश्चिम नत हो तो नतरूप इष्टकाल में जोड देने से और पूर्व नत हो तो सारणी के अंकों में से घटा देने से जो अंक आवे उनको पुन: दशम सारणी में देखे जो बायीं और राशि और उपर अंश मिले है यह राशि अंश ही दश्म लग्न के राशि अंश होगे कला विकला का आनयन पष्ठ 25 के अनुसार निकाल लेना चाहिए।

2 ईष्टकाल मे से दिनार्द्व घटाकर जो शेष आये वे दशम भाव का ईष्टकाल होगा यदि ईष्टकाल में से दिनार्द्ध न घट सके तो इष्टकाल में से 60 छटी जोड कर दिनार्द्ध घटाने से दशल का ईष्टकाल होता है ईष्टकाल पर से प्रथम नियम के अनुसार दशम सारणी द्वारा – दशम लग्न साधन करना चाहिए।

3 लग्न सारणी द्वारा लग्न बनाते समय सूर्य फल में ईष्टकाल जोडने से जो घटयादि अंश आवे, उसमें 15 दठी घटाने से शेष अंश सारणी में किस राशि अंश का फल हो वहीं दशम लग्न होगा।

।। लग्न से दशम भाव साधन।।

लग्न राशि अंशों द्वारा फल लेकर राशि के सामने और अंश के नीचे जो अंक संख्या लग्न से दशमभाव साधन सारणी में मिले वही दशम भाव होगा।

5.3 सारांश

इस इकाई में दशम भाव लग्न पर कैसे प्रभाव डालता है इसको उदाहरण द्वारा समझाने का प्रयास किया गया हैं। लग्न निकालनें के पश्चात् दशम लग्न निकालनें के पूर्व नतोन्नत साधन किया गया हैं। जन्म कुण्डली में दशम भाव की महत्वपूर्ण भूमिका हैं। छात्रों द्वारा लग्न से दशम भाव साधन किस प्रकार किया जाए। इसकी पद्धति क्रमवार इस इकाई में प्रस्तुत की गई हैं, तथा ग्रह स्पष्ट एवं सूत्र उदाहरण द्वारा समझाने का प्रयास किया गया हैं।

5.4 बोध प्रश्न

1 नतकाल को कितने भागों में बाँटा गया हैं।

उत्तर दो भागों में बाँटा गया हैं-

1) पूर्वनत

2) पश्चिम नत

2 नतकाल की आवश्यकता किसे निकालने के लिए पड़ती है ?

उत्तर दशम भाव के साधन के लिए।

3 किस भाव में 6 राशिया जोड़ने पर चतुर्थ भाव निकलता है ?

उत्तर दशम भाव + 6 = चतुर्थ भाव

4 षष्ठांश निकालने का सूत्र क्या है ?

उत्तर षष्टांश =

5 सन्धि में पड़े हुए ग्रह का फल कितना होता हैं ?

उत्तर कमजोर या आधा रहता है।

निबंधात्मक प्रश्न:-

1 दिनांक 23/08/2012, समय 8 बजकर 5 मिनिट प्रातः, स्थान कोटा का चलित चक्र व भाव स्पष्ट को निकाले ?

2 नतोन्नत को हुए दशम भाव को निकालने का वर्णन करे ?

5.5 शब्दावली

- षष्ठांश = किसी भी संख्या का छठा भाग षष्ठांश कहलाता है।
- नत = मध्यान्ह रेखा से इष्ट का जो अन्तर होता हैं उसे नत कहते है।
- दिनार्द्ध = दिनमान के आधे भाग को कहते हैं।

5.6 संदर्भ ग्रंथ सूची

1 भारतीय ज्योतिष लेखक डॉ. नेमीचंद्र शास्त्री

2 पंचांग बल्लभमनीराम

लेखकः- श्रीमती विजयलक्ष्मी शर्मा

कनिष्ठ लिपिक वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

इकाई – 6

कारक ग्रह, चर-स्थिर कारक, कारक ज्ञान, होरा द्रेष्काण

इकाई संरचना

6.1. प्रस्तावना
6.2. उद्देश्य
6.3. कारक ग्रह परिचय
6.4. चरकारक
6.4.1. आत्मकारक ग्रह
6.4.2. अमात्यकारक ग्रह
6.4.3. भातृकारक ग्रह
6.4.4. मातृकारक ग्रह
6.4.5. पुत्रकारक ग्रह
6.4.6. ज्ञातिकारक ग्रह
6.4.7. दारकारक ग्रह
6.4.8. दो ग्रहों की समान अंश स्थिति
6.4.9. कारक कुण्डली साधन
6.5. स्थिरकारक ग्रह
6.5.1. भाव व भावेशों द्वारा कारक विचार
6.5.2. ग्रहों द्वारा कारक विचार
6.5.3. अन्य स्थितिवश निर्मित योगकारक ग्रह
6.6. होरा ज्ञान
6.6.1. परिचय
6.6.2. उत्पत्ति
6.6.3. होरा लग्न साधन
6.6.4. होरा चक्र साधन
6.7. द्रेष्काण ज्ञान
6.7.1. परिचय
6.7.2. द्रेष्काण चक्र साधन
6.7.3. द्रेष्काण कुण्डली बनाने की प्रक्रिया

6.8. सारांश
6.9. शब्दावली
6.10. प्रश्नोत्तर
6.11. लघुत्तरात्मक प्रश्न
6.12. सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

6.1. प्रस्तावना

ज्योतिष शास्त्र से संबंधित छठी इकाई है। इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि कारक ग्रह चर-स्थिर कारक, कारक, कारक ज्ञान होरा द्रष्काण क्या है। इसका विशेष रूप से वर्णन किया गया है। ''ज्योतिषां सूर्यादि ग्रहणां बोधक शास्त्रम्'' अर्थात् जिसे शास्त्र के अन्तर्गत सूर्यादि ग्रह और काल का बोध कराया गया है, उसे ज्योतिष शास्त्र कहा जाता है। इन ग्रहों का स्वभाव व प्रभाव मनुष्य पर कैसा रहेगा, उसे विचार करने हेतु कुण्डली का निर्माण किया जाता हैं। कुण्डली के भाव, भावेषों, राशियों, ग्रहों तथा उनके कारकतत्त्व, नक्षत्र, एवं वर्ग कुण्ड़लियों का विचार करने के पश्चात् ही ज्योतिष को जातक की कुण्डली का फलादेष करना चाहिए। अतएव इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप कुण्डली के भाव, भावेष अथवा ग्रहो के चर तथा स्थिर कारक, वर्ग कुण्ड़लियों के विभिन्न अंगों में से होरा द्रेष्काण ज्ञान तथा उसके साधन की प्रक्रिया से अवगत होकर इन्हें अपने व्यवहारिक उपयोग में सम्मिलित करने के लिए सक्षम हो पाऐंगे।

6.2. उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य आपको निम्नलिखित जानकारी उपलब्ध कराना है:

कारक ज्ञान क्या है ?

1. कारक के भेद .... चर व स्थिर कारक।

2. चर कारक के अंतर्गत आने वाले भेद।

3. भाव तथा ग्रहों के कारकतत्त्व।

4. होरा ज्ञान .... होरा लग्न साधन विधि।

5. होरा चक्र साधन की प्रक्रिया।

6. द्रेष्काण कुण्डली का निर्माण।

6.3. कारक ग्रह परिचय

किसी व्यक्ति विशेष की कुण्डली में किसी विशिष्ट कार्य या घटना का धटित होने का संकेतक ग्रह या भाव, कारक कहलाया जाता है। कारक ग्रह अथवा भाव का फल कुंडली मे फलकथन करने में महत्त्वपूर्ण माना गया है।

कारक ग्रहों को दो भागों में विभाजित किया गया है, यह निम्नलिखित है:-

(अ) चर कारक

(ब) स्थिर कारक

6.4. चरकारक

इसे जैमिनीय कारक भी कहा गया है। जैमिनी पद्धति अनुसार ग्रह स्थिर नहीं अपितु चर हैं। चर कारक ग्रहों के अंश बल पर आधारित हैं। अंश बल पर आश्रित होने से कारकत्तव भिन्न कुण्ड़लियों में भिन्न ग्रह होते हैं। अतः ये चरकारक कहलाते हैं। सूर्य से शनि पर्यन्त सप्त ग्रह अंशों के आधार पर सात कारक बनते हैं। अंशों के आधार पर ग्रहों को क्रमबद्ध किया जाए तो सर्वाधिक अंश वाला ग्रह प्रथम कारक तथा न्यूनतम अंश वाला ग्रह सबसे अन्तिम स्थान का कारक कहलाया जाऐगा। अतः चर कारक के क्रमषः 7 भेद स्पष्ट होते है -

(1) आत्म कारक (2) अमात्यकारक (3) भातृकारक (4) मातृकारक (5) पुत्र कारक (6) ज्ञातिकारक (7) स्त्री/दाराकारक।

विभिन्न कारक निम्न प्रकार जाने:-

क्र.	चर कारक ग्रह	अंश बल	कारक तत्त्व
1	आत्म कारक	सर्वाधिक अंश	शारीरिक सुख-दुख
2	अमात्य कारक	द्वितीय अंशबली	वाणी, मंत्रणा, धन, गुरू का विचार
3	भातृकारक	तृतीय अंशबली	पराक्रम, शौर्य, परिश्रम, भाई-बहन का सुख
4	मातृकारक	चतुर्थ अंशबली	माता, मन, भवन, भूमि सर्वसुख का विचार
5	पुत्रकारक पंचम	अंशबली विद्या,	बुद्धि, गुरू एवं संतान सुख विचार
6	ज्ञातिकारक	षष्ठ अंशबली	रोग, रिपु, ऋण, संघर्ष, स्पर्धा आदि का विचार
7	स्त्री/दाराकारक	न्यूनतम अंशबली	पति, पत्नी, ससुराल, साझेदारी, आदि का सुख

6.4.1. आत्मकारक ग्रह

किसी भी राशि में सर्वाधिक अंश पर स्थित ग्रह आत्मकारक होता है। राशियों को छोड़कर जिस ग्रह के भुक्तांश सबसे अधिक हो, वही आत्मकारक ग्रह कहलाता है, इसे लग्नेष का पर्याय कहा गया है। आत्मकारक ग्रह की राशि लग्न की पर्याय बनती है। अतः आत्मकारक ग्रह जिस राशि में स्थित हो उस राशि का सर्वाधिक बली मानते हुए फलकथन के लिए विशिष्ट रूप से विचारणीय मानना अत्यन्त आवश्यक है। सूर्य को नैसर्गिक आत्मकारक ग्रह माना गया है।

आत्मकारक ग्रह को प्रधान माना गया है, आत्मकारक की अनुकूलता, प्रतिकूलता, स्वाभाव, बल आदि के अनुसार ही शेष आत्मादि कारक अपना फल देंगे। अगर आत्मकारक ग्रह जन्मकुण्डली में शुभ अथवा बली हो तो अन्य कारक भी शुभ फल देने में सक्षम होंगे, अन्यथा अन्य कारकों के फल में भी न्यूनता देखने में आयेगी।

फल:

आत्मकारक ग्रह यदि उच्चराशिस्थ, मूल-त्रिकोण या स्वराशिस्थ हो तो जातक भाग्यषाली, धनी, सम्पन्न, यषस्वी होता है। शुभ युक्त आत्मकारक जातक को सुख एवं सौभाग्य प्रदान करता है, इसके विपरीत आत्मकारक का शत्रु राशिस्थ, नीच व दुर्बल होना जातक का दुर्भागय, कष्ट, पीड़ा, धनहानि आदि अशुभ फल का सूचक है। ग्रह की अनुकूलता एवं प्रतिकूलता के अनुरूप ही ग्रह अपनी दषा व अन्तर्दषा के अन्तर्गत शुभ अथवा अशुभ फल प्रदान करते है।

6.4.2. अमात्यकारक ग्रह

अंशों द्वारा क्रमबद्ध करने पर दूसरे क्रम में स्थित ग्रह अमात्यकारक ग्रह कहलाता है। अन्य शब्दों में जो ग्रह आत्मकारक से दूसरे स्थान पर हो अथवा आत्मकारक से कुछ कम अंश वाला ग्रह जो अन्य से अंश में ज्यादा हो वह अमात्यकारक ग्रह होता है, बल व महत्ता में इसका दूसरा स्थान है। आत्मकारक को जहाँ ग्रहों की राजा की श्रेणी में रखा गया है, वही अमात्यकारक को मन्त्री की श्रेणी में रखा है। नैसर्गिक रूप से बुध को आमात्यकारक ग्रह कहा गया हैं, मतान्तर से बुध का शुभ व बली होना अमात्यकारक अनुरूप ही फल प्रदान करता है।

फल:

अमात्यकारक ग्रह का उच्चस्थ, स्वराशि, मूल त्रिकोणस्थ होना जातक को विचारवान, विद्वान्, गुणी, मधुरभाषी, धनी व कुटुम्ब से सुख प्राप्त कराने वाला होता है। अमात्यकारक ग्रह की दषा में जातक धन, मान, वैभव, प्रतिष्ठा एवं परिवार का सुख प्राप्त करता हैं ग्रह का निर्बल, नीच राशिस्थ अथवा शत्रु राशिस्थ होने पर जातक को दुख, दारिद्रय, परिवार सुख में कमी, वाणी में असंयम, कटुता अथवा अपयश देता है।

6.4.3. भातृकारक ग्रह

बल व अंश में तीसरे स्थान पर स्थित ग्रह भातृकारक ग्रह कहलाता है। नाम से ही स्पष्ट प्रतीत भातृकारक ग्रह जातक के भाईयों का सुख अथवा दुख को दर्शाता हैं भातृकारक ग्रह जातक को पराक्रमी धैर्यवान,

शौर्यवान, परिश्रमी अथवा उत्साहित बनाता हें नैसर्गिक रूप से मंगल को भातृकारक ग्रह कहा गया है। छोटे भाई-बहन का सुख अथवा जातक का परक्रम, बल, आदि मंगल ग्रह से कहना चाहिए।

फल:

भातृकारक का उच्चस्थ, स्वराशिस्थ, मित्रराशिस्थ अथवा मूल त्रिकोणस्थ होना जातक को शुभ फल प्रदान करता हैं। जातक को अपने भाई-बहन का उत्तम सुख प्राप्त होता है। वह अपने अनुज द्वारा सुख, स्नेह व सम्मान पाता है। उसे अपने पराक्रम एवं साहस द्वारा किए सभी कार्यों में पूर्ण रूप से सफलता प्राप्त होती है। उसका भुजबल उसकी उत्तम कार्यषैली का प्रतीक बनता है। इसके विपरीत यदि भातृकारक नीच रषिस्थ, शत्रुराशिस्थ अथवा नीच दृष्टिगत होता है तो जातक को भाई-बहन का अल्प सुख होता है। वह दीनहीन, दुर्बल एवं अकर्मण्य बनता है। उसे अपने पराक्रम एवं शौर्यबल से वंचित रहकर अपना जीवन दुर्बल रूप से व्यतीत करना पढ़ता है।

6.4.4. मातृकारक ग्रह:

अषों द्वारा क्रमबद्ध करने पर चतुर्थ स्थान पर आने वाला ग्रह मातृकारक कहलता है यह जातक के सर्वसुखों को दर्शाता है। जातक की माता के सुख-दुख का विचार अथवा मातृ द्वारा मिलने वाले स्नेह का विचार मातृकारक ग्रह से ही किया जाता है। इसके अन्तर्गत आने वाले अन्य कारक भूमि, भवन, पषु, सम्पत्ति, वाहन, नौकर-चाकर, आदि का विचार भी इसी से किया जाता है, इसका नैसर्गिक ग्रह चन्द्रमा है।

फल:

मातृकारक ग्रह यदि उच्चस्थ, स्वराशिस्थ अथवा अपनी मित्र राशि में हो तो जातक को अपनी माता के साथ सम्बन्धो का श्रेष्ठ फल प्राप्त होता है। उसका माता अथवा माता के समान स्त्रियों के साथ विशेष स्नेह अथवा उन्हें सम्मान देने वाला होता है तथा विपरीत में उतना ही स्नेह जातक स्वयं प्राप्त करता है। इसके अतिरिक्त उसे भवन, भूमि, वाहन द्वारा भी लाभ मिलता है। ग्रह का शत्रु राशि, नीच राशि अथवा नीच ग्रहों द्वारा दृष्ट होना जातक को अपनी दशा अन्तर्दशा में अशुभ फल देता है। मातृसुख के साथ भूमि, भवन अथवा वाहन सुख में भी कमी आती है।

6.4.5. पुत्रकारक ग्रह

अंशबल के अनुसार क्रमबद्ध में पाँचवे स्थान पर आने वाला ग्रह पुत्रकारक ग्रह कहलाता है। नाम द्वारा स्पष्ट पुत्रकारक ग्रह, पुत्र सूख में वृद्धि करता हैं जातक, को उत्तम सन्तान की प्राप्ति होती हैं। जातक की बुद्धि, विद्या, विचार, गुरूजन, मित्र आदि का विचार इसी ग्रह द्वारा किया जाना सम्भव है। शास्त्रानुसार इसका नैसर्गिक ग्रह गुरू को कहा गया है। अन्य शब्दों में गुरू को जीव कारक ग्रह भी कहा गया है। अतः गुरू का बली होना पुत्र सुख, विद्या, बुद्धि आदि में शुभ फल देने वाला बनता है।

फल:

पुत्रकारक ग्रह का अपनी राशि, उच्च राशि में, अथवा अपनी मूल त्रिकोण राशि में स्थित होना जातक को बहुमात्रा में पुत्र सुख की प्राप्ति करवाता है। जातक को उच्च विद्या, प्रखर बुद्धि अथवा गुरूजनों के स्नेह की प्राप्ति होती है। जातक का पुत्र कुल को बढ़ाने वाला, निष्ठावान अथवा भाग्यवान होता है। इसके विपरीत नीच राशि, नीच दृष्टिगत अथवा पाप ग्रहों के सानिध्य में रहकर जातक को सन्तानहीन, पुत्र सुख में कमी, बुद्धिहीन, गुरूजनों की अवहेलना करने वाला बनाता है।

6.4.6. ज्ञातिकारक ग्रह

क्रमबद्ध के अनुसार छठे स्थान पर आने वाला ग्रह ज्ञातिकारक ग्रह कहलाता है। जैमिनी ज्योतिष द्वारा इसे चचेर भाई-बहन का कारक भी कहा गया है। जातक के रोग, रिपु, ऋण, मामा, स्पर्धा आदि का विचार इसी से किया जाता है। मंगल को ज्ञातिकारक ग्रह का नैसर्गिक कारक माना गया है। मंगल का बली, शुभ अथवा उच्च राशि में होना, जातक को रोग व ऋण से दूर रखता है तथा मंगल से देखे जाने वाले कारकों में शुभता प्रदान करता है।

फल: ज्ञातिकारक ग्रह का अपनी राशि में होना, स्वक्षेत्री होना तथा उच्च राशि में स्थित होकर शुभ ग्रहों द्वारा सम्बन्ध स्थापित करना जातक को रोग व ऋण मुक्त बनाता है। वह स्पर्धा में अपनी जीत हासिल करता है। पराक्रमी परिश्रमी अथवा शत्रुओं को परास्त करने वाला वीर्यवान होता है। इसके विपरीत नीच राशि अथवा निर्बल ग्रह जातक के रोग व ऋण में वृद्धि करवाता है। शत्रुओं से पराजित होता है अथवा स्पर्धा में पराजय का सामना करना पड़ता है। जातक के चचरे भाई-बहन से शत्रुओं सा व्यवहार करते है।

6.4.7. दाराकारक ग्रह

जन्मकुडली में सबसे न्यूनतम अंश रखने वाला ग्रह दाराकारक ग्रह कहलाता है। इससे जातक का दाम्पत्य सुख का विचार करना चाहिए। पति-पत्नी का स्वभाव, गुण, दोष विचार, सुख, दुःख आदि दाराकारक ग्रह से ही विचारणीय हैं। परस्पर पति अथवा पत्नी के बीच का स्नेह व सहयोग की जानकारी के लिए दाराकारक ग्रह का अध्ययन करना अनिवार्य है। इस ग्रह से दो व्यक्तियों की बीच की साझेदारी का निर्णय लेना चाहिए। पति अथवा पत्नी का ससुराल में सम्मान आदि भी इसी से जाना जाता है। इसका नैसर्गिक ग्रह शुक्र है। शुक्र के बली होने पर उससे सम्बन्धित कारकों का शुभ फल कहना चाहिए।

फल:

ग्रह का बली होना, शुभ ग्रहों से दृष्ट होना, केन्द्र व त्रिकोण से सम्बन्ध रखना, स्वराशि में होना जातक के दाम्पत्य सुख में वृद्धि प्रदान करता है। पति-पत्नी का आपसी सहयोग व स्नेह प्रायः देखा गया है, यदि दाराकारक शुभ व बली हो अन्यथा नीच राशि का दुर्बल दाराकारक ग्रह पापफल में वृद्धि करता है तथा वैवाहिक जीवन में क्लेश दुख व वैमनस्य देता है।

6.4.8. दो ग्रहों की समान अंश स्थिति

कुछ कुण्ड़लियों में प्रायः देखने पर आता है कि दो ग्रहों के समान अंश होते है ऐसे में कलाओं पर निरीक्षण करें, यदि वे भी समान हो तो राहु तक गणना करने का निर्देश ज्योतिष ग्रन्थों में दिया गया है। ऐसे में राहुपर्यन्त 8 ग्रह कारक माने गए हैं। यदि राहु तक गिनने की स्थिति हो तो राहु के स्पष्ट अंषादि को 30 में से घटाकर शेष अंशों को भुक्तांष मानें क्योंकि राहु सदैव वक्रगति से चलता है। उदाहरणतः यदि किसी कुण्डली में राहु वृष राशि के 24 अंश पर स्थित हो तो 30 - 24 त्र 6 अंश बल राहू का जानें।

बृहत् पाराशर के अनुसार कुछ लोग राहु सहित सदैव गणना करके आठ कारक होते हैं, ऐसा मानते हैं। आठ कारक वाले मत में पितृकारक अधिक माना जाता है। पराषर एवं जैमिनी सूत्रों मे दोनों ही विकल्प रखे गऐ है, परन्तु सप्तकारक वाले पक्ष को प्रमुख माना गया है।

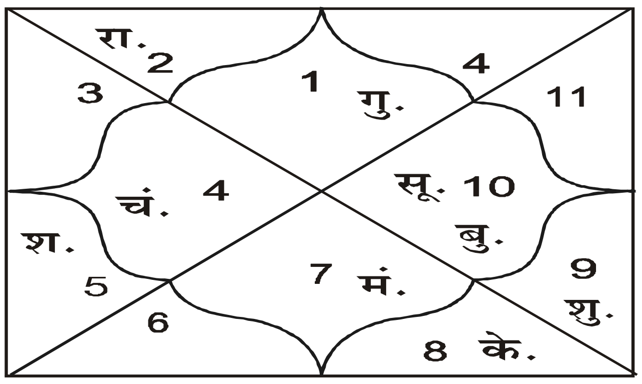

उदाहरण: कुण्डली में लग्नादि नौ ग्रह निम्न अंशों पर स्थित है:

लग्न	-	12:15.4	सूर्य	-	9:10:20
चद्रंमा	-	3:8:16	मंगल	-	6:5:18
बुध	-	9:10:20	गुरू	-	12:24:24
शुक्र	-	8:16:6	शनि	-	4:24:26
राहु	-	1:15:55	केतु	-	7:15:55

प्रस्तुत मेष लग्न कुण्डली में सर्वाधिक अंश पाने वाला ग्रह शनि है, अतः वह आत्मकारक ग्रह कहलायेगा। इसके विपरीत न्यूनतम अंश पाने वाला ग्रह मंगल दाराकारक/स्त्रीकारक कहलायेगा। सूर्य व बुध एक ही अंश में स्थित होने के कारण राहु भी क्रमबद्ध में सम्मिलित हो जाऐगा, ग्रहों के कारक निम्न तालिका द्वारा जाने -

ग्रह	**अंश:कला**	**कारक**
शनि	24:26	आत्मकारक
गुरू	24:24	अमात्यकारक

शुक्र	16:6	भातृकारक
राहु	15:55	मातृकारक
सूर्य	10:20	पुत्रकारक
बुध	10:20	पुत्रकारक
चंद्रमा	8:16	जातिकारक
मंगल	5:18	दाराकारक/स्त्रीकारक

निम्न कुण्डली में सूर्य और बुध के समान अंश होने पर दोनों को ही पुत्रकारक श्रेणी में लिया गया है।

6.4.9. कारक कुण्डली

इस कुण्डली में आत्मकारक ग्रह को ही लग्न माना जाता है। अन्य कारक आत्मकारक से शुभ स्थानों पर स्थित हो शुभ ग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हो तो ऐसी स्थिति में कारक ग्रहों की दशा अथवा उससे सम्बन्धित फल शुभ होंगे अन्यथा पाप प्रभाव कारक अपनी दषा में अशुभ फल देगा। कारक कुण्डली निम्नलिखित उदारहण से समझे:

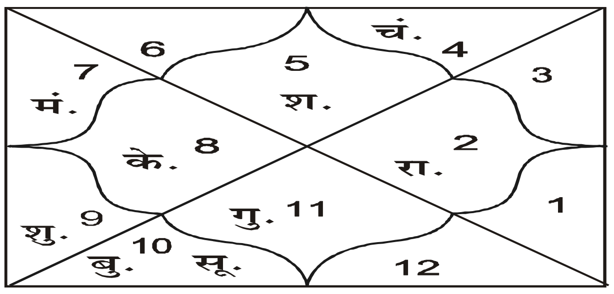

उपरोक्त कारक कुण्डली में सर्वाधिक अंश पाने वाला ग्रह शनि है, अतः इसे लग्न माना गया है। कुण्डली में सप्तमेश शनि तथा पंचमेश गुरू का दृष्टि सम्बन्ध हो रहा है। योगकारी ग्रह मंगल का लग्नेश व गुरू से दृष्टि सम्बन्ध ने जातक का प्रेम-विवाह कराया। परन्तु विवाह पश्चात् सम्बन्धों में वैमनस्य हुआ।

6.5. स्थिरकारक ग्रह

ज्योतिष शास्त्र में पाराशरी सिद्धान्तो द्वारा कारक को स्थिर बताया गया है कुण्डली में भाव अथवा ग्रह कुछ विषयों के विशेष कारक बनते हैं। ये कारक सभी जातकों के लिए सामान्य व एकरूप फल देते हैं। उदाहरण के लिए यदि किसी जातक की आजीविका के सन्दर्भ पर विचार करना है तो दशम भाव अथवा दशमेश से विचार करना चाहिए। इसी प्रकार पुत्र का विचार करने के लिए पंचम भाव, पंचमेश अथवा गुरू ग्रह (सन्तान कारक) का से भी विचार करना अनिवार्य है। हर भाव अथवा ग्रह के स्थिर कारक बताऐ गये है, इसे हम निम्न तालिका द्वारा समझेंगे।

6.5.1. भाव व भावेषों द्वारा कारक विचार

भाव	भावेश कारक नैसर्गिक	कारक ग्रह
लग्न/लग्नेश	देह-विचार, गुण, स्वभाव, व्यवहार	सूर्य
द्वितीय/द्वितीयेश	धन, कुटुम्ब, वाणी, नेत्र, पितृपक्ष	गुरू
तृतीय/तृतीयेश	रोग, ऋतु, ऋण, स्पर्धा, संघर्ष	मंगल
चतुर्थ/चतुर्थेश	मात, मन, वाहन, भवन, हृदय,	चंद्र
पंचम/पंचमेश	बुद्धि, विद्या, संतान, पेट, मित्र	गुरू
षष्ठ/षष्ठेष	रोग, ऋपु, ऋण, स्पर्धा, संघर्ष	मंगल
सप्तम/सप्तमेश	विवाह, पति-पत्नी, व्यापार, यात्रा	शुक्र
अष्टम/अष्टमेश	मृत्युस्थान, ससुराल पक्ष, गुप्त धन	शनि
नवम/नवमेश	भाग्य, पिता, भक्ति, ईष्टकृपा	गुरू
दशम/दश्मेश	कर्म स्थान, आजीविका, उच्चपद	बुध
एकादश/एकादशेश	धनलाभ, बड़ा भाई, सामाजिक प्रतिष्ठा	गुरू
द्वादष/द्वादशेश	व्यव, शय्या-सुख, भोग, दण्ड, मोक्ष	शनि

6.5.2. ग्रहों द्वारा कारक विचार

ग्रह	कारक
सूर्य	पिता, राज्यपद
चन्द्रमा	मातृकारक, मन
मंगल	भातृ कारक, पराक्रम, साहस
बुध	व्यापार, व्यवसाय, वाणी, लेखन
गुरू	सन्तान, विद्या, धन, पतिसुख
शुक्र	दाम्पत्य सुख, पति-पत्नी
शनि	आयुष्य, दुःख, आलस्य, विलम्बता
राहु	मामा, मासी, ननिहाल
केतु	दादा का परिवार

6.5.3. अन्य स्थितिवष योग कारक ग्रहः

कई बार ग्रह स्थितिवश भी कारक बनते है, इन्हें योगकारी ग्रह भी कहा गया है। योगकारी ग्रहों की दशा-अन्तर्दशा में उनसे सम्बन्धित कारकों का विशेष शुभ फल प्राप्त होता है। ग्रहों की योगकारक बनने की स्थति निम्न प्रकार है:

1. जन्म समय में जो ग्रह स्वराशि, मित्र राशि अथवा अपनी उच्च राशि में स्थित होकर केन्द्र मे हो वह कारक कहलाते हैं। जैसे 1, 4, 7, 10 में ग्रह उच्चादि हो तो कारक कहलायेंगे।
2. कोई ग्रह केन्द्र अथवा त्रिकोण दोनो का स्वामी हो तो वह विशेष योगकारी ग्रह बनता है। उदाहरण के लिए कर्क लग्न मे मंगल (त्रिकोण) पंचम तथा दशम भाव (केन्द्र) का स्वामी है अतः कर्क लग्न वालों के लिए मंगल ग्रह विशेष योगकारप्रद हुआ।

फलः जिस जातक की कुण्डली में ग्रह उपर्युक्त निम्न स्थिति द्वारा कारक बनते है वह नीच वंष में उत्पन्न होकर भी राजा तुल्य जीवन व्यतीत करता है, व्यक्ति राजा के समान धनी, सुखी, ऐश्वर्यवान, मान, प्रतिष्ठा, प्राप्त करता है।

6.6. होरा ज्ञान

भारतीय ज्योतिष शास्त्र के स्कन्धत्रय के अन्तर्गत होरा, सिद्धान्त और संहिता तीन अंश माने गये हैं तथा स्कन्धपंच के अंतर्गत-होरा, सिद्धान्त, संहिता, प्रष्न और शकुन ये पाँच अंग माने गए है। स्कन्ध-पंच का विवरण निम्न प्रकार है:-

6.6.1. होरा

यह ज्योतिष शास्त्र का वह स्कन्ध है, जिसमें व्यक्तियों को अपने जीवन के बारे में मार्गदर्शन प्राप्त होता है। उसके पूर्व जीवन में प्रारब्ध किए गऐ कर्मों का शुभ या अशुभ फल वर्तमान जीवन में किस प्रकार मिल पायेगा, उसका ज्ञान समय से पूर्व होरा द्वारा ही ज्ञात हो सकता है।

सिद्धान्त: सिद्धांत भाग ही जयोतिष शास्त्र का सर्वप्रथम भाग है। यह भाग मुख्यतः गणित शास्त्र का प्रदर्शक है। कालगणना सौर, चन्द्र मासों का प्रतिपादन, ग्रहगतियों का निरूपण, ग्रह-नक्षत्र की स्थिति इसी स्कन्ध के अन्तर्गत सम्मलित है।

संहिता:

इसमें भूषोधन, मेलापक, ग्रहोपकरण, इष्टि का द्वार ग्रह-प्रवेश, जलाशय निर्माण, मांगलिक कार्यों के मुहूर्त्त, उल्कापात, ग्रहों के उदय-अस्त का फल, ग्रहचार का फल एवं ग्रहणफल आदि विषयों का निरूपण विस्तारपूर्वक किया गया है।

प्रश्नशास्त्र:

यह तत्काल फल बताने वाला शास्त्र है। इसमे प्रश्नकर्ता के उच्चारित अक्षरों पर से फल का प्रतिपादन किया है। इस शास्त्र में तीन सिद्धान्तो का प्रवेश हुआ है – प्रश्नाक्षर सिद्धान्त, प्रश्नलग्न सिद्धान्त तथा स्वरविज्ञान सिद्धान्त।

शकुन शास्त्र:

इसका अन्य नाम निमित्तशास्त्र बताया गया है। पूर्वकाल में इसे पृथक् स्थान न देकर अपितु संहिता के अन्तर्गत का विषय ही माना गया था। आगे चलकर इस शास्त्र ने अपना अलग रूप प्राप्त कर लिया है।

इकाई के मूल रूप होरा ज्ञान को ध्यान में रखते हुए हम इस ही विषय का संक्षिप्त रूप में अध्ययन करेंगे।

6.6.2. होरा ज्ञान की उत्पत्ति:

इसका दूसरा नाम जातक शास्त्र है। इसकी उत्पत्ति 'अहोरात्र' शब्द से हुई है। अहरोत्र शब्द दिन और रात्रि का बोधक है। इसी शब्द के आदि और अन्तिम अक्षर का लोप होकर ''होरा'' शब्द प्रचलन में आया है। जन्मकालीन ग्रहों की स्थिति के अनुसार द्वादष भावों के फल जातक के जीवन पर क्या प्रभाव देंगे, उसका विस्तारपूर्वक प्रतिपादन इसके अन्तर्गत किया गया हैं।

6.6.3. होरा लग्न साधन:

तथा सार्धद्विघटिका मितादर्कोदयाद द्विज।

प्रयाति लग्नं तन्नाम होरालग्नं प्रचक्षते।।

इष्टघट्यादिकं द्विध्न पंचाप्तं भादिक च यत्।

योज्यमौदयिके भानौ होरालग्नं स्फूटं हि तत्।। बृहत्पाराशर होराशास्त्र: 5-415

सूर्योदय से जन्मेष्ट काल तक प्रति 2.5 घटी में एक-एक होरा लग्न का प्रमाण होता है। अतः अपने इष्टकाल को दो से गुणा कर 5 का भाग देने पर जो राश्यादि लब्धि हो, उसे उदयकालिक सूर्य में योग कर देने से स्पष्ट होरा लग्न होता है।

उदाहरण:

जन्मेष्ट काल 5/25 को 2 से गुणा किया तो 10/50 हुआ, इसमें 5 का भाग दिया तो 02/10/0/0 राष्यादि हुए, इसे उदयकालिक सूर्य 03/20/4/25 में योग किया तो 06/0/4/25 हुआ और यही होरा लग्न हुआ।

6.6.4. होरा चक्र साधन:

15 अंश का एक होरा होता है, इस प्रकार एक रषि में दो होरा होते हैं। विषम राशि-मेष, मिथुन आदि में 15 अंश तक सूर्य का होरा और 16 अंश से 30 अंश तक चन्द्रमा का होरा होता है। समराशि-वृष, कर्क आदि में 15 अंश तक चन्द्रमा का होरा और 16 अंश से 30 अंश तक सूर्य का होरा होता है। समराशि में पूर्वार्द्ध में चन्द्रमा की ओर उत्तरार्द्ध में सूर्य की होरा होती है। सूर्य और चन्द्रमा के होराधिपति क्रमषः पितृ

और देव होते हैं। राशि की आधी होरा कही जाती है, अतः एक राशि में दो होरा और 12 राशि में 24 होरा होते है।

जन्मपत्री में होरा लिखने के लिए पहले लग्न में देखना होगा कि किस ग्रह का होरा है, यदि सूर्य का होरा हो तो होरा-कुण्डली की लग्नराशि और चन्द्रमा का होरा हो तो होरा-कुण्डली की लग्नराशि होती है। होरा-कुण्डली में ग्रहों के स्थान के लिए ग्रहस्पष्ट के राश्यादि से विचार करना चाहिए। नीचे होराज्ञान के लिए होराचक्र दिया जाता है, इनमें सूर्य और चन्द्रमा के स्थान पर उनकी राशियाँ दी गयी हैं।

होरा चक्र

अंश	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुंभ	मीन
15	5	4	5	4	5	4	5	4	5	4	5	4
30	4	5	4	5	4	5	4	5	4	5	4	5

उदाहरण - लग्न 4:23:25:27 अर्थात् सिंह राशि के 23 अंश 25 कला 27 विकला पर स्थित है, सिंह राशि के 15 अंश तक सूर्य की होरा एवं 16 अंश के आगे 30 अंश तक का चन्द्रमा की होरा होती है। अतः यहाँ चन्द्रमा का होरा हुआ और होरालग्न 4 माना जायेगा।

ग्रह स्थापित करने के लिए स्पष्ट ग्रहों पर विचार करना है, पूर्व में स्पष्ट सूर्य 00:10:07:34 अर्थात् मेष राशि का 10 अंश 7 कला 34 विकला है, मेष राशि में 15 अंश तक सूर्य की होरा होता है, अतः सूर्य अपने होरा-5 में हुआ, चन्द्रमा का स्पष्ट मान 01:00:26:47 है, वृष राशि का 00 अंश 26 कला 47 विकला है, वृषराशि में 15 अंश तक चन्द्रमा की होरा होती है। मिथुनराशि का 21 अंश 52 कला 45 विकला है। मिथुन राशि में 16 अंश से 30 अंश तक चन्द्रमा की होरा होती है अतः मंगल चन्द्रमा के होरे-4 में हुआ। बुध 0:23:21:31 मेष राशि का 23 अंश 21 कला 31 विकला है। मेष राशि में 16 अंश से चन्द्रमा की होरा होती है अतः बुध चन्द्रमा के होरा-4 में हुआ। इसी प्रकार बृहस्पति सूर्य के होरा-5 में, शुक्र सूर्य के होरा-5 में, शनि सूर्य के होरा-5 में, राहु चन्द्रमा के होरा-4 में और केतु चन्द्रमा के होरा-4 में आया।

होरा कुण्डली चक्र

चं. मं. के. बु. रा. 4
5 शु. सू. गु. श.

6.7. द्रेष्काण ज्ञान

राशित्रिभागा द्रेष्काणास्ते च शट्प्रिषदीरिताः।

परिवृत्तित्रयं तेंशां मेषादेः क्रमषो भवेत्।।

स्वपंचनवमानां च राशीनां क्रमष्च ते।

नारदाडगस्तिदुर्वासा द्रेष्काणेषाष्चरादिषु।। बृहत्पाराषर होराशास्त्र, 7/7-8

6.7.1. परिचयः-

राशि का तृतीय भाग द्रेष्काण कहा जाता है। तीस अंशों की एक राशि में दस-दस अंशों के तीन भाग होते है इसलिए प्रत्येक राशि में तीन द्रेष्काण निम्न प्रकार है -

10-100 अंशों तक - प्रथम द्रेष्काण

100-200 अंशों तक - द्वितीय द्रेष्काण

200-300 अंशों तक - तृतीय द्रेष्काण

जिस किसी राशि के प्रथम द्रेष्काण में ग्रह हो तो उसी राशि का, द्वितीय द्रेष्काण में उस राशि से पंचम राशि का और तृतीय द्रेष्काण में उस राशि से नवम राशि का द्रेष्काण होता है। द्रेष्काण की राशि के अनुसार ही द्रेष्काण के स्वामी होते है।

जैसे वृष राशि में 10 अंश तक पहला द्रेष्काण का होगा और उस द्रेष्काण के स्वामी शुक्र होंगे। वृष राशि के 11-20 अंश तक द्वितीय द्रेष्काण वृष से पांचवी राशि कन्या का होगा और उसके स्वामी बुध होंगे। वृष राशि के 21-30 अंश तक तृतीय द्रेष्काण वृष से नवम मकर राशि का होगा ओर उस द्रेष्काण के स्वामी शनि होंगे।

6.7.2. द्रेष्काण चक्र साधनः-

द्रेष्काण को सरलता से निकालने के लिए नीचे द्रेष्काण चक्र दिया जाता रहा है।

द्रेष्काण चक्र

अंश मेष	वृष मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु मकर	कुम्भ	मीन		
1-10	1 2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
10-20	5 4	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3
20-30	9 8	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7

6.7.3. द्रेष्काण कुण्डली बनाने की प्रक्रिया

जन्मपत्री में द्रेष्काण कुण्डली बनाने की प्रक्रिया यह है कि लग्न जिस द्रेष्काण मे हो, वही द्रेष्काण कुण्डली की लग्न राशि होगी। द्रेष्काण कुण्डली मे लग्न क आगे अन्य भावों में एक-एक आगे की रषियाँ स्थापित कर लेवे। ग्रह की स्थपना के लिए अलग-अलग द्रेष्काण निकालकर प्रत्येक ग्रह को उसकी द्रेष्काण राशि में स्थापित कर लेवे।

उदाहरण:

स्पष्ट लग्न	4/28/30/1	सिंह राशि
सूर्य	12/18/10/2	मेष राशि
चन्द्र	7/26/20/101	वृश्चिक राशि
मंगल	8/14/15/7	धनु राशि
बुध	12/16/17/15	मेष राशि
गुरू	4/18/20/0	सिंह राशि
शुक्र	7/27/14/10	वृश्चिक राशि
शनि	7/8/10/5	वृश्चिक राशि
राहु	3/25/5/10	कर्क राशि
केतु	9/25/5/10	मकर राशि

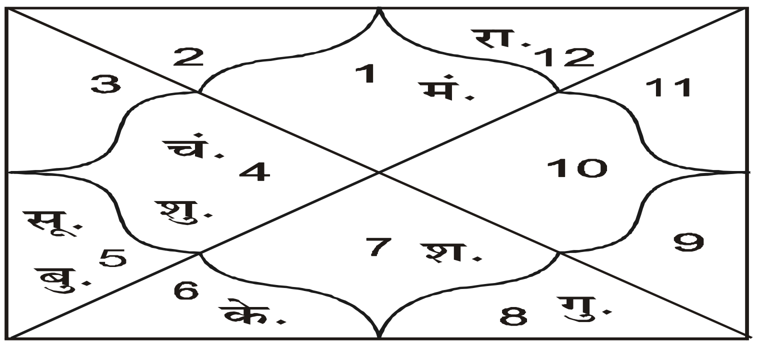

प्रस्तुत कुण्डली में लग्न स्पष्ट 04/28/30/1 अर्थात् सिंह राशि के 28 अंश, 30 कला और 1 विकला है। यह लग्न सिंह राशि के तीसरे द्रेष्काण मे हैं अतः सिंह से नवम राशि मेष आती है। इसलिए द्रेष्काण कुण्डली का लग्न मेष होगा, इसी प्रकार हम अन्य ग्रह भी स्थापित करेगे।

सूर्य:

मेष राशि में 18/10/2 में हैं यह 10 अंश से आगे है, इसलिए द्वितीय द्रेष्काण में हुआ। मेष से 5 तक गिनने पर सिंह राशि आती है। द्रेष्काण चक्र में मेष राशि के नीचे द्वितीय द्रेष्काण में .5 लिखा है। सूर्य को उस

अंक की राशि जो सिंह है, वहाँ स्थापित कर लेवे। सिंह राशि का स्वामी सूर्य ही है। अतः सूर्य स्वग्रही होकर अपनी राशि के द्रेष्काण में स्थित है।

चन्द्रः

चन्द्रमा वृश्चिक राशि के 26 अंश, 20 कला और 10 विकला पर स्थित है। यह 20 अंश से ज्यादा हैं इसलिए तृतीय द्रेष्काण में हुआ। वृश्चिक से 9 तक गिनने पर कर्क राशि आई द्रेष्काण चक्र में वृश्चिक राशि के नीच तीसरे द्रेष्काण में कर्क राशि है। अतः चंद्रमा कर्क राशि के द्रेष्काण में है। कर्क राशि का स्वामी स्वयं चन्द्रमा है। चन्द्रमा अपने ही द्रेष्काण में है।

मंगल: मगल धनु रवि के 14 अंश 15 विकला और 7 कला में है। यह 10 अंश आगे होने से द्वितीय द्रेष्काण का हुआ। द्रेष्काण में 1 अंक लिखा है। अतः मंगल मेष राशि के द्रेष्काण में है। यहाँ मंगल भी अपनी स्वराशि के द्रेष्काण में स्थित है।

बुधः

बुध मेष राशि के 16 अंश, 17 किला और 15 विकला में स्थित है। यह 10 अंश से ज्यादा है इसलिए द्वितीय द्रेष्काण में हुआ द्रेष्काण चक्र में मेष राशि के नीचे द्वितीय स्थान पर 5 अंश लिखा है, अतः बुध ग्रह की स्थापना सिंह राशि में करें। अन्य शब्दों में बुध सिंह राशि के द्रेष्काण में है। सिंह राशि के स्वामी सूर्य है, इसलिए बुध को सूर्य के द्रेष्काण में कहेंगे।

बृहस्पतिः

गुरू सिंह राशि के 18 अंश 20 कला पर स्थित हैं यह अंश 10 से ज्यादा है, इसे हम द्वितीय द्रेष्काण की श्रेणी मे रखेंगे। द्वितीय द्रेष्काण में ग्रह की स्थिति होने से उस राशि से 5 राशि आगे गिनने पर धनु राशि आयेगी। इसे हम द्रेष्काण चक्र से देखेंगे तो सिंह राशि के नीचे द्वितीय द्रेष्काण में 9 अंक लिखा है। अतः बृहस्पति धनु राशि अथवा स्वराशि के द्रेष्काण में स्थित हैं।

शुक्रः

शुक्र, वृश्चिक राशि के 27 अंश 14 कला और 10 विकला में है। यह अंश 20 से भी ज्यादा है, अतः तृतीय द्रेष्काण की श्रेणी में आते हुए वृश्चिक से 9 गिनने तक कर्क राशि के द्रेष्काण में आयेगा। द्रेष्काण चक्र द्वारा देखने पर वृश्चिक राशि के नीचे तृतीय स्थान पर 4 अंश कर्क राशि को ही दर्शाता है। कर्क राशि के स्वामी चन्द्रमा हैं इसलिए शुक्र को चन्द्रमा के द्रेष्काण में कहेंगे।

शनिः

शनि वृश्चिक राशि के 8 अंश 10 कला और 5 विकला में है। यह 1 से 10 अंश के भीतर ही है इसलिए प्रथम द्रेष्काण में है। प्रथम द्रेष्काण उसी राशि का होता है। जिसमें वे स्वयं स्थित है। अतः शनि को वृश्चिक राशि के अन्तर्गत ही लेंगे। द्रेष्काण चक्र में वृश्चिक राशि के नीचे प्रथम स्थान पर 8 अंक लिखा है जो

वृश्चिक राशि को स्पष्ट करता है। वृश्चिक राशि के स्वामी मंगल है। अतएव शनि को मंगल के द्रेष्काण में कहेंगे।

राहु:

राहु कर्क राशि के 25 अंश 5 कला और 10 विकला में है, यह 20-30 अंश भीतर आते हुए तृतीय द्रेष्काण की श्रेणी के अन्तर्गत आयेगा। अतः कर्क से 9 तक गिनने पर मीन राशि आऐगी। द्रेष्काण चक्र द्वारा देखने पर कर्क राशि के नीचे तृतीय स्थान पर 12 अंक लिखा होना मीन राशि को स्पष्ट करता है मीन राशि के स्वामी गुरू होने से राहु गुरू द्रेष्काण का कहलायेगा।

केतु:

केतु मकर राशि के 25 अंश 5 कला और 10 विकला में है। यह 20 अंश से आगे 20-30 अंश के भीतर की श्रेणी अर्थात् तृतीय द्रेष्काण में स्थित है। मकर राशि से 9 गिनने तक कन्या राशि आऐगी। द्रेष्काण चक्र में मकर राशि के नीचे तृतीय स्थान पर 6 अंक लिखा हैं जो कन्या राशि को स्पष्ट करता है, कन्या राशि के स्वामी बुध है। अतएव केतु बुध के द्रेष्काण में है।

6.8. सारांश

उपरोक्त वर्णित इकाई में हमने ज्योतिष शास्त्र के तीन विभिन्न एवं महत्त्वपूर्ण अंग कारक ज्ञान, होरा ज्ञान, अथवा द्रेष्काण ज्ञान का अध्ययन किया है। इकाई के ''कारक ज्ञान'' के अन्तर्गत हमने चरकारक के भेद क्रमश: आत्मककारक, अमात्यकारक, भातृकारक, मातृकारक, पुत्रकारक, ज्ञातिकारक अथवा दाराकारक के नियम, कारकतत्त्व, एवं उनके फलो को भली भॉति समझाने का प्रयास किया। इसके अतिरिक्त भाव, भावोषों तथा ग्रहों के स्थित कारक का ज्ञान भी आपको प्राप्त हो सकेगा।

इकाई के दूसरे भाग के अन्तर्गत आपको प्राचीन भारतीय ज्योतिष के स्कन्धत्रय के महत्तपूर्ण अंश ''होरा ज्ञान'' उसकी उत्पत्ति, लग्न साधन विधि तथा होरा चक्र साधन विधि का ज्ञान प्राप्त हो पाएगा।

इकाई का तीसरा भाग ''द्रेष्काण ज्ञान'' है। ग्रहों के बलाबल का ज्ञान करने के लिए दषवर्ग का साधन ज्योतिष शास्त्र में किया जाता हें दषवर्ग में होरा, द्रेष्काण, सप्तमांश, नवमांष, दषमांश, द्वादषांश, षोडषांश, त्रिषांश और षष्ट्यंश परिगणित किए गए हैं। अतएव इसमें विद्यार्थियों को प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय द्रेष्काण का राशियों के अंश के अनुसार ज्ञान, द्रेष्काण चक्र एवं द्रेष्काण कुण्डली बनाने की प्रक्रिया आदि को अवगत कराया गया है।

6.9. शब्दावली

- आत्कारक ग्रह = सर्वाधिक अंशयुक्त ग्रह
- दाराकारक ग्रह = न्यूनतम अंशयुक्त ग्रह

- योगकारक ग्रह = विशेष स्थितिवश निर्मित शुभफलदायक ग्रह
- उदयकालिक ग्रह = सूर्योदय के समय ग्रहों की स्थिति
- होरा = राशि का आधा भाग अर्थात् 15 अंश
- द्रेष्काण = राशि का दशम भाग अर्थात् 03 अंश

6.10. प्रश्नोत्तर

1 कारक ग्रह क्या है? व्याख्या कीजिए।

उत्तर: किसी व्यक्ति विशेष की कुण्डली में किसी विशिष्ट कार्य या घटना का घटित होने का संकेतक ग्रह या भाव कारक कहलाया जाता है।

2 कारक के दो भाग बताईए।

उत्तर: कारक के दो भाग चर एवं स्थिर कारक है।

3 चर करक कितने प्रकार के हैं? नाम स्पष्ट कीजिए।

उत्तर: चर कारक के 7 भेद कहे गऐ है। आत्मकारक, अमात्यकारक, भातृकारक, मातृकारक, पुत्रकारक, ज्ञातिकारक, दाराकारक।

4 सर्वाधिक एवं न्यूनतम अंश पर आने वाले चर कारकों के नाम स्पष्ट कीजिए।

उत्तर: सर्वाधिक अंश - आत्मकारक

न्यूनतम अंश - दाराकारक/स्त्रीकारक

5 लग्न, सप्तम एवं नवम भाव के नैसर्गिक स्थिर कारक ग्रह बर्ताइए?

उत्तर: लग्न - सूर्य, सप्तम-शुक्र, नवम-गुरू

6 चतुर्थ भाव के स्थिर कारक तत्त्व बताईए।

उत्तर: चतुर्थ भाव के स्थिर कारक तत्त्व माता, मन, भवन, वाहन, सास, हृदय आदि है।

7 होरा का आषय क्या है?

उत्तर: मनुष्य के प्रारब्ध में किए सगए कर्मों के फल का ज्ञान एवं उसका मार्गदर्शन होरा द्वारा ज्ञात किया जा सकता है।

8 एक राशि में कितनी होरा हो सकती है?

उत्तर: 15 अंश का एक होरा होता है, अतः इसे प्रकार एक राशि में दो होरा होते है।

9 द्रेष्काण किसे कहते हैं?

उत्तर: राशि का तृतीय भाग द्रेष्काण कहा जाता है।

10 अंशों के अनुसार तीन द्रेष्काणों का उल्लेख कीजिए।

उत्तर:	1-10 अंश	-	प्रथम द्रेष्काण
	10-20 अंश	-	द्वितीय द्रेष्काण
	20-30 अंश	-	तृतीय द्रेष्काण

6.11. लघुत्तरात्मक प्रश्न

1 चर कारक क्या है? एवं उनके भेदों को स्पष्ट कीजिए।

2 भाव अथवा ग्रहों के स्थिर कारक तत्वों को स्पष्ट कीजिए।

3 स्थितिवश बने योग कारक ग्रहों के सिद्धान्त बताइऐ।

4 होरा लग्न साधन एंव चक्र साधन की प्रक्रिया स्पष्ट करें।

5 द्रेष्काण चक्र साधन की प्रक्रिया एवं द्रेष्काण कुण्डली बनाने की प्रक्रिया को उदाहरण सहित स्पष्ट करें।

6.12. सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सारावली
सम्पादक: डॉ. मुरलीधर चतुर्वेदी
प्रकाशक: मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

2. बृहत्पाराशर होराशास्त्र
सम्पादक: सुरेश चन्द्र मिश्र
प्रकाशक: रंजन पब्लिकेशन, दिल्ली।

3. जैमिनीसूत्रम्
सम्पादक: डॉ. मुरलीधर चतुर्वेदी
प्रकाशक:

4. भारतीय ज्योतिष
व्याख्याकार: डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री
प्रकाशक: भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली।

इकाई – 7

(नवमांश, सप्तमांश, त्रिशांश) सहित दश वर्ग विचार

इकाई की रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना
7.2 उद्देश्य
7.3 दशवर्ग विचार
7.3.1 घेरा कुण्डली विचार
7.3.2 डेठकाण विचार
7.3.3 सप्तमांश विचार
7.3.4 दशमांश विचार
7.4 द्वादशांश कुण्डली विचार
7.5 षोडशांश कुण्डली विचार
7.6 त्रिशांश विचार
7.7 षठष्यांश विचार
7.8 पारिजात आदि वैशेषिकांश विचार
7.9 सारांश
7.10 प्रश्नावली लघुउत्तरीय तथा उत्तरमाला
7.11 शब्दावली
7.12 संदर्भ ग्रथ सूची

7.1 प्रस्तावना

इस इकाई में दश वर्गों का विचार मूल रूप से किया गया है। चूंकि मनुष्य फल की इच्छा रखने वाला प्राणी है। अत: कुण्डली के सम्पूर्ण फल की प्राप्ति के लिए यहां पर इन वर्गों का विचार पूर्णतया रूप से किया गया है। जैसे होरा कुण्डली से सम्पदा और सुख का विचार किया जाता है। ठीक इसी प्रकार डेष्कोण कुण्डली से भाइयों के सुख तथा इनसे सहयोग एवं लाभ का विचार किया जाता है। ठीक इसी

तरह सप्तमांश चक्र से संतति का एवं पुत्र पौत्री का विचार किया जाता है। एवं द्वादशांश से पिता एवं माता के सुख का विचार किया जाता है तथा त्रिशांश चक्र से अरिष्ट फलों का विचार एवं इस का समाधान किया जाता है। इसी प्रकार यहां सभी वर्गों का विचार एवं समाधान पूर्ण रूपेण दर्शाया गया है।

7.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप निम्न लिखित विषयों के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे –

- होरा कुण्डली बनाने की विधि ज्ञात करेगें
- डेष्काण कुण्डली बना पायेगें
- सप्तमांश कुण्डली की जानकारी प्राप्त करेंगे।
- नवमांश कुण्डली का विचार कर पायेगें।
- दशमांश कुण्डली का बनायेगें
- द्वादशांश कुण्डली का ज्ञान होगा
- षोडशांश कुण्डली बनायेगे
- त्रिशांश विचार करेंगे
- षष्ठयंश चक्र की जानकारी प्राप्त करेंगे
- पारिजात आदि वैशेषिकांश की जानकारी प्राप्त करेंगे।

7.3 दशवर्ग विचार

लग्न, होरा, डेठकाण, सप्तमांश, दशमांश द्वादशांश, षोडशांश, त्रिशांश और षष्ठयंश ये राशि के दश वर्ग होते है। ये दश वर्ग मनुष्यों को व्यय, कष्ट, उन्नति और धन – धान्य को देने वाले है।

राशि के अर्धभाग को होरा कहते है। विषयम राशि (मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु और कुभ राशियों) में प्रथम होरा सूर्य की और दूसरी चन्द्रमा की होरा होती है। सम राशि प्रथम चन्द्र की होरा होती है और इसी सूर्य की होरा होती है।

राशि के तृतीय भाग को डेडकाण कहते है। इस प्रकार एक राशि में तीन डेढकाण होते हैं। इनमें प्रथम डेढकाण उसी राशि का द्वितीय डेढकाण उस राशि से पंचम राशि का तथा तृतीय डेढकाण उससे नवम राशि का होता है।

अन्य जातक ग्रंथों में कुल 16 वर्गों की चर्चा है। यहां उनमें से केवल दश वर्गों का ही विवरण प्राप्त है। जन्मपत्र के अध्ययन में इन दश वर्गों का भी व्यवहार कम प्रचलित है। प्रचलन में षडवर्ग या सप्तवर्ग का ही प्रयोग अधिक होता है।

चूंकि ग्रहों के बलाबल का ज्ञान करने के लिए दशवर्ग का साधन किया जाता है। अत: आइए सर्व प्रथम

ग्रह का विचार करते हैं।

ग्रह – जो ग्रह जिस राशि का स्वामी होता है, वह राशि उस ग्रह का ग्रह कहलाती है। राशियों के स्वामी निम्नलिखित है –

राशि	स्वामी
सिंह	सूर्य
कर्क	चन्द्र
मेष, वृश्चिक	मंगल
मिथुन, कन्या	बुद्ध
धनु, मीन	बृहस्तपति
वृष, तुला	शुक्र
मकर, कुम्भ	शनि

7.3.1 होरा विचार

15 अंश का एक होरा होता है, इस प्रकार एक राशि में दो होरा होते हैं। विषम राशि – मेष, मिथुन आदि मे 15 अंश तक सूर्य का होरा होता है और 16 से 30 अंश तक चन्द्रमा का होरा होता है। सम राशि वृष, कर्क आदि में 15 अंश तक चन्द्रमा का होरा होता है। सम राशि तक सूर्य का होरा होता है। जन्म कुण्डली में होरा लिखने के लिए पहले लग्न में देखना होता है। जन्म कुण्डली में होरा होता है। यदि सूर्य को होरा हो तो होरा कुण्डली की 5 लग्न राशि और चन्द्र का होरा हो तो होरा कुण्डली की 4 लग्न राशि होती है। होरा कुण्डली ग्रहों के स्थान के लिए ग्रह स्पष्ट के राश्यादि से विचार करना चाहिए।

होरा ज्ञान के लिए होरा चक्र दिया जाता है, इनमें सूर्य और चन्द्रमा के स्थान पर उनकी राशियां दी गई है।

।।होरा चक्र।।

अंश	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
15	5	4	5	4	5	4	5	4	5	4	5	4

30	4	4	4	4	4	4	4	4	4	4	4	4

उदाहरण -

स्पष्ट लग्न 4/13/25126 अर्थात् सिंह राशि के 23 अंश 25 कला 26 विकला पर है। सिंह राशि के 15 अंश तक सूर्य का होरा , 16 से आगे 30 अंश तक चन्द्रमा का होरा होता है अत: यहां चन्द्रमा का होरा हुआ और होरा लग्न 4 माना जायेगा। ग्रह स्थापिक करने के लिए स्पष्ट ग्रहों का विचार करना चाहिए। अत: माना कि स्पष्ट साधित सूर्य 0190/6134 है। अर्थात् मेष राशि का 90 अंश 6 कला 34 विकला है। मेष राशि में 15 अंश तक सूर्य चक्र में सूर्य का होरा होता है। अत: सूर्य अपने होरा अर्थात् 5 राशि में हुए। चन्द्रमा का स्पष्ट मान 91026147 वृष राशि का शून्य अंश 26 कला 46 विकला है, वृष राशि में 15 अंश तक चन्द्रमा का होरा होता है। अत: चन्द्रमा अपने होरा 4 में हुए। मंगल का स्पष्ट मान 2129/52145 मिथुन राशि का 21 अंश 42 कला 84 विकला है। मिथुन राशि में 18 से 30 अंश तक चन्द्रमा का होरा है। अत: मंगल चन्द्रमा के होरा 4 में हुए। बुध 0123/2931 मेष राशि का 23 अंश 29 कला 31 विकला है। मेष राशि के 16 अंश से चन्द्र का होरा होता है। अत: बुद्ध चन्द्रमा के होरा 4 में हुए। बृहस्पति 3124/8/32 के अनुसार सूर्य के होरा 5 में हुए शुक्र 99/23/20/90 चक्रानुसार शुक्र सूर्य के होरा में हुए। शनि 2167145इसके ddअनुसार शनि सूर्य के होरा में हुए। राहु 3181515 इसके अनुसार राहु चन्द्रमा के होरा में 4 में हुए। अत: इसका होरा कुण्डली इस प्रकार होगा।

।।होरा कुण्डली।।

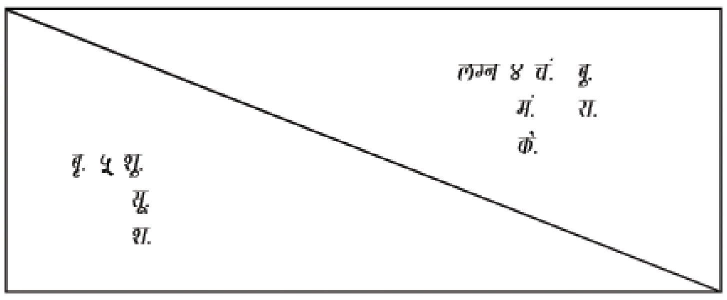

अब आइए डेढकाण चक्र बनाने का विचार करते है।

डेठकाण – 90 अंश का एक डेढकाण होता है, इस प्रकार एक राशि में तीन डेढकाण ‘ 1 से 10 अंश तक प्रथम डेढकाण, 11 से 20 अंश तक द्वितीय डेढकाण और 21 से 30 अंश तक तृतीय डेढकाण समझना

चाहिए।

जिस किसी के प्रथम डेढकाण में ग्रह हो तो उसी राशि का, द्वितीय डेढकाण में उस राशि से पंचम राशि का और तृतीय डेढकाण में उस राशि से नवम राशि का डेढकाण होता है। सरलता से समझले के लिए डेढकाण चक्र।

।।डेढकाण चक्र।।

अंश	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
10	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
20	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4
30	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8

जन्म कुण्डली में डेढकाण कुण्डली की प्रक्रिया यह है कि लग्न जिस डेढकाण मे हो, वही डेढकाण कुण्डली की लग्न होगी। ग्रह स्थापना करने के लिए स्पष्ट ग्रहों के अनुसार प्रत्येक ग्रह का पृथक पृथक डेढकाण निकालकर प्रत्येक ग्रह को उसकी डेढकाण राशि में स्थापित करना चाहिए।

उदाहरण –

लग्न 4/13/25/47 अर्थात् सिंह राशि के 23 अंश 25 कला और 28 विकला है।

यह लग्न सिंह राशि के तृतीय डेढकाण – मेष राशि की हुई। अतएवं डेढकाण कुण्डली का लग्न मेष होगा। ग्रहों के लिए प्रत्येक ग्रह का स्पष्ट मान लिया जैसा कि सभी ग्रह होरा कुण्डली में स्पष्ट सूर्य 010126/8 वृष राशि का 0 अंश 26 कला 87 विकला है। वृष में 90 अंश तक प्रथम डेढकाण वृष राशि का ही होता है। अत: चन्द्रमा वृष राशि में लिखा जायेगा । मंगल 2129142145 मिथुन राशि का 21 अंश 52 कला और 45 विकला है। मिथुन राशि में 21 अंश से तृतीय डेढकाण का प्रारम्भ होता है। अत: मंगल मिथुन के तृतीय डेढकाण कुम्भ में लिखा जायेगा। इसी प्रकार बुध, धनु राशि का, गुरू मीन राशि का, शुक्र वृश्चिक राशि का, शनि मिथुन राशि का, राहु कर्क राशि का और केतु मकर राशि का माना जायेगा।

।।डेढकाण कुण्डली चक्र।।

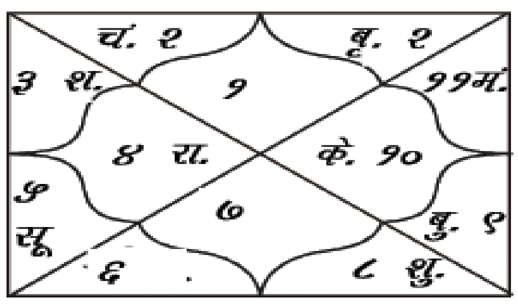

अब आइए सप्तमांश चक्र तथा उनके स्वामी का विचार करते है।

ये सप्तमांश अत्यन्त उपयोगी होते है। कूर राशि के सप्तमांश जातक उग्र स्वभाव का होगा और सौम्य राशि में उत्पन्न जातक उग्र स्वभाव का होगा जातक सौम्य प्रकृति का होगा।

स्प्तमांश चक्र

लग्न कलादि			राशि स्वामी	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुंभ	मीन
4	18	8	राशि स्वामी	1 मं	8 म.	2 बु;	10 श.	5 सू.	12 ब्र.	7 शु.	2 शु.	9 ब्र.	4 चं.	11 श.	6 बु.
9	34	19	राशि स्वामी	2 शु;	9 ब्र.	4 चं;	11 श.	9 बु.	1 मं.	8 मं.	9 मं.	3 बु.	10 श.	5 स.	8 शु.
12	51	25	राशि स्वामी	3 बु	10 श	5 स	12 ब्र	7 शु	2 शु	9 ब्र	4 चं	11 श	6 बु	1 म	8 म.
16	9	34	राशि स्वामी	4 चं	11 श.	6 बु	1 म	9 म	3 बु	10 सू	4 सू	12 ब्र	8 श	2 श	9 ब्र
21	25	42	राशि स्वामी	5 सू	12 ब्र;	7 श	2 श	9 ब्र	4 च	11 श	6 बु	1 मं	9 म	3 बु	10 श
15	42	51	राशि स्वामी	6 मं	1 म	8 म	3 बु	10 श	5 सू	12 ब्र	7 शु	2 शु	9 ब्र	4 चं	11 श
30	0	0	राशि स्वामी	8 श.	2 शु;	9 ब्र	4 च	11 श	6 बु	1 मं	9 मं	3 श	10 श	5 सू	12 ब्र

उदाहरण – 4/13/24/26 सिंह राशि के 23 अंश् 25 कला 26 विकला है। सिंह राशि में 21 अंश 24 कला 42 विकला तक का पांचवां सप्तमांश होता है। पर हमारी अभिष्ट लग्न इससे आगे है। अत: छठा सप्तमांश कुम्भ राशि माना जायेगा इसलिए सप्तमांश कुण्डली का लग्न मकर हागा।

ग्रह स्थापन के लिए प्रत्येक ग्रह के स्पष्ट मान से विचार करना चाहिए। सूर्य 019016134 है। मेष राशि में 8 अंश 34 कला 16 विकला तक द्वितीय सप्तामंश होता है और इससे आगे 12 अंश 51 कला 24 विकला तक तृतीय सप्तमांश होता है। सूर्य यहां पर तृतीय सप्तमांश मिथुन राशि का हुआ। चन्द्रमा 1/0/28/47 वृष राशि के 0 अंश 26 कला और 47 चिकला तक तृतीय सप्तमांश 4 अंश 16 कला 8 विकला तक है। अत- चन्द्रमा वृष राशि का प्रथम सप्तमांश वृश्चिक का हुआ। इस प्रकार मंगल का सप्तमांश राशि वृश्चिक , बुध की कन्या, गुरू की मिथुन, शुक्र की कुम्भ, शनि की कर्क, राहु की मीन और केतु की कन्या सप्तमांश हुई। चूंकि होरा चक्र में सभी स्पष्ट ग्रहों को नियम के अन्तर्गत दर्शाया गया है।

।।सप्तमांश कुण्डली चक्र।।

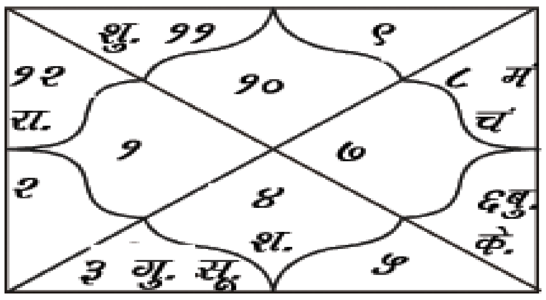

नवमांश कुण्डली विचार तथा उनके स्वामी –

धनु, मेष और सिंह राशियों के नव नवमांश मेषादि नव राशियां , वृष, कन्या और मकर राशियों के नव नवमांश मकरादि नव राशियां, मिथुन, तुला और कुम्भ राशि के नव नवमांश तुलादि नव राशियां तथा कर्क, वृश्चिक और मीन राशियों के नव नवमांश कर्कादि नव राशियां होती है।

राशि का नवमांश 30/8 —3’120’ होता है। एक राशि में 3’120’ के नौ खण्ड होते हैं। इस प्रत्येक खण्ड को नवमांश या नवांश कहते है। अत: मेषादि राशियों में क्रम से मेष, मकर, तुला और कर्क ये प्रथम नवांश राशियां है। इनममें प्रारम्भ होकर क्रमश: नौ राशियों का नवांश होता है।

।।नवमांश चक्र।।

नवमांश	**मेष, सिंह, धनु**	**वृष, कन्या,मकर**	**मिथुन, तुला, कुम्भ**	**कर्क, वृश्चिक, मीन**

1 - 3^0/20’	मेष	मकर	तुला	कर्क
2 -6^0/20’	वृष	कुम्भ	वृश्चिक	सिंह
3 -10^0/20’	मिथुन	मीन	धनु	कन्या
4- 13^0/20’	कर्क	मेष	मकर	तुला
5 16^0/20’	सिंह	वृष	कुम्भ	वृश्चिक
6- 20^0/20’	कन्या	मिथुन	मीन	धनु
7 -23^0/20’	तुला	कर्क	मेष	मकर
8 -26^0/20’	**वृश्चिक**	**सिंह**	**वृष**	**कुम्भ**
9- 30^0/20’	**धनु**	**कन्या**	**मिथुन**	**मीन**

उदाहरण –

लग्न स्पष्ट – 4/23/25/28 है। इसे नवमांश चक्र में देखने से सिंह का आंठवां नवमांश हुआ। अतएव नवमांश कुण्डली की लग्न राशि वृश्चिक है। सिंह के आठवें नवमांश की राशि वृश्चिक है।

।।नवमांश कुण्डली चक्र।।

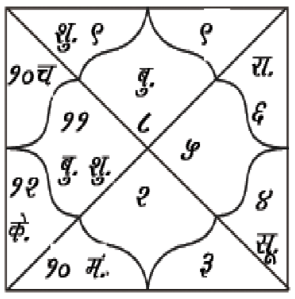

ग्रहों के स्थापना के लिए विचार किया तो सूर्य 0/90/6134 है, इसे नवमांश बोधक चक्र में देखा तो यह मेष के राशि का हुआ। अत: कर्क में सूर्य को स्थापित किया गया। चन्द्रमा 9/0/16/47 है। चक्र में देखने से यह वृष के प्रथम नवमांश मकर राशि का होगा। इसी प्रकार होरा कुण्डली में सभी ग्रहों के स्पष्ट हो लिखा गया है। इसके अनुसार मंगल मेष का, बुध, वृश्चिक का, गुरू, कुम्भ का, शुक्र कुम्भ का, शनि धनु

का राहु कन्या का और केतु मीन राशि का लिखा जायेगा।

चर राशि का पहला नवमांश, स्थिर राशि का पाचवां और द्विस्वभाव राशि का अन्तिम वर्गोतम नवांश होते है।

राशि का स्वयं का नवांश वर्गोत्तम कहलाता है। वर्गोत्तस्थ ग्रह अत्यन्त शुभव होते है। नवमांश तालिका जो दी गई है। इससे अर्थात् पंचम नवमांश और द्विस्वभाव राशियों के अन्तिम नवमांश वर्गोत्तमांश होते हैं। नवमांश बोधक सारणी से यह भी स्पष्ट होगा कि मेष, मकर, तुला और कर्क राशियों के प्रथम नवमांश राशियों क्रमश: ये ही राशियां है। इसलिए मेषादि चर राशियों में प्रथम नवमांश क्रमश ये ही राशियां हैं। इसीलिए मेषादि चर राशियों में प्रथम नवमांश वर्गोत्तम होता है। इस प्रकार वृष, कुम्भ, वृश्चिक और सिंह स्थिर राशियों का 5 वां नवमांश क्रम से इन्हीं राशियों का होने से स्थिर राशि का मध्य या पच्जम नवांश वगोत्तम होता है। द्विस्वभाव राशियों मिथुन, मीन, धनु, और कन्या राशियों में अन्तिम अर्थात् नवां नवमांश इन्हीं राशियों का होने से यह अन्तिम नवमांश वर्गोत्तम होगा। अत: यह बात जानना चाहिए कि वर्गोत्तमांश ग्रह सर्वाधिक शुभ होते है। एवं अच्छे फल को देते है।

7.4 द्वादशांश कुण्डली विचार

दशमांश: एकराशि में दश दशमांश होते है। 30’/10 –3’ का एक दशमांश होता है। विषम राशि में उसी राशि से और सम राशि मे नवम राशि से दशमांश की गणना की जाती है। दशमांश कुण्डली बनाने का नियम यह है कि लग्न स्पष्ट जिस दशमांश में वही दशमांश कुण्डली का लग्न माना जायेगा और ग्रह स्पष्ट द्वारा ग्रहों को ज्ञात करके जिस दशमांश का जो ग्रह हो उस ग्रह को उस राशि में स्थापन करने से जो कुण्डली बनेगी वही दशमांश कुण्डली होगी।

दशमांश चक्र तथा इसके स्वामी जानने के लिए निम्नलिखित चक्र से स्पष्ट हो जायेगा।

राशियां दशमांश	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
1 – 3^0/00	1 म	10 श	3 बु	2 3 बृ	5 सू	2 शु	7 शु	4 च	9 ब	6 बु	11 श	8 म
2 – 6^0/00	2 शु	11 श	4 च	1 म	6 बु	3 बु	8 म	5 सू	10 श	8 शु	12 बु	9 बु
3 – 9^0/00	3 बु	12 बृ	5 सू	2 शु	8 शु	4 च	9 बु	6 बु	11 श	8 म	1 म	10

												श
4 – 12^0/00	4 च	1 म	6 बु	3 बु	8 म	5 सू	10 श	7 शु	12 बृ	9 बृ	2 शु	11 श
5 – 15^0/00	5 सू	2 शु	7 शु	4 च	9 बृ	6 बु	11 श	9 म	1 म	10 श	3 बु	12 बृ
6 – 28^0/00	6 बु	3 बु	8 म	5 सू	10 श	7 शु	12 ब	9 ब	2 शु	11 श्स	4 च	9 म
7 – 21^0/00	7 शु	4 च	8 ब	6 बु	11 श	9 म	1 स	10 श	3 बु	12 ब	5 सू	2 शु
8 – 24^0/00	8 म	5 सू	10 श्	7 श्	12 बृ	9 बृ	2 शु	11 श	4 च	1 म	3 बु	3 बु
9 – 27^0/00	9 बृ	6 बु	11 श्	8 म	1 म	10 श	3 बु	12 बृ	5 सू	2 शु	7 शु	4 च
10 – 30^0/00	10 श	7 शु	12 बृ	9 बृ	2 शु	11 श	4 च	1 म	6 बु	3 बु	8 म	5 सू

उपयुक्त चक्र में दशमांश राशियों के अंक और दशमांश शेष लिखे गये है।

सभी ग्रहों का स्पष्ट निम्नलिखित है। स्पष्ट लग्न 4/13/25/28 स्पष्ट सूर्य 0/10।8/34 स्पष्ट चन्द्र 1102648 स्पष्ट चक्र मंग 2/21/52/45 स्पष्ट बुध 01/23/29/39 स्पष्ट चक्र 3/24/8/32 स्पष्ट चक्र 99/23/20/90 स्पष्ट शनि राहु 3/5/5/5 केतु 8/8/5/15 है
स्पष्ट लग्नानुसार दशमांश चक्र में देखा जाता है तो सिंह राशि में आठवां दशमांश मीनराशि का मिला अत: दय के स्वामी बृहस्पति हुए इस प्रकार दशमांश स्वामी को जानना चाहिए।

पराशर ने विषम राशि के दशमांशों के स्वामी क्रम से इन्द्र, अग्नि, यम, राक्षस, वरूण, मस्त, कुबेर, ईशान, ब्रह्मा और अनन्त इन दश डिम्पालों को माना है, सम राशि के दशमांशश व्युत्क्रम (विपरीतक्रम) से इन दशों दिम्पालों को माना है। किन्तु पाराशर का यह मत अन्य विद्वानों के द्वारा स्वीकार नहीं किया है।

उदाहरण –

स्पष्टलग्न – 4/23/25/27 इसे दशमांश चक्र में देख तो सिंह में आठवां दशमांश मीन राशि का मिला। अत: दशमांश कुण्डली को लग्न राशि मीन होगी। ग्रहों के स्थापन के लिए सूर्य 0/10/8/34 का दशमांश मेष का चौथा हुआ अर्थात् सूर्य दशमांश कुण्डली में कर्क राशि में स्थित होंगे। इसी प्रकारचन्द्रमा की दशमांश राशि मकर, मंगल की मकर, बुद्ध की वृश्चिक, शुक्र की मिथुन, शनि की सिंह, राहु की मिथुन और केतु की धनु राशि दशमांश चक्र में होगा।

।।दशमांश कुण्डली।।

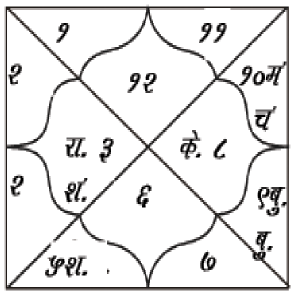

अब आइए द्वादशांश कुण्डली पर विचार करते हैं।

द्वादशांश – एक राशि का द्वादशांश – 9 राशि/92 – 30^0/92 - $2^0/3^0$ यह एक द्वादशांश का मान है। एक राशि में इतने ही मान के 12 भाग या द्वादशांश होते है। राशि के प्रथम द्वादशांश पर उसी राशि का अधिकार होता है। द्वितीय द्वादशांश पर उस राशि से दूसरीराशि का, तृतीय द्वादशांश पर उस राशि से तृतीय राशि का एवं दशवें द्वादशांश पर उस राशि से दसवी राशि का अधिकार होता है तथा उन द्वादशांश राशियों के स्वामी तद द्वादशांशों के स्वामी होते है। जैसे मेष राशि में प्रथम द्वादशांश मेष राशि का और उसका स्वामी मंगल प्रथम द्वादशांश दूसरा द्वादशांश वृष राशि का और उसके स्वामी शुक्र द्वितीय द्वादशांश का स्वामी होगा। स्पष्ट ग्रह एवं लग्न 4/23/25/27 स्पष्ट सूर्य 0/10/6134 चन्द्र स्पष्ट 1/01/26/47 मंगल स्पष्ट 2/29/52/45 बुद्ध स्पष्ट 012312931 स्पष्ट गुरू 3/24/6/32 स्पष्ट शुक्र 11/23/20/10 स्पष्ट शनि 2/7/7/45 स्पष्ट राहु 3/9/5/15 स्पष्ट केतु 8/8/5/15 इन्हीं स्पष्ट ग्रहों के आधार पर यहां उदाहरण बनाकर द्वादशांश चक्र बनाया गया है।

।। द्वादशांश चक्र।।

राशियां दशमांश	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
1 – 2^0/00	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12

	म	श	बु	बृ	सू	शु	शु	च	ब	बु	श	म
$2 – 5^0/00$	2 शु	3 श	4 च	5 म	6 बु	7 बु	8 म	9 सू	10 श	11 शु	12 बु	1 बु
$3 – 7^0/00$	3 बु	4 बृ	5 सू	6 शु	7 शु	8 च	9 बु	10 बु	11 श	12 म	1 म	2 श
$4 – 10^0/00$	4 च	5 म	6 बु	7 बु	8 म	9 सू	10 श	11 शु	12 बृ	1 बृ	2 शु	3 श
$5 – 12^0/00$	5 सू	6 शु	7 शु	8 च	9 बृ	10 बु	11 श	12 म	1 म	2 श	3 बु	4 बृ
$6 – 15^0/00$	6 बु	7 बु	8 म	9 सू	10 श	11 शु	12 ब	1 ब	2 शु	3 श्	5 च	6 म
$7 – 18^0/00$	7 शु	8 च	9 ब	10 बु	11 श	12 म	1 स	2 श	3 बु	4 ब	5 सू	6 शु
$8 – 20^0/00$	8 म	9 सू	10 श्	11 श्	12 बृ	1 बृ	2 शु	3 श	4 च	5 म	6 बु	7 बु
$9 – 20^0/00$	9 बृ	10 बु	11 श्	12 म	1 म	2 श	3 बु	4 बृ	5 सू	6 शु	7 शु	8 च
$10 – 25^0/00$	10 श	11 शु	12 बृ	1 बृ	2 शु	3 श	4 च	5 म	6 बु	7 बु	8 म	9 सू
$11 – 29^0/00$	11 श	12 शु	1 बृ	2 बृ	3 शु	4 श	5 च	6 म	7 बु	8 बु	9 म	10 सू
$12 – 30^0/00$	12 ब	1 म	2 शु	3 च	4 सू	5 बु	6 शु	7 म	8 म	9 बु	10 श्	11 श्

उदाहरण – लग्न 4/23/25/27 है, द्वादशांश बोधक चक्र में देखने पर सिंह में दसवां द्वादशांश चक्र वृष राशि का है। अत: द्वादशांश कुण्डली की लग्न वृष राशि होगी। ग्रह स्थापन पहले के समान ही करना चाहिए।

।। द्वादशांश कुण्डली।

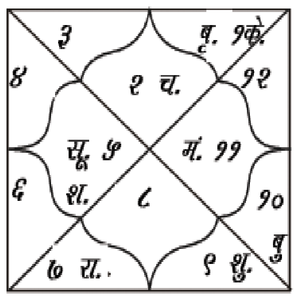

7.5 षोडशांश कुण्डली विचार

षोडशांश चक्र – एक राशि में 16 षोडशांश होते हैं। एक षोडशांश 1 अंश 52 कला 30 विकला का है । षोडशांश की गणना चर राशियों में मेषादि से, स्थिर राशियों में सिंहादि से और द्विस्वभाव राशियों में धनु राशि से की जाती है।

षोडशांश कुण्डली के बनाने की विधि यह है कि लग्न स्पष्ट जिस षोडशांश में आया हो, वही षोडशांश कुण्डली का लग्न माना जायेगा और ग्रहों के स्पष्ट के अनुसार ग्रह स्थापित किये जायेंगे।

।।षोडशांश बोधक चक्र।।

चर **मेष, कर्क, तुला, मकर**	**स्थिर** **वृष, सिंह, वृश्चिक, कुंभ**	**द्विस्वभाव** **मिथुन, कन्या , धनु, मीन**	**अंशादि**
1	5	9	1^0/52'/30''
2	6	10	3^0/45'/0''

3	7	11	5^0/36'/30''
4	8	12	7^0/30'/0''
5	9	1	8^0/52'/30''
6	10	2	11^0/22'/30''
7	11	3	13^0/15'/10''
8	12	4	15^0/8'/30''
9	1	5	16^0/0'/0''
10	2	6	18^0/45'/0''
11	3	7	19^0/36'/30''
12	4	8	20^0/30'/0''
1	5	9	22^0/22'/30''
2	6	10	24^0/15'/30''
3	7	11	28^0/7'/30''
4	8	12	30^0/0'/0''

उदाहरण -

लग्न 4/23/25/27 है, लग्न सिंह राशि की होने के कारण स्थिर कहलायेगी। सिंह के 23 /अंश 25 कला 26 विकला 13 वां षोडशांश होगा, जिसका राशि सिंह है। अत: यहां षोडशांश कुण्डली की लग्न राशि सिंह होगी। ग्रहों के राश्यादि को भी षोडशांश चक्र में देखकर षोडशांश राशि में स्थापित कर देना चाहिए।

।।षोडशांश कुण्डली।।

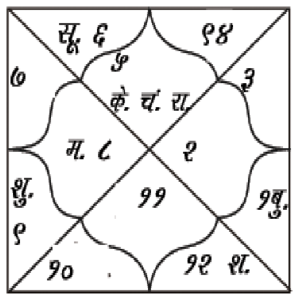

षोडशांश चक्र विचार – (विषयम राशियों में)

मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु और कुम्भ में पहला 5 अंश मंगल का, दूसरा 5 अंश शनि का, तीसरा 8 अंश बृहस्पति का, चौथा 8 अंश बुध का और पांचवा 5 अंश शुक्र का त्रिशांश होता है। तात्पर्य यह है कि उपयुक्त विषम राशियों में यदि कोई ग्रह एक से 5 अंश पर्यन्त रहे तो मंगल के त्रिशांश में कहा गया है। छठे से दसवें अंश तक रहे तो शनि के, दसवे से अठारहवें अंश तक रहे तो बृहस्पति के, उन्नीसवें से पच्चीसवें अंश तक रहे तो बुध के और छब्बीसवें से तीसवें अंश तक रहे तो शुक्र के त्रिशांश में वह ग्रह कहा जायेगा।

।।विषम राशि का त्रिशांश चक्र।।

मेष	**मिथुन**	**सिंह**	**तुला**	**धनु**	**कुम्भ**	**अंश**
1 मं.	1 मं.	1 मं.	1 मं.	1 मं.	1 मं.	1 से 5 तक
11 श.	11 श.	11 श.	11 श.	11 श.	11 श.	6 से 10 तक
9 ब्र.	9 ब्र.	9 ब्र.	9 ब्र.	9 ब्र.	9 ब्र.	11 से 19 तक
3 बु.	3 बु.	3 बु.	3 बु.	3 बु.	3 बु.	19 से 18 तक
8 शु.	8 शु.	8 शु.	8 शु.	8 शु.	8 शु.	16 से 30 तक

(समराशियों में) – वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर, और मीन में पहला 5 अंश तक शुक्र का, दूसरा 8 अंश तक बुध का, तीसरा 9 अंश तक मंगल का त्रिशांश होता है। राशि पद्धति के अनुसार विषम राशियों में 5 अंश तक मेष का 90 अंश तक कुंभ का 19 अंश तक धनु का, 25 अंश तक मिथुन का और 30 अंश तक तुला का त्रिशांश होता है। त्रिशांश कुण्डली भी पूर्ववत् बनायी जायेगी।

उदाहरण – लग्न 4/23/25/27 सिंह राशि के 23 अंश 25 कला 28 विकला है, का त्रिशांश कहलायेगा। त्रिशांश कुण्डली का लग्न मिथुन होगा। सूर्य 0110734 मेष राशि के 10 अंश के 7 कला 34 विकला है। मेष राशि में 10 अंश से आगे 19 अंश तक धनु राशि का त्रिशांश होता है। अत: सूर्य धनु राशि का होगा

समराशि त्रिशांश चक्र

वृष	कर्क	कन्या	वृश्चिक	मकर	मीन	अंश
2 शु	2 शु	2 शु	2 शु	2 शु	2 शु	1 से 5 तक
6 बु	6 बु	6 बु	6 बु	6 बु	6 बु	6 से 12 तक
12 बृ	12 बृ	12 बृ	12 बृ	12 बृ	12 बृ	13 से 20 तक
10 श	10 श	10 श	10 श	10 श	10 श	21 से 25 तक
9 म	9 म	9 म	9 म	9 म	9 म	26 से 30 तक

।।त्रिशांश कुण्डली।।

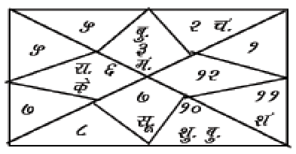

षष्टशांश चक्र विचार

एक राशि में 60 पष्टशांश होते है अर्थात् 30 कला का एक षष्ठशांश होता है।
जिस ग्रह या लग्न का ष्ठयांश साधन करना हो तो उस सग्रह की राशि का छोडकर अंशों की कला बनाकर आगे वाली कलाओं को उसमें जोड देना चाहिए। इन योगफल वाली कलाओं में 30 का भाग देने से जो लब्धि आवे, उसमें एक और जोड़ दे। इस योगफल को आगे दिये षष्टांश बोधक चक्र'' में देखने से षष्ठंश की राशि मिल जायेगी। विषम राशि वाले ग्रह का देवतांश के नीचे और सम राशि वाले का सम देवतांश के नीचे मिलेगा।

उदाहरण

लग्न 4/23/25/26 स्पष्ट सूर्य 0/10/8/34 स्पष्ट मंगल 2/29/52/45 स्पष्ट बुध 0/23/21/39/ स्पष्ट गुरू 3/24/7/32 स्पष्ट शुक्र 11/23/20/10 स्पष्ट शनि 2/6/61/45 स्पष्ट राहु 83/8/5/15 स्पष्ट केतु 8/8/5/15 श्हां पर स्पष्ट लग्न के राशि को छोडकर अंश को कला बनायी तो 23×60 =1380़15 – 1405 ÷30 = 47 लब्धि आया और शेष 25 हुआ। चूंकि लब्धि 46 में 9 और जोड़ा – 46़़9 = 47 वां पट्यंश हुआ चक्र मे ़देखा तो सिंह राशि का 47वां षष्टयांश मिथुन राशि का है। अत: षटयंश कुण्डली का लग्न मिथुन होगा । इस चक्र से बिना गणित किये भी षटयंश का बोध कोष्ठक के अन्त से दिये गये अंशादि के द्वारा किये जा सकते है। प्रस्तुत लग्न सिंह के 23 अंश 25 कला है। अत: कोष्ठक में 23 अंश के आगे हैं 23/30 वाले कोष्ठक में सिंह के नीचे मिथुन लिखा गया है। अत: षटयांश लग्न मिथुन होगा। ग्रहों के स्थापन भी इसी प्रकार करना चाहिए

षष्ट्यंश कुण्डली

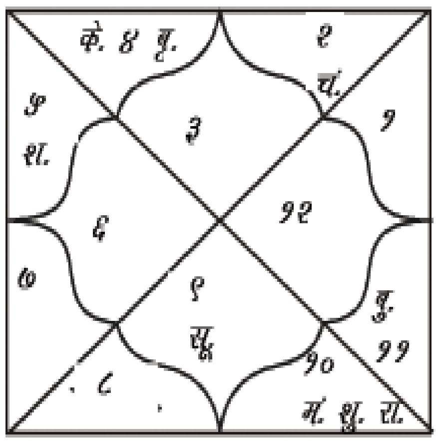

षटयंश बोधक चक्र

विषय देवतांश	संख्या	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन	अंश	सम देवतांश
घोर	1	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	0/30	इन्दुरेखा
राक्षस	2	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	1/0	भ्रमण
देव	3	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	2/30	प्रयोधि
कुबेर	4	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	2/0	सुधा
यक्ष	5	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	3/30	अति शीतल
किन्नर	6	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	3/0	क्रूर
भ्रष्ट	7	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	4/30	सौम्य
कुलघ्न	8	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	4/0	निर्मल
गरल	9	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	5/30	दण्डायुध
अग्नि	10	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	5/0	कालाग्नि
माया	11	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	6/30	प्रवीन
प्रेतपुरीष	12	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	6/0	इन्द्रमुख
अपांपति	13	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	7/30	द्रष्टकराल
देवगणेश	14	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	7/0	शीतल
काल	15	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	8/30	मृदु
अहिभाग	16	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	8/0	सौम्य
अमृत	17	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	9/30	कालरूप
चन्द्र	18	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	9/0	पातक
मद्वंश	19	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	10/30	वंशक्षय
कोमल	20	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	10/0	कुलना

															श
हरम्ब	21	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	11/30	विषप्र दग्ध
ब्रह्मा	22	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	11/0	पूर्णच न्द्र
विष्णु	23	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	12/30	अमृत
महेश्वर	24	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12/0	सुधा
देव	25	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13/30	कपट क
आर्द्र	26	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	13/0	यम
कलिनाश	27	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	14/30	घोर
श्रितीश्वर	28	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	14/0	दावा ग्नि
कमलाकर	29	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	15/30	काल
मान्दी	30	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	15/0	मृत्यु
मृत्यु	31	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	16/30	मान्दी
काल	32	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	16/0	कम लाकर
दावाग्नि	33	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	17/30	श्रिती श्वर
घोर	34	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	17/0	कलि नाश
यम	35	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	18/30	आर्द्र
कपटक	36	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	18/0	देव
सुधा	37	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	19/30	महेश्व र
अमृत	38	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	19/0	विष्णु
पूर्णचन्द्र	39	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	20/30	ब्रह्मा
विषप्रदग्ध	40	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	20/0	हरम्ब
कुलनाश	41	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	21/30	कोम ल
वंशक्षय	42	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	21/0	मद्वंश

पातक	43	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	22/30	अमृत
कालरूप	44	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	22/0	चन्द्र
सौम्य	45	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	23/30	अहि भाग
मृदु	46	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	23/0	काल
शीतल	47	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	24/30	देवगणेश
द्रष्टकराल	48	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	24/0	अपांपति
इन्द्रमुख	49	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	25/30	माया
प्रवीन	50	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	25/0	प्रेतपुरीष
कालाग्नि	51	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	26/30	अग्नि
दण्डायुध	52	4	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	26/0	गरल
निर्मल	53	5	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	27/30	कुल घ्न
सौम्य	54	6	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	27/0	भ्रष्ट
क्रूर	55	7	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	28/30	किन्नर
अतिशीतल	56	8	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	28/0	यक्ष
सुधा	57	9	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	29/30	कुबेर
प्रयोधि	58	10	11	12	1	2	3	4	5	6	7	8	9	29/0	देव
भ्रमण	59	11	12	**1**	2	3	4	5	6	7	8	9	10	30/30	राक्षस
इन्दुरेखा	60	12	**1**	**2**	3	4	5	6	7	8	9	10	11	30/0	घोर

7.8 पारिजात आदि वैशेषिकांशविचार

पारिजातादि ज्ञान करने के लिए पहले दशवर्ग चक्र बना लेना चाहिए। इस चक्र की प्रक्रिया यह है कि पहले जो होए, डेढकोण , स्प्तमांश आदि बनाये हैं उन्हें एक साथ लिखकर रख लेना चाहिए। इस चक्र में जो ग्रह अपने वर्ग अतिमित्र के वर्ग या उच्च के वर्ग में हो उसकी स्वर्क्षादि वर्गीसंज्ञा होती है।

जिस जन्मपत्री में दो ग्रह स्वर्क्षादि वर्गी हों उनकी परिजात संज्ञा, तीन की उत्तम, चार की गोपुर, पांच की

सिंहासन, छह की परावत, सात की देवलोक, आठ की ब्रह्मलोक नौ की ऐरावत और दश की श्रीनाथ संज्ञा होती है।

2	3	4	5	6	7	8	9	10	वर्ग	वर्गे क्य
परिजात	उत्तम	गोपुर	सिंहासन	पारावत	देवलोक	ब्रदलोक	ऐरावत	श्रीनाथ	योग विशेष	योग विशेष

अपने अपने स्वग्रह उच्च मूल त्रिकोण, अपने वर्ग में ग्रह हो तो वर्गोत्तमस्थ कहलाते हैं। इन वर्गोत्तम के योग से वैशेषिकांश होते हैं। दश वर्गों में यदि ग्रह के तीन वर्ग उसके अपने हो तो ग्रह उत्तमांश में कहलाता है । चार वर्ग यदि ग्रह के अपने हो तो वह ग्रह गोपुर नामक वैशेषिकांश में कहलाता है। पांच वर्ग यदि ग्रह के अपने वर्ग हो तो वह ग्रह सिंहासन नामक वैशेषिकांशस्थ में कहते है। दो वर्ग यदि ग्रह के अपने हो तो परिजात नामक वैशेषिकांशस्थ कहते है। छः वर्ग यदि उस ग्रह के हो तो उस ग्रह को पारावत नामक वैशेषिकांशगत कहते हैं। सात वर्ग यदि ग्रह अपना वर्ग हो तो वह देवलोककांशस्थ कहलाता है। यदि आठ उस ग्रह का हो तो भी ब्रह्मलोकांश में तथा यदि नववर्ग उसके हो तो वह ऐरावतरस्थ कहलाता है।

सात वर्ग यदि उसी ग्रह के हो तो इस योग के देवलोक आठ वर्ग यदि उसी ग्रह के हो तो ब्रह्मलोक और दश वर्ग यदि उस ग्रह के हो तो श्रीधाम योग कहा है।

पारिजातांश में स्थित ग्रह जातक को श्रेष्ठता अनेक गुण, अर्थ, सुख, वैभवादि देते हैं। उत्तमांशस्थ ग्रह जातक को विनय, चातुर्थ, नैपुण्य और आचारवान बनाते हैं। गौपुरांशस्थ ग्रह जातक को बुद्धिमान धनिक, और भूपति बनाता है तथा ग्रह गोधन से सम्पन्न करता है। सिंहासनाशस्थ ग्रह जातक को राजा का प्रिय पात्र अथवा राजा के समान वैभवशाली बनाता है। परावतांशस्य ग्रह जातक को अश्रव ग्रह जातक का अश्रव गज, रथादि राजकीय वैभवादि से सम्पन्न कराता है। देवलोकांशस्थ ग्रह सत्कीर्तियुक्त अपने सदगुणों केलिए विख्यात राजा बनाता है। ऐरावतांशसृथ ग्रह जातक को देवताओं से पूजित इन्द्र के समान राजा बनाता है। यदि ग्रह श्रीधाम योग बनाता हो तो वह सौभाग्य, धनधान्य एवं सन्तति सुख से सम्पन्न राजा बनाता है।

दशवर्ग के सभी वर्गों में यदि ग्रह निर्बल हो तो मृत्युकारक, नौ वर्ग में निर्बल हो तो विनाश कारक, यदि आठवर्ग मे निर्बल हो तो कष्ट कारक, यदि सातवर्ग में ग्रह निर्बल हो तो कष्ट कारक, यदि सातवर्ग में ग्रह निर्बल हो तो दारिद्रा और विपत्तिकारक, छः वर्ग में निर्बल हो तो द्रारिद्रा पांच वर्ग में निर्बल हो तो स्वजनों का स्नेहदाता चार वर्ग में निर्बल हो तो स्वजन बन्धु – बांधवों में श्रेष्ठ बनाता है। तीन वर्ग में निर्बल ग्रह धनिक श्रेष्ठि बनाता है। यदि मात्र एक वर्ग में निर्बल होतो व्यक्ति को राजा बनाता है।

7.9 सारांश

अब तो आप लोग सभी वर्गों को पूर्णतया रूप से जान गये होंगे। फिर भी यहां पर इस बात की जानकारी पूर्णतया रूप से होनी चाहिए कि फलादेश का प्राणतत्त्व ये सभी वर्ग है तथा इनके जानकारी पश्चात् आप ग्रहों के परिजात आदि वर्गों को जानकर मूल से व्यवहार में लायेगें, तथा ग्रहों के बलाबल का विचार करते हुए समाज के कल्याण की भावना से उत्तम फल का विवेचन करेंगें।

7.10 प्रश्नावली लघुउत्तरीय तथा उत्तरमाला

1 जातक ग्रंथों में सभी वर्गों की संख्या है -

(क) 12 (ख) 18

(ग) 19 (घ) 16

2 विषम राशि में प्रथम होरा होती है -

(क) मंगल (ख) बुद्ध

(ग) सूर्य (घ) चन्द्र

3 एक राशि में डेढकाण होते है -

(क) 3 (ख) 4

(ग) 5 (घ) 6

4 सम राशियों का सप्तमांश होता हैं

(क) उसी राशि से (ख) उससे सप्तम राशि से

(ग) दूसरी राशि से (घ) चौथी राशि से

5 मेष, सिंह, धनु राशियों का नवमांश प्रारम्भ होता है ‘

(क) मेषादि से (ख) मकरादि से

(ग) तुलादि से (घ) कर्कादि से

6 मिथुन, तुला, कुम्भ राशियों का नवमांश प्रारम्भ होता है -

(क) मेषादि से (ख) मकरादि से

(ग) तुलादि से (घ) कर्कादि

7 एक दशमांश कितने अंश के होते है

(क) 4 अंश का (ख) 5 अंश का

(ग) 3 अंश का (घ) 2 अंश का

8 षोडशांश कुण्डली में चर राशियों की गणना की जाती है

(क) वृषादि से (ख) मेषादि से

(ग) मिथुनादि से (घ) कन्यादि से

9 द्वादशांश कुण्डली में एक द्वादशांश का मान होता है

(क) 2 अंश, 30 कला (ख) 3अंश, 40 कला

(ग) 6 अंश, 20 कला (घ) 3 अंश, 10 कला

10 विषम त्रिशांश में 9 से 5 अंश के स्वामी है

(क) शनि (ख) गुरू (ग) मंगल (घ) बुद्ध

उत्तरमाला

1	घ	2	ग	3	क	4	ख	5	क
6	क	7	ग	8	क	9	ख	10	ग

7.11 शब्दावली

- समराशि – वृषभ, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर, मीन
- विषम राशि – मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु, कुभ
- अग्नि तत्त्व राशि – मेष, सिंह, धनु
- पृथ्वी तत्त्व राशि – वृष, कन्या, मकर
- वायु तत्त्व राशि – मिथुन, तुला, कुंभ
- जल तत्त्व राशि – कर्क, वृश्चिक, मीन
- चर राशियां – मेष, कर्क, तुला, मकर
- स्थिर राशियां – वृष, सिंह, वृश्चिक, और कुम्भ
- द्विस्वभाव राशियां – मिथुन, कन्या, धनु, मीन
- पुरूष राशियां – मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु, कुम्भ

- स्त्री राशियां – वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक
- मेष राशि का निवास – धातु, रत्न, भूमि
- वृष राशि का निवास – पर्वत, शिखर
- मिथुन राशि का निवास – धूतग्रह, रति ग्रह
  कर्क राशि का निवास – वापी, पोखर
  क्रूर राशियां – मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु, कुम्भ
- सौम्य राशियां – वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर, मीन
- दीर्घ राशियां – सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक
- समराशियां – मिथुन, कर्क, धनु, मकर
- द्रव्य राशियां – मेष, वृष, कुभ, मीन
- शुभ ग्रह – चन्द्र, बुद्ध, गुरू, शुक्र
- पाप ग्रह – शनि, मंगल, राहु, केतु
- क्रूर ग्रह – सूर्य
- दीपावली राशियां – सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुंभ, मीन
- रात्रि बली राशियां – मेष, वृष, मिथुन, कर्क, धनु, मकर

7.12 संदर्भ ग्रथ सूची

1 भारतीय ज्योतिष

लेखक – नेमीचन्द्र शास्त्री

2 जातक परिणत
व्याख्याकार – श्रीहरिशंकर पाठक

इकाई 8

नवमांश, सप्तमांश, त्रिशांश व द्वादशांश

इकाई की संरचना

8.1 प्रस्तावना
8.2 उद्देश्य
8.3 विषय प्रवेश
8.3.1 नवमांश साधन
8.3.2 सप्तमांशसाधन
8.3.3 त्रिशांश साधन
8.3.4 द्वादशांशसाधन
8.4 सारांश
8.5 अभ्यासार्थ प्रश्न
8.6 शब्दावली
8.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

8.1 प्रस्तावना

इस इकाई में मात्र चार वर्ग ही दर्शाया है। इसका आशय यह है कि नवमांश कुण्डली से पारिवारिक सुख का तथा पति – पत्नि के जीवन में होने वाले शुभाशुभ फलों का विचार किया जाता है तथा सप्तमांश कुण्डली से पुत्र-पौत्रादि संतति का विचार किया जाता है। त्रिशांश चक्र सेअरिष्टादि का विचार किया जाताहै। यहवहपक्ष है जिससे परिवारिक या सामाजिक कोई अनहोनी (दु:ख या विपत्ति) न आ जाय जिसे कि बहुत बड़ी परेशानी का सामना करना पड़े, इन्हीं विषयों का विमर्श त्रिशांश चक्र से किया जाता है। इसी प्रकार द्वादशांश चक्र से माता – पिता के सुख और सौख्य का विचार किया जाताहै। अत: यहां पर मात्र चार वर्गो के दर्शाने मूल तथ्य यह भी है कि चूंकि माता पिता स्त्री पुत्रादि परिवार ये सब मानव जीवन के मुख्य अंग है। इसलिए यहां पर इन वर्गों का विचार करके इन इन परिवारिक व्यक्तियों का विश्लेषण किया है।

8.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप निम्न लिखित विषयों के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे -

1 सप्तमांश कुण्डली के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगें।

2 सप्तमांश कुण्डली बनायेगें।

3 त्रिशांश कुण्डली जानेगें।

4 द्वादशांश कुण्डली का साधन कर पायेंगे।

8.3 विषय प्रवेश

वर्ग कुण्डलियों का अध्ययन वैदिक ज्योतिष का अत्यंत महत्त्वपूर्ण अंग है। वर्ग कुण्डलियों की मदद से जीवन के विषयों का गहन अध्ययन किया जाता है। वर्ग कुण्डलियों की कुल संख्या 16 हैं। सोलह वर्ग कुण्डलियों के नाम इस प्रकार से हैं –

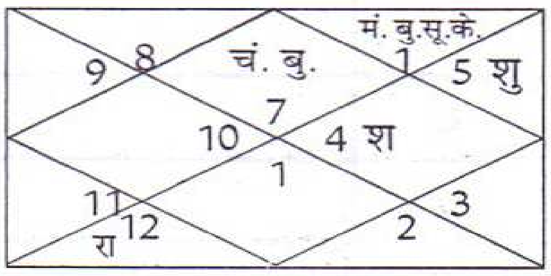

1. ग्रह, 2. होरा, 3. द्रेष्काण, 4. चतुर्थांश,

5. सप्तमांश, 6. नवांश, 7. दशमांश, 8. द्वादशांश,

9. षोडशांश, 10. विशांश, 11. चतुर्विंशांश,

12. सप्तविशांश, 13. त्रिशांश, 14. खवेदांश,

15. अक्षवेदांश, 16. षष्ठयांश।

वर्ग कुण्डलियों के वर्ग -

1. षड् वर्ग - ग्रह, होरा, द्रेष्काण, नवांश, द्वादशांश और त्रिशांश षड् वर्ग में आते हैं।

   सप्त वर्ग - यदि षड्वर्ग में सप्तमांश को जोड़ दिया जाएं तो सप्त वर्ग बन जाता है।

   दश वर्ग - यदि सप्त वर्ग में दशांश षोड्शांश और षष्ठयांश को जोड़ दिया जाए तो दश वर्ग बनता है।

   विभिन्न वर्ग कुण्डलियों के साधन को समझने के लिए हम एक उदाहरण कुण्डली लेते हैं।

ग्रह	अंश
लग्न	$23^0.02'$
सूर्य	$08^0.01'$
चन्द्र	$07^0.14'$
मंगल	$17^0.06'$

बुध	25^0.52’
बृहस्पति	23^0.27’
शुक्र	29^0.31’
शनि	26^0.48’
राहु	01^0.23’
केतु	01^0.23’

नवांश साधन - जब एक राशि को नौ बराबर भागों में बांटा जाता है तो मान आता है 03^0.20’ हर भाग को नवांश कहा जाता है। नवांश कुण्डली अत्यंत महत्त्वपूर्ण कुण्डली है जिससे जन्म कुण्डली के ग्रहों की ताकत का अनुमान लगाया जाता है और साथ ही व्यक्ति के जीवन साथी और वैवाहिक जीवन का अध्ययन किया जाता है। नवांश कुण्डली का साधन करने के लिए निम्न सारणी से यह समझ लेते हैं कि किस अंश पर कौन सा नवांश आएगा।

	अंश	नवांश
1.	0^0’ - 30.20’	1
2.	08^0.20’-060.40’	2
3.	6^0.40’-100.00’	3
4.	10^0.00’-130.20’	4
5.	13^0.20’-160.40’	5
6.	16^0.40’-200.00’	6
7.	20^0.00’-230.20’	7
8.	23^0.20’-260.40’	8
9.	26^0.40’-300.00’	9

नवांश कुण्डली साधन का नियम-

1. अग्नि तत्त्व राशि में गणना मेष से आरंभ होती है अर्थात् यदि ग्रह या लग्न मेष, सिंह या धनु राशि में है तो गणना मेष से आरंभ होगी।
2. पृथ्वी तत्त्व राशि में गणना मकर से आरंभ होती है अर्थात् यदि ग्रह या लग्न वृषभ, कन्या या मकर में है तो गणना मकर से आरंभ होगी।

3. वायु तत्त्व राशि में गणना तुला से आरंभ होती है अर्थात् यदि ग्रह या लग्न मिथुन, तुला, या कुंभ में है तो गणना तुला से आरंभ होगी।

4. जल तत्त्व राशि में गणना कर्क से आरंभ होती है अर्थात् यदि ग्रह या लग्न कर्क, वृश्चिक या मीन में होगी तो गणना कर्क से आरंभ होगी।

लग्न तुला है और लग्न 23^0.02' अंश पर हंै। 23^0.02' पर होने से सातवां नवांश चल रहा है हमारे नियमानुसार तुला के लिए गणना तुला से ही आरंभ होगी। तुला से सात नवांश गिनने पर आया मेष अत: नवांश लग्न होगी मेष।

सूर्य कन्या राशि में 8^0.01' पर हैं। अत: वह तीसरे नवांश पर हैं। कन्या पृथ्वी तत्त्व राशि है इसलिए गिनती मकर से आरंभ होगी। मकर से तीन नवांश आगे अर्थात् मीन नवांश कुण्डली में सूर्य मीन राशि में होंगे।

चन्द्रमा तुला राशि में 7^0.14' पर हैं। चन्द्रमा का नवांश हुआ तीसरा। वायु तत्त्व राशि में होने के कारण गणना तुला से आरंभ होगी। तुला से तीन नवांश आगे हुई, धनु राशि इस लिए नवांश कुण्डली में चन्द्रमा धनु राशि में रहेंगे।

मंगल कन्या राशि में 17^0.06' पर हैं। इस प्रकार मंगल छठें नवांश पर हैं। कन्या राशि, पृथ्वी तत्त्व राशि है, अत: गणना मकर से आरंभ होगी। मकर से 6 नवांश आगे अर्थात् मंगल मिथुन में होंगे।

बुध 25^0.52' अंश पर कन्या राशि में हैं। बुध आठवें नवांश में हैं और पृथ्वी तत्त्व राशि में हैं। मकर से गणना आरंभ करने पर नवांश कुण्डली में बुध सिंह राशि में होंगे।

बृहस्पति तुला राशि में 23^0.27' पर हैं। बृहस्पति आठवें नवांश पर हैं, तुला राशि होने से गणना तुला से ही आरंभ होगी। तुला से आठ नवांश आगे राशि होगी वृषभ। इसलिए बृहस्पति नवांश कुण्डली में वृषभ राशि में होंगे।

शुक्र सिंह राशि में 29^0.31' पर हैं। शुक्र नवें नवांश में हैं। अग्नि तत्त्व राशि में होने से गणना मेष से आरंभ होगी। इसलिए नवांश कुण्डली में शुक्र धनु राशि में होंगे।

शनि 26^0.48' पर कर्क राशि में हैं। शनि 9वें नवांश में हैं और जल तत्त्व राशि होने से गणना कर्क से आरंभ होगी। इसलिए नवांश कुण्डली में शनि मीन राशि में होंगे।

राहु 01^0.23' पर मीन राशि में हैं। ये पहले नवांश में हैं और जल तत्त्व राशि होने से गणना कर्क से आरंभ होगी। अत: राहु नवांश कुण्डली में कर्क राशि में होंगे।

केतु 01^0.23' पर कन्या राशि में हैं। ये पहले नवांश में हैं और पृथ्वी तत्त्व राशि में होने से गणना मकर से आरंभ होगी। इसलिए केतु नवांश कुण्डली में मकर राशि में होंगे।

1	8	9	14
11	12	3	6
7	2	15	8
13	10	5	4

सप्तमांश

जब एक राशि को सात बराबर भागों में बांटा जाता है तब वह सप्तमांश कहलाता है। सात बराबर भाग में बांटने पर एक भाग का मान आएगा 40.17'। निम्न सारणी से हम सप्तमांश की गणना को समझ सकते हैं -

	अंश	सप्तमांश
1.	00' - 4^0.17'	1
2.	04^0.17'-08^0.32'	2
3.	08^0.32'-12^0.51'	3
4.	12^0.51'-17^0.08'	4
5.	17^0.08'-21^0.25'	5
6.	21^0.25'-25^0.42'	6
7.	25^0.42'-30^0.00'	7

सप्तमांश साधन का नियम यह है कि विषम राशि होने पर गणना उसी राशि से करते है और यदि सम राशि है तो गणना उस राशि से सप्तम राशि से करेंगे।

हमारे उदाहरण कुण्डली में लग्न 23^0.02' की है, अत: यह छठा सप्तमांश है।

- तुला लग्न है अत: विषम राशि होने से गणना तुला से ही होगी। तुला से गणना होने पर मीन राशि आएगी। अत: सप्तमांश लग्न होगी मीन।
- सूर्य 08^0.01' पर हैं। अत: सप्तमांश हुआ दूसरा। सूर्य की राशि है कन्या। कन्या सम राशि है अत: उस राशि से होगी जो कन्या राशि है सप्तम है अर्थात् मीन। मीन से दूसरी राशि होगी मेष अत: सप्तमांश कुण्डली में सूर्य मेष राशि में होंगे।
- चन्द्रमा 07^0.14' पर तुला राशि में हैं। सप्तमांश हुआ दूसरा और राशि है विषम। तुला से दो राशि आगे है वृश्चिक इसलिए सप्तमांश कुण्डली में चन्द्रमा वृश्चिक राशि में होंगे।

- मंगल 17^0.06' पर कन्या राशि में हैं। सप्तमांश है चौथा और राशि है सम। अत: गणना कन्या से सातवीं राशि मीन से आरंभ होगी। मीन से चार राशि आगे है मिथुन अत: सप्तमांश कुण्डली में मंगल मिथुन में रहेंगे।
- बुध कन्या राशि में 25^0.52' पर है। इस प्रकार वह छठें सप्तमांश में हैं। गणना मीन राशि से होगी। मीन से छठी राशि होगी कन्या। अत: सप्तमांश कुण्डली में बुध कन्या राशि में होंगे।
- बृहस्पति 23^0.27' पर तुला राशि में है। यह छठा नवांश हैं। विषम राशि होने से गणना तुला से आरंभ होगी। तुला से छठी राशि है मीन। अत: सप्तमांश कुण्डली में बृहस्पति मीन राशि में होंगे।
- शुक्र 29^0.31' पर सिंह राशि में है। शुक्र सातवें सप्तमांश पर हैं। विषम राशि होने से गणना सिंह से ही आरंभ होगी। सिंह से सातवीं राशि है कुंभ। अत: सप्तमांश कुण्डली में शुक्र कुंभ राशि में रहेंगे।
- राहु 01^0.23' पर मीन राशि में है। सप्तमांश है पहला और सम राशि में होने के कारण गणना मीन से सातवीं राशि कन्या से होगी। पहला ही सप्तमांश होने से राहु सप्तमांश कुण्डली में कन्या राशि में होंगे।
- केतु कन्या राशि में हैं। गणना कन्या से सप्तम मीन से होगी। पहला सप्तमांश होने से केतु सप्तमांश कुण्डली में मीन राशि में होंगे।

त्रिशांश

साधन

जब एक राशि को तीस बराबर हिस्सों में बांटा जाता है तो हर एक हिस्से को त्रिशांश कहते हैं। विषम राशियों यानि मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु और कुंभ में पहले 5' तक मंगल का, दूसरे 5' तक शनि का, तीसरे 8' तक बृहस्पति का, चौथे 7' तक बुध का और पांचवें 5' तक शुक्र का त्रिशांश होता है। इसे निम्न सारणी से समझने का प्रयास करते है।

विषम राशि की त्रिशांश कुण्डली

मेष	मिथुन	सिंह	तुला	धनु	कुंभ	अंश
1	1	1	1	1	1	1-5
11	11	11	11	11	11	6-10
9	9	9	9	9	9	11-18
3	3	3	3	3	3	19-25
7	7	7	7	7	7	26-30

सम राशि यानि वृषभ, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर और मीन में पहले 5 अंश तक शुक्र का, दूसरे 7' तक बुध का, तीसरे 8' तक बृहस्पति का, चौथे 5' तक शनि का और पांचवें 5' तक मंगल का त्रिशांश होता है। इसे निम्न सारणी से समझा जा सकता है।

सम राशि की त्रिशांश कुण्डली

वृषभ	कर्क	कन्या	वृश्चिक	मकर	मीन	अंश
2	2	2	2	2	2	1-5
6	6	6	6	6	6	6-12
12	12	12	12	12	12	13-20
10	10	10	10	10	10	21-25
8	8	8	8	8	8	26-30

हमारे उदाहरण में लग्न तुला है और $23^0$02' पर है। विषम राशि की सारणी से स्पष्ट है कि 19-25 के बीच अंश होने पर त्रिशांश होगा मिथुन, अत: त्रिशांश कुण्डली मिथुन होगी।

- सूर्य कन्या राशि में 08001' पर है। सम राशि की सारणी से स्पष्ट है कि 6-12 अंश होने पर कन्या त्रिशांश होगा, अत: त्रिशांश कुण्डली में सूर्य कन्या राशि में होंगे।
- चन्द्रमा $07^0$14' पर तुला राशि में हैं। सारणी के अनुसार 6-10 अंश के मध्य कुंभ का त्रिशांश हेगा, अत: त्रिशांश कुण्डली में चन्द्रमा कुंभ राशि में होंगे।
- मंगल $17^0$06' पर कन्या राशि में हैं। सारणी के अनुसार सम राशि में 13-20 अंश पर मीन त्रिशांश है। अत: मंगल त्रिशांश कुण्डली में मीन राशि में होंगे।
- बुध $25^0$52' पर कन्या राशि में हैं। सम राशि की सारणी के अनुसार 26-30 अंश वृश्चिक त्रिशांश में होंगे। अत: त्रिशांश कुण्डली में बुध वृश्चिक राशि में होंगे।

- बृहस्पति $23^0 27'$ पर तुला राशि में हैं। विषम राशि में 19-25 अंश पर मिथुन राशि होती है। अत: त्रिशांश कुण्डली में बृहस्पति मिथुन राशि में होंगे।
- शुक्र $29^0 31'$ पर हैं सिंह राशि में हैं। विषम राशि की सारणी के अनुसार 26-30 अंश पर तुला राशि का त्रिशांश होगा, अत: शुक्र तुला में रहेंगे।
- शनि $26^0 48'$ पर मीन राशि में हैं सम राशि की सारणी में 26-30 अंश पर वृश्चिक त्रिशांश होता है। अत: शनि त्रिशांश कुण्डली में वृश्चिक राशि में होंगे।
- राहु $01^0 23'$ पर मीन राशि में हैं। सम राशि में 1-5 अंश तक वृषभ त्रिशांश रहेगा। अत: त्रिशांश कुण्डली में राहु वृषभ राशि में रहेंगे।
- केतु $01^0 23'$ पर कन्या राशि में हैं। सम राशि होने से वृषभ त्रिशांश रहेगा। अत: केतु वृषभ राशि में रहेंगे।

द्वादशांश कुण्डली

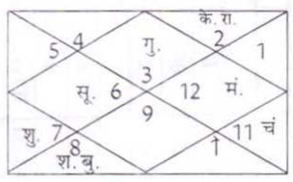

जब एक राशि को बारह भागों में विभाजित किया जाता है तो प्रत्येक भाग का मान $02^0 30'$ होता है जिसे द्वादशांश कहते हैं। द्वादशांश साधन में गणना उसी राशि से आरंभ की जाती है। निम्न सारणी से द्वादशांश का विभाजन समझा जा सकता है।

अंश		नवांश
0^0'00 -	02^0.30'	1
02^0.30'-	05^0.00'	2
05^0.00'-	07^0.30'	3
07^0.30'-	10^0.00'	4
10^0.00'-	12^0.30'	5

$12^0.30'$-	$15^0.00'$	6
$15^0.00'$-	$17^0.30'$	7
$17^0.30'$-	$20^0.00'$	8
$20^0.00'$-	$22^0.30'$	9
$22^0.30'$-	$25^0.00'$	10

हमारी उदाहरण कुण्डली में तुला लग्न $20^0.02'$ पर हैं। अत: यह दसवां द्वादशांश है। तुला से गणना करने पर राशि आती है कर्म, अत: द्वादशांश लग्न होगी कर्क।

- सूर्य $08^0.01'$ पर कन्या राशि में हैं। चौथे द्वादशांश में होने से सूर्य द्वादशांश कुण्डली में धनु राशि में होंगे।
- चन्द्रमा $07^0.14'$ पर तुला राशि में हैं। तीसरे द्वादशांश में होने से चन्द्रमा द्वादशांश कुण्डली में धनु राशि में होंगे।
- मंगल $17^0.06'$ पर कन्या राशि में हैं। सातवें द्वादशांश में होने से द्वादशांश कुण्डली में मंगल मीन राशि में होंगे।
- बुध $25^0.52'$ पर कन्या राशि में हैं। ग्यारहवें द्वादशांश में होने से बुध द्वादशांश कुण्डली में कर्क राशि में होंगे।
- बृहस्पति $23^0.27'$ पर तुला राशि में हैं। दसवें द्वादशांश में होने से द्वादशांश कुण्डली में बृहस्पति कर्क राशि में होंगे।
- शुक्र $29^0.48'$ पर कर्क राशि में हैं। बारहवें द्वादशांश में होने से द्वादशांश् कुण्डली में शुक्र कर्क रशि में होंगे।
- शनि $26^0.48'$ पर कर्क राशि में हैं। ग्यारहवें द्वादशांश में होने से द्वादशांश कुण्डली में शनि वृषभ राशि में होंगे।

द्वादशांश कुण्डली

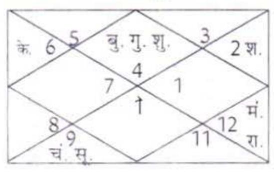

- राहु 01^0.23’ पर मीन राशि में हैं। पहले द्वादशांश में होने से राहु मीन में ही रहेंगे।
- केतु 01^0.23’ पर कन्या राशि में हैं। पहले द्वादशांश में होने से केतु कन्या राशि में ही रहेंगे।

8.4 सारांश

अब तो आप लोग नवमांश, सप्तमांश त्रिशांश एवं द्वादशांश् कुण्डली के बारे में जान गये होगें, फिर भी इन कुण्डलियों के अध्ययन के पश्चात् आपको पारिवारिक तथा समाजकृत फलों को पूर्ण रूपेण व्यवहार में लायेगें, तथा इसका निदान भी कर पायेंगे। इसलिए इन चारों वर्गों का अध्ययन महत्त्वपूर्ण है। साथ ही पृथ्वी तत्त्व, वायुतत्त्व एवं जल तत्त्व वाली राशियों से होने वाले शुभाशुभ फलों की जानकारी आपको मिलेगी एवं इसका पूर्ण ज्ञान करेंगें।

8.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

1 षड़वर्ग मं सप्तमांश कायागकरने से होता है।

(क) दशवर्ग (ख) सप्तम वर्ग
(ग) द्वादशवर्ग (घ) षोडश वर्ग

2 सप्तम वर्ग में दशमांश, षोडशांश षट्यंश का योग करने पर होगा

(क) दशवर्ग (ख) सप्तम वर्ग
(ग) द्वादशवर्ग (घ) षोडश वर्ग

3 6 अंश 40 कला किस नवमांश के भाग है।

(क) प्रथम नवमांश के (ख) द्वितीय नवमांश के

(ग) तृतीय नवमांश के (घ) चतुर्थ नवमांश के

4 तीसरा सप्तमांश होता है।

(क) 4 अंश 18 कला 8 विकला का

(ख) 8 अंश 34 कला 17 विकला का

(ग) 12 अंश 51 कला 24 विकला का

(घ) 18 अंश 8 कला 34 विकला का

4 समराशि में 1 से 5 अंश तक किस ग्रह का त्रिशांश होता है।

(क) बुद्ध (ख) बृहस्पति

(ग) शनि (घ) शुक्र

5 विषम राशि में 6 से 10 अंश तक किस ग्रह का त्रिशांश होता है।

(क) बुद्ध (ख) मंगल

(ग) शनि (घ) गुरू

6 सम राशि में 1 से 5 अंश तक किस ग्रह का त्रिशांश होता है।

(क) बुद्ध (ख) मंगल

(ग) शनि (घ) गुरू

7 सम राशि में 16 से 30 अंश तक किस ग्रह का त्रिशांश होता है।

(क) मंगल (ख) शुक्र

(ग) बुद्ध (घ) गुरू

8 सम राशि में 6 से 12 अंश तक किस ग्रह का त्रिशांश होता है।

(क) मंगल (ख) शुक्र

(ग) बुद्ध (घ) गुरू

9 कुल कितने वर्ग होते है

(क) 6 वर्ग (ख) 7 वर्ग

(ग) 10 वर्ग (घ) 16 वर्ग

8.6 शब्दावली

- समराशि – वषभ, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर, मीन
- विषमराशि ‘ मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु, कम्भ
- अग्नि तत्त्व राशि – मेष, सिंह, धनु
- पृथ्वी तत्त्व राशि – वृष, कन्या, मकर
- वायु तत्त्व राशि – मिथुन, तुला, कुम्भ
- जल तत्त्व राशि – कर्क, वृश्चिक, मीन

8.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

1 भारतीय ज्योतिष
लेखक नेमी चन्द्र शास्त्री

2 जातक पारिजात
व्याख्याकार – श्री हरिशंकर पाठक

इकाई - 9

विवाह योग में जन्मपत्रिका मिलान का महत्त्व

इकाई संरचना

9.1 प्रस्तावना
9.2 उद्देश्य
9.3 विषय प्रवेश
9.3.1. विवाह-योग
9.3.2. विवाह प्रतिबन्धक योग
9.3.3. प्रेम विवाह योग
9.4 विवाह हेतु जन्मपत्री मिलान का महत्त्व
9.5 मेलापक रहस्य
9.6 गुणमिलान का आधार
9.7 विवाह में मङ्गलयोग का विचार तथा उसके परिहार
9.7.1. मंगल दोष के परिहार
9.8 विवाह का निर्णय करते समय बृहस्पति का विचार करे या नहीं?
9.9 कन्या के विवाह में विलम्बदोष का परिहार
9.10 मेलापक सारिणी के प्रयोग हेतु आवश्यक निर्देश
9.11 सारांश
9.12 शब्दावली
9.13 अति लघुत्तरात्मक प्रश्न
9.14 लघुत्तरात्मक प्रश्न
9.15 सन्दर्भ ग्रन्थ
9.16 फलित में परमोपयोगी ग्रहदृष्ट्यादि चक्र
9.17 मेलापक सारिणी - द्वादश पृष्ठीय

9.1. प्रस्तावना

ज्योतिष शास्त्र से संबंधित यह नौवीं इकाई है। इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि ज्योतिष शास्त्र में विवाह योग में जन्मपत्रिका का मिलान का महत्त्व क्या है,इसके विषय में विशेष रूप से वर्णन किया गया है।

विवाह गृहस्थ आश्रम का प्रवेश द्वार है। विवाह शब्द वि + वाह से बना है। वि = विशेष रूप से वहन करने योग्य, सावधानी पूर्वक निभाने योग्य सम्बन्ध ही विवाह है। अन्य शब्दों में विवाह सुखी परिवार की आधारशिला है। सुखी व सम्पन्न परिवार से समाज में सुख-शान्ति व समृद्धि का विस्तार होता है। किसी विवाह का टूटना मात्र दो व्यक्तियों का अलग होना नही है, अपितु परिवार व समाज का बिखराव होना है। जब कभी विवाह का प्रश्न हो तो दैवज्ञ का कर्तव्य है कि वह विवाह का महत्त्व समझते हुए विधिपूर्वक जन्मकुण्ड़ली में विवाह योग का निर्णय लेवे तथा उनका भलीभॉंति मेलापक करे। विवाह के सन्दर्भ में मेलापक विषय के गूढ़, गम्भीर रहस्यमय सूत्रों का समुचित बोध करके व्यक्ति को सुखी एवं सौहार्दपूर्ण वैवाहिक जीवन प्रदान करे, यही बुद्धिजीव दैवज्ञ का परम कत्र्तव्य है।

9.2. उद्देश्य

इस इकाई द्वारा हम विवाह एवं उसके योगों का अध्ययन करेंगे तथा यह भी ज्ञान करने में सक्षम होंगे कि :-

1. विवाह क्या है? एवं समाज में इसका क्या महत्त्व है?

2. विवाह के लिए कौनसे भाव एवं ग्रहों द्वारा निर्णय करे?

3. विवाह में जन्मकुण्ड़ली मिलान का महत्त्व।

4. विवाह में मङ्गल दोष का विचार एवं बृहस्पति का निर्णय।

9.3. विषय प्रवेश

जिस प्रकार समस्त प्राणी अपने जीवन के लिए वायु पर आश्रित है, उसी प्रकार सम्पूर्ण आश्रम गृहस्थाश्रम पर आधारित है। विवाह इसी गृहस्थाश्रम का प्रवेश द्वार है। विवाह से परिवार, परिवार से समाज, समाज से समूचे विश्व की संरचना होता है। विवाह को कामोद्वेग की पूर्णता व सन्तुष्टि हेतु भी आवश्यक बताया है। विवाह द्वारा काम सन्तुष्टि, मनोवैज्ञानिक स्थिरता, आर्थिक सुरक्षा, समाजिक विकास, सांस्कृतिक मूल्यों के संरक्षण हेतु समुचित अवसर उपलब्ध होते है।

ज्योतिष शास्त्र के अनुसार विवाह पर निर्णय लेने हेतु सप्तमभाव प्रमुख है। सप्तम भाव, सप्तमेश, व कारक ग्रह का बली होना अति आवश्यक है, किन्तु अन्य भावों का भी दाम्पत्य जीवन पर प्रभावन जानना आवश्यक है। अत: लग्नादि द्वादश भावों पर प्रभाव का विचार सर्वप्रथम करेंगे :-

१. लग्न भाव :- जातक का स्वास्थ्य, रूप, गुण, स्वभाव प्रथमभाव से ही ज्ञात किया जाता है। श्रेष्ठ स्वास्थ्य व स्वभाव वैवाहिक जीवन को सरस व सुखी बनाता है। अतः दम्पत्ति की कुण्डली में फलित करते समय लग्न का विशेष ध्यान रखना चाहिए।

२. द्वितीय स्थान :- यह कुटुम्ब व धन का है तथा पत्नी के लिए अष्टम स्थान (सप्तमभाव से गणना करने पर) भी है। इसका शुभ व बली होना वैवाहिक सुख के आयुष्य में वृद्धि करता है।

३. तृतीय स्थान :- इस भाव से पराक्रम तथा भाई-बहन से स्नेह व सहयोग का विचार किया जाता है। यह भाव पत्नी का धर्म व भाग्य स्थान भी है। यदि पत्नी अपने पति के भाई-बहनों से स्नेहपूर्ण सम्बन्ध रखेगी तो अवश्य ही घर में सन्तोष और भाग्योदय होगा।

४. चतुर्थ स्थान :- यह सर्वसुख का भाव माना गया है। अतः इस भाव में शुभग्रहों की दृष्टि या युति परिवार में सुख-शान्ति बनायें रखती है।

५. पंचम स्थान :- बुद्धि, सन्तान, मित्र व प्रेम-सम्बन्धों का विचार इसी भाव से किया जाता है। पापग्रह का प्रभाव इस भाव में सन्तान सम्बन्धी कष्ट देता है। इसके विपरीत पंचमेश व सप्तमेश का राशि परिवर्तन या युति प्रेम-विवाह को सफल बनाता है।

६. षष्ठ स्थान :- यह भाव संघर्ष व स्पर्धा का भाव है, अतः शुभग्रह की दृष्टि व युति स्पर्धा में विजयी बनाकर सुख व यश देती है।

७. सप्तम स्थान :- पत्नी, ससुराल-पक्ष, कामसुख, दाम्पत्य जीवन का भाव है। सप्तम से गणना करने पर प्रथम/लग्न होने के कारण पत्नी का आचरण, रंग-रूप व गुणों का विचार इसी भाव से किया जाता है।

८. अष्टम स्थान :- कलंक, मृत्यु, गुप्तधन व गुप्तविद्या का विचार किया जाता है। अष्टमभाव का बली होना पत्नी को धन-संचय में कुशल बनाता है। स्त्री जातक के लिए यह मांगल्य भाव भी है।

९. नवम स्थान :- सह सप्तमभाव से तृतीय होने पर पत्नी का साहस, पराक्रम, कार्यकुशलता तथा छोटे भाई-बहनों के विषय में दर्शाता है।

१०. दशम स्थान :- यह भाव व्यापार, व्यवसाय व आजीविका का माना जाता है। सप्तमभाव से चतुर्थ होने पर यह पत्नी के मन का परिचायक है। शुभ ग्रह की दृष्टि पत्नी को सरल व सन्तोषी बनाती है।

११. एकादशी स्थान :- यह आय, लाभ, उन्नति व यश का भाव है। सप्तम से पंचम होने के कारण पत्नी के चातुर्य व शिक्षा का विचार इसी भाव से किया जाता है।

१२. द्वादश स्थान :- हानि, व्यय, सुख, वैभव तथा भोग का भाव है। सप्तम से षष्ठ होने पर पत्नी के रोग, शत्रु व चिन्ता को दर्शाता है। यह भाव यदि पापग्रस्त हो तो पत्नी रोगिणी होती है।

9.3.1. विवाह-योग

ज्यातिषियों का मत है कि सप्तम, सप्तमेश एवं शुक्र विवाहकारक है, किन्तु स्त्रियों की कुण्ड़ली में गुरु को भी विशेष महत्त्व दिया गया है। स्त्री की कुण्ड़ली में यह पतिसुख का कारक माना गया है। अन्य विद्वान लग्न कुण्ड़ली के अतिरिक्त चन्द्र, शुक्र व नवमांश कुण्ड़ली में भी सप्तमभाव, सप्तमेश व कारक शुक्र का बली होना उत्तम माना गया है। अन्य ज्योतिषियों ने नवमांश कुण्ड़ली को विवाह-सुख जानने हेतु अधिक महत्त्व दिया है क्योंकि नवमांश कुण्ड़ली ही सप्तमभाव के कारकतत्वों को जानने के लिए पर्याप्त है :-

१. लग्नकुण्डली, चन्द्रकुण्डली, शुक्रकुण्डली व नवमांश कुण्डली में सप्तभाव, सप्तमेश व कारक का बली होना दाम्पत्यसुख के लिए उत्तम माना गया है।

२. सप्तमभाव यदि अपने स्वामी से दृष्ट या युत हो तथा किसी पापग्रह से युत या दृष्ट न हो तो विवाह शीघ्र व मनोनुकूल होता है।

३. यदि पापग्रह (सूर्य, मंगल, शनि, राहु, केतु व पापयुत बुध) सप्तमभाव में स्वगृही हो या सप्तमभाव को देखे तो भी इसे शुभयोग माना जाता है।

४. सप्तमेश शुभग्रह हो या बली होकर शुभ स्थान (केन्द्र, त्रिकोण) में स्थित हो तो विवाह शीघ्र व मनोनुकूल होता है।

५. मतान्तर से द्वितीय व द्वादश भाव भी दाम्पत्यसुख के कारक है, अतः इनके स्वामी का केन्द्र या त्रिकोण में स्थित होना भी श्रेष्ठ विवाहयोग बनाता है।

६. गुरु, शुक्र बली (शुभग्रहों से युत व दृष्ट अथवा अशुभग्रहों से अयुत व अदृष्ट) हो विवाह शीघ्र एवं मनोनुकूल होता है।

७. लग्न, चन्द्रमा या शुक्र से द्वितीय सप्तम व द्वादश पर गुरु की दृष्टि या युति भी वैवाहिक सुख को ब‹ढाती है तथा पंचमेश (सन्तान व प्रेम सम्बन्धी कारक) व सप्तमेश सबल होना विवाह का सुख देता है।

८. सप्तमेश, शुक्र व गुरु के बली होकर केन्द्र, त्रिकोण में स्थित होने से विवाह योग बनता है।

९. शुक्र का पंचमेश या नवमेश से दृष्ट होना भी श्रेष्ठ विवाहयोग होता है।

ब.. विवाह प्रतिबन्धक योग :-

१. सप्तमभाव पापग्रह से युत या दृष्ट हो अथवा बलहीन व पापग्रह के वर्ग में हो।

२. अष्टमस्थ शुक्र यदि बुध या शनि से युत या दृष्ट हो अथवा चन्द्रराशीश, सप्तमेश या नवांश लग्नेश अस्त हो।

३. चन्द्रमा से सप्तम राशि में शनि व मंगल की युति हो अथवा शुक्र यदि नीच राशि या नीच नवमांश में या अस्त हो अथवा शुक्र यदि शनि के वर्ग में हो।

ब.. प्रेम विवाह-योग :-

१. लग्नेश व सप्तमेश की युति पंचम अथवा सप्तमभाव में हो।

२. पंचमेश व सप्तमेश का परस्पर राशि परिवर्तन।

३. लाभस्थान में लग्नेश व सप्तमेश पर भाग्येश की दृष्टि व युति हो।

४. व्ययभाव में लग्नेश व सप्तमेश पर भाग्येश की दृष्टि व युति हो।

५. सप्तमेश से दृष्ट या युत शुक्र द्वादशभाव में हो अथवा लग्नेश पंचमस्थ होकर सप्तमेश से दृष्ट हो अथवा सप्तमेश व्ययस्थ होकर लग्नेश से दृष्टिसम्बन्ध या युतिसम्बन्ध करें तो विदेश में प्रेम-विवाह होता है।

9.4. विवाह हेतु जन्मपत्री मिलान का महत्त्व

विवाह से पूर्व जीवनसाथी के विषय में अनेक प्रश्न व्यक्ति में मन को आन्दोलित करते है। इस सन्दर्भ में ज्योतिष की भूमिका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। सुखी और समृद्ध दाम्पत्य जीवन के लिए विधिवत जन्मकुण्ड़ली मिलान अवश्य करना चाहिए, इसके द्वारा वर-कन्या के शारीरिक, मानसिक दुर्बलताओं एवं विशेषतओं का आंकलन सरलता से हो जाता है। कुण्ड़ली मिलान हेतु निम्नलिखित आवश्यक तथ्य :-

1. मेलापक गुण-मिलान से पूर्व वर-कन्या का आयु का निर्णय कर लेना चाहिए।
2. दोनों कुण्ड़लियों में लग्न, सप्तम तथा अष्टम भाव को विचार सम्यक रूप से करे।
3. यदि वर-कन्या का आयुष्य स्वल्प अथवा अल्पायु योग है या मारक दशा आने वाली है तो ऐसे में विवाह पर विचार करना अनुचित है।
4. यदि किसी एक की कुण्ड़ली में सप्तमभाव हीनबली है, तो दूसरे के कुण्ड़ली में इस हीनता को दूर करने वाले बलशाली योगों का होना परम आवश्यक है, तभी विवाह पर विचार करे।

9.5. मेलापक रहस्य

मेलापक के सन्दर्भ में जातकदेशमार्ग के अनुसार वर और कन्या के विवाहोपरान्त सुख-समृद्धि, वृद्धि तथा अनुकूलता हेतु प्रसङ्ग प्रकट किया गया है। परिणय से पूर्व वर-कन्या के जन्माङ्ग मिलाने की परम्परा पुरातन काल (सम्भव है कि स्वयंवर के समय में भी आमन्त्रित राजाओं की कुण्ड़ली का मिलान करने के पश्चात् ही आमन्त्रण दिया जाता होगा) से ही रही है। सामान्यत: कुण्ड़ली मिलान नक्षत्र मेलापक द्वारा करते है, जिसे हम अष्टकूट गुण-मिलान के नाम से भी जानते है। अष्टकूट गुण-मिलान के अनुसार जिने अधिक गुण अनुकूल होंगे, विवाह के सफल होने की सम्भावन भी उतनी ही प्रबल हो जायेगी।

अन्य दैवज्ञों ने लग्न-मेलापक, ग्रह-मेलापक एवं भाव-मेलापक भी कुण्ड़ली मिलान हेतु विचारशील बताया है।

1. लग्न-मेलापक :- वर-कन्या की लग्न के पारस्परिक सम्बन्धों पर विचार करना अति आवश्यक है। प्राय: समान तत्त्वों की लग्न अथवा एक-दूसरे से समसप्तक लग्न सुखद परिणय का सूचक होती है। जिस प्रकार हम वर-कन्या की जन्म राशियों में परस्पर भिन्नता देखते है, उसी प्रकार लग्न से व्यक्तित्व, प्रतिभा, गुण, क्षमता आदि को मिलान अनिवार्य है। यदि वर-कन्या दोनों के लग्नों के तत्वों में सम्बन्ध अनुकूल है तो वैवाहिक जीवन सुखमय होगा। लग्न राशियों के तत्वों में अनुकूलता निम्न प्रकार से होगी :-

अ - अग्नितत्व राशि :- अग्नि तथा वायुतत्त्व की लग्न अनुकूल है।

ब - पृथ्वी तत्त्व राशि :- पृथ्वी तत्त्व तथा जल तत्त्व की लग्न अनुकूल है।

स - वायु तत्त्व राशि :- वायु तत्त्व तथा अग्नि तत्त्व की लग्न अनुकूल है।

द - जल तत्त्व राशि :- जल तत्त्व तथा पृथ्वी तत्त्व लग्न की लग्न अनुकूल है।

2. ग्रह मेलापक :- वर-कन्या के सुखद वैवाहिक जीवन हेतु ग्रह मेलापक आवश्यक है। ग्रह-मिलान में त्रुटि दाम्वत्य जीवन को दारुण बना सकती है। इस प्रकार के अनेक ग्रहयोग है, जिनके परिणामस्वरूप जीवन क्लेशित होता है। उदाहरणार्थ यदि कुण्ड़ली में शुक्र, चन्द्र अथवा मङ्गल के मध्यस्थ होकर पापकर्तरि योग में हो तो दाम्पत्य पूर्णतया असन्तोषप्रद हो जायेगा। यदि किसी जातक की कुण्ड़ली में ऐसा दुर्योग हो तो उसे उसी को जीवनसाथी बनाना चाहिए जिसके ग्रह इन दोषों का शमन करने का सामथ्र्य (कुण्ड़ली में ग्रह बलवान हो) रखते हो। प्राय: कुछ ज्योतिषियों का मत है कि वर-कन्या किसी एक की कुण्ड़ली में यदि शुक्र अथवा मङ्गल किसी भी राशि में स्थित हो तो उससे सप्तमस्थ राशि में दूसरे की कुण्ड़ली में स्थित ग्रह प्राय: विवाह मिलान में शुभ होता है।

3. भाव मेलापक :- वैवाहिक जीवन के सुख और दीर्घायुष्य के लिए भाव मेलापक आवश्यक है। प्राय: ज्योतिष में सर्वाधिक महत्त्व नक्षत्र मेलापक को ही मिलता है क्योंकि अष्टकूट का निर्धारण उसी से होता है। प्राय: ज्योतिर्विद लग्न मेलापक, भाव मेलापक और ग्रह मेलापक का प्रयोग अत्यल्प करते है। वर-कन्या की जन्म कुण्ड़लियों में किस प्रकार भाव मेलापक का अध्ययन करना चाहिए, उसके कुछ आधारभूत नियम निम्नलिखित है :-

1. वर के जन्माङ्ग मे शुक्र/लग्नेश/सप्तमेश की उच्च राशि जिस राशि में स्थित हो, वही राशि या लग्न कन्या की कुण्ड़ली मे हो तो दाम्पत्य जीवन सुखमय व्यतीत होता है।

2. कन्या की लग्न या राशि वर के जन्माङ्ग में सप्तमेश राशि हो तो दाम्पत्य जीवन सुखमय व्यतीत होता है।

3. वर के सप्तमेश की नीच राशि भी यदि पत्नी की राशि अथवा लग्न हो तो भी विवाह सुखद होता है।

4. यदि वर कन्या के सप्तम भाव, जिन ग्रहों से दृष्ट हो या वे जिन राशियों में स्थित हो तथा कन्या या वर की उनमें से राशि हो तो दाम्पत्य जीवन सुखमय व्यतीत होता है।

5. यदि वर और कन्या की लग्न तथा राशि एक ही हो तो विवाह अत्यन्त सुखमय, समृद्धिशाली तथा हर्षोल्लासपूर्ण होता है। यदि दोनों लग्न समान हो परन्तु राशियाँ भिन्न हो या दोनों की राशियाँ समान हो तथा लग्न भिन्न हो तो भी विवाह शुभ होता है।

6. यदि जन्माङ्गों के मिलान में अधिक अष्टकूट का साम्य हो, लग्न एक-दूसरे से समसप्तक हो, राशियाँ एक हो, लेकिन नक्षत्र भिन्न हो तो दाम्पत्य जीवन सुखमय व्यतीत होता है।

7. वर की नवमांश लग्न यदि कन्या की जन्मलग्न हो और यदि कन्या की नवमांश लग्न वर की जन्मलग्न हो तो दाम्पत्य जीवन सुखमय व्यतीत होता है।

4. नक्षत्र मेलापक :- यह ज्योतिष की अनोखी एवं प्रचलित विद्या है, जिसमें आठ तत्वों पर विचार करके दो व्यक्तियों के परस्पर सहयोग व सामंजस्य पर विचार किया जाता है। कुण्ड़ली-मिलान हेतु यह विधि सर्वाधिक प्रयुक्त होती है, इसमें 36 गुणों का उल्लेख है। यदि दोनों कुण्ड़लियों न्यूनतक अ_ारह गुण भी मिले तो वैवाहिक अनुमति प्राप्त हो जाती है। यह आठ तत्त्व तथा उनके गुणांकों का विवरण गुणमिलान का आधार में विस्तृत रूप में दी गयी है।

9.6. गुणमिलान का आधार

वर्णो वश्यं तथा तारा योनिश्च ग्रहमैत्रकम्।

गणमैत्रं भकूटं च नाड़ी चैते गुणाधिका:॥

अष्टकूट विचार :- 1. वर्ण, 2. वश्य, 3. तारा, 4. योनि, 5. राशीशमैत्री, 6. गण, 7. भकूट, 8. नाड़ी। इन कूटों के पूर्णगुण निम्नलिखित है :-

1. वर्ण का एक (1) गुण, 2. वश्य के दो (2) गुण, 3. तारा के तीन (3) गुण, 4. योनि के चार (4) गुण, 5. राशीशमैत्री के पाँच (5) गुण, 6. गण के छ: (6) गुण, 7. भकूट के सात (7) गुण, 8. नाड़ी के आठ (8) गुण। इन आठों कूटों के गुणों का कुल योग 36 है। वर एवं कन्या के विवाह के लिए न्यूनतम 18 गुण तो मिलने ही चाहिए, कहीं 16 भी (गुणा: षोड़शाभिर्निन्द्या: परतस्तूत्तमोत्तमा:) न्यूनतम माने गये है।

1. वर्णकूट :- वर्णकूट का राशियों से सम्बन्ध है। मीन, वृश्चिक और कर्क राशियाँ ब्राह्मण, मेष, सिंह और धनु राशियाँ क्षत्रिय, वृष, कन्या और मकर राशियाँ वैश्य तथा मिथुन, कुम्भ और तुला राशियाँ शूद्रवर्णा है। कन्या की राशि का वर्ण वर की राशि के वर्ण से हीन हो तो वर्णकूट का गुण एक (1) अन्यथा शून्य (0) होगा। जहाँ वर्णकूट का गुण शून्य हो वहाँ वर्णदोष माना जाता है, अर्थात् वहाँ वर्ण की अशुद्धि कहनी चाहिए।

1. वर्णगुण तालिका					
वर	वर्ण	ब्राह्मण	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र
कन्या	ब्राह्मण	१	०	०	०
	क्षत्रिय	१	१	०	०
	वैश्य	१	१	१	०
	शूद्र	१	१	१	१

वर्णदोष का परिहार :- वर एवं कन्या के राशीश परस्पर अतिमित्र, मित्र या सम हो, वर-कन्या की एक ही राशि हो, नवांशेश मैत्री अथवा एकता हो, कन्या के राशीश का वर्ण वर के राशीश के वर्ण से हीन हो तो वर्णदोष का परिहार हो जाता है।

हीनवर्णो यदा राशि: राशीशवर्ण उत्तम:। तदा राशीश्वरो ग्राह्य: तद्राशिं नैव चिन्तयेत्॥

2. वश्यकूट :- मेष, वृष की चतुष्पद, मिथुन, कन्या, तुला, धनु, कुम्भ की द्विपद, कर्क, मकर, मीन की जलचर, सिंह की वनचर और वृश्चिक राशि की कीटसंज्ञा है। इन राशियों का अपनी जाति की प्रकृति के अनुसार परस्पर मित्र, शत्रु, भक्ष्य-वश्य, वश्य-भक्ष्य, वश्य-वैर और वैर-भक्ष्य सम्बन्ध है।

वश्यदोष का परिहार :- वर-कन्या के राशीश परस्पर मित्र, अतिमित्र या सम हो, वर-कन्या की एक ही राशि हो, नवांशेश मैत्री अथवा एकता हो, योनिमैत्री हो तो दोष का परिहार हो जाता है।

स्वभावमैत्री सखिता स्वपत्योर्वशित्वमन्योन्यभयोनिशुद्धि:।

पर: पर: पूर्वगमे गवेष्य: हस्ते त्रिवर्गी युगपद्युतिश्चेत्॥

2. वश्यगुण तालिका (प्रथम)						
वर	वश्य	चतुष्पद	कीट	वनचर	द्विपद	जलचर
कन्या	चतुष्पद (मेष,वृष)	२	१	०	१	१
	कीट (वृश्चिक)	१	२	०	०	१
	वनचर (सिंह)	०	०	२	०	१
	द्विपद (मि.,क., तु.,ध.,कु.)	१	०	०	२	॥
	जलचर (र्क.,म., मीन)	१	१	१	॥	२

2. वश्यगुण तालिका (द्वितीय)						
वर	वश्य	चतुष्पद	कीट	वनचर	द्विपद	जलचर
कन्या		(मे., वृ., ध.-उत्तरार्ध, म.-पूर्वार्ध)	(वृश्चिक)	(सिंह)	(मि., क., तु., ध.-पूवार्ध, कुम्भ)	(र्क.,मी. म.-उत्तरार्ध)
	चतुष्पद	२	१	०	१	१
	कीट	१	२	०	०	१
	वनचर	०	०	२	०	१
	द्विपद	१	०	०	२	॥
	जलचर	१	१	१	॥	२

3. ताराकूट :-

३. तारागुण तालिका										
वर	तारा	१	२	३	४	५	६	७	८	९
कन्या	१	३	३	१ ॥	१ ॥	१ ॥	१ ॥	१ ॥	१ ॥	३
	२	३	३	३	१ ॥	१ ॥	१ ॥	१ ॥	१ ॥	१ ॥
	३	१ ॥	३	३	३	१ ॥	१ ॥	१ ॥	१ ॥	१ ॥
	४	१ ॥	१ ॥	३	३	३	१ ॥	१ ॥	१ ॥	१ ॥
	५	१ ॥	१ ॥	१ ॥	३	३	३	१ ॥	१ ॥	१ ॥
	६	१ ॥	१ ॥	१ ॥	१ ॥	३	३	३	१ ॥	१ ॥
	७	१ ॥	१ ॥	१ ॥	१ ॥	१ ॥	३	३	३	१ ॥
	८	१ ॥	१ ॥	१ ॥	१ ॥	१ ॥	१ ॥	३	३	३
	९	३	१ ॥	१ ॥	१ ॥	१ ॥	१ ॥	१ ॥	३	३

ताराकूट का सम्बन्ध नक्षत्रों से होता है। यह शुभ एवं अशुभ दो प्रकार का होता है। कन्या के जन्मनक्षत्र से वर के जन्मनक्षत्र तक और वर के जन्मनक्षत्र से कन्या के जन्मनक्षत्र तक गिनती करे, उसमें नौ (9) का भाग देने से यदि 3, 5, 7 शेष बचे तो तारामेलापक अशुभ होते है अन्यथा शुभ होते है। वर एवं कन्या की तारा उत्तम होने पर तीन (3) गुण, एक की उत्तमऔर दूसरे की अधम होने पर डेढ़ (1॥) गुण मिलता है। दोनों प्रकार से अशुभतारा कभी भी प्राप्त नहीं होती है।

ताराकूट दोष का परिहार :- वर-कन्या के राशीश परस्पर मित्र, अतिमित्र या सम हो, वर-कन्या की एक ही राशि हो, नवांशेश मैत्री अथवा एकता हो।

4. योनिकूट

4. योनिगुण तालिका															
वर	योनि	अश्व	गज	मेष	सर्प	श्वान	मार्जार	मूषक	गौ	महिषी	व्याघ्र	मृग	वानर	नकुल	सिंह
कन्या	अश्व	४	२	३	२	२	३	३	३	०	१	३	२	२	१
	गज	२	४	३	२	२	३	३	३	३	१	३	२	२	०
	मेष	३	३	४	२	२	३	३	३	३	१	३	०	२	१
	सर्प	२	२	२	४	२	१	१	२	२	२	२	१	०	२
	श्वान	२	२	२	२	४	१	२	२	२	१	०	२	२	१
	मार्जार	३	३	३	१	१	४	०	३	३	२	३	२	२	१
	मूषक	३	३	३	१	२	०	४	३	३	२	३	२	१	२
	गौ	३	३	३	२	२	३	३	४	३	०	३	२	२	१
	महिषी	०	३	३	२	२	३	३	३	४	१	२	२	२	१
	व्याघ्र	१	१	१	२	१	२	२	०	१	४	१	२	२	१
	मृग	३	३	३	२	०	३	२	३	३	१	४	२	२	१
	वानर	२	२	०	१	२	२	२	२	२	२	२	४	२	१
	नकुल	२	२	२	०	२	२	१	२	२	२	२	२	४	२
	सिंह	१	०	१	२	१	२	२	१	१	१	१	१	२	४

(नक्षत्रों की योनियाँ) अश्विनी, शतभिषा नक्षत्रों की अश्व, स्वाती, हस्त नक्षत्रों की महिष (भैंस), धनिष्ठा, पूर्वाभाद्रपद की सिंह, भरणी, रेवती की हाथी (गज), पुष्य, कृत्तिका की मेष (बकरा), श्रवण, पूर्वाषाढ़ा की वानर, उत्तराषाढ़ा, अभिजित् की नकुल (नेवला), मृगशिरा, रोहिणी की सर्प, ज्येष्ठा अनुराधा की हरिण, मूल, आद्र्रा की श्वान, पुनर्वसु, आश्लेषा की विडाल (बिलोटा), मघा, पूर्वाफाल्गुनी की मूषक, विशाखा, चित्रा की व्याघ्र और उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद की गौ (गाय) योनि होती है। श्लोक में एक एक पाद में एक एक योनि कही गयी है। इस प्रकार श्लोक में 7x2 = 14 योनियों में प्रत्येक पाद की दो योनियों में परस्पर महावैर है जो विवाह में त्याज्य है। जैसे प्रथम पाद के पूर्वार्ध में अश्विनी व शतभिषा की अश्वयोनि का प्रथमपाद के उत्तरार्ध में स्वाती व हस्त की महिष योनि से बड़ा वैर स्वाभाविक होता है। प्रत्यक्ष में भी यहीं देखा जाता है। इन योनियों का परस्पर सम्बन्ध पाँच प्रकार का है :- 1. स्वभाव (अपनी ही योनि), 2. मित्र, 3. उदासीन, 4. शत्रु, 5. महाशत्रु। वर और कन्या के नक्षत्रों की योनि एक ही हो तो विवाह शुभ होता है, दोनों के नक्षत्र परस्पर उदासीन योनि के हो तो विवाह सामान्य होता है, यदि परस्पर शत्रुयोनि हो तो विवाह अशुभ होता है, यदि महाशत्रुयोनि हो तो घोरनिन्दनीय माना गया है। दोनों के नक्षत्र स्वभाव (एक ही योनि) योनि के हो तो योनिकूट के गुण चार (4) मिलते है, यदि दोनों के नक्षत्र मित्रयोनि के हो तो योनिकूट के तीन (3) गुण मिलते है, यदि दोनों के नक्षत्र उदासीन योनि के हो तो योनिकूट के दो (2) गुण मिलते है, यदि दोनों के नक्षत्र शत्रुयोनि के हो तो योनिकूट का गुण एक (1) मिलता है, यदि परस्पर महाशत्रुयोनि के नक्षत्र हो तो योनिकूट के शून्य (0) गुण मिलते है।

योनिकूटदोष का परिहार :- वर-कन्या के राशीश परस्पर मित्र, अतिमित्र या सम हो, वर-कन्या की एक ही राशि हो, नवांशेश मैत्री अथवा एकता हो, भकूटशुद्धि हो, वश्यशुद्धि होने पर योनिकूटदोष का परिहार हो जाता है।

5. राशीशमैत्रीकूट :-

5. राशीशमैत्रीगुण तालिका								
वर	तारा	सूर्य	चन्द्र	मङ्गल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
कन्या	सूर्य	५	५	५	३	५	०	०
	चन्द्र	५	५	४	१	४	॥	॥
	मङ्गल	५	४	५	॥	५	३	॥
	बुध	३	१	॥	५	॥	५	४
	गुरु	५	४	५	॥	५	॥	३
	शुक्र	५	॥	३	५	॥	५	५
	शनि	०	॥	॥	४	३	५	५

यह राशियों से से सम्बन्धित है। यदि दोनों की राशियों का स्वामी एक ही हो या दोनों की राशियों के स्वामी परस्पर मित्र हों तो विवाहसम्बन्ध अत्युत्तम, परस्पर मित्र-सम हो तो उत्तम, परस्पर सम हो तो

सामान्य, परस्पर मित्र-शत्रु हो तो निकृष्ट, परस्पर सम-शत्रु हो निकृष्टतर एवं परस्पर शत्रु हो तो निकृष्टतम माना जाता है। दोनों का राशीश एक ही हो तो पाँच (5) गुण मिलते है, दानों के राशीश मित्र हो तो पाँच (5) गुण, दोनों की राशीश परस्पर मित्र-सम हो तो चार (4) गुण, दानों के राशीश परस्पर सम हो तो तीन (3) गुण मिलते है, दानों के राशीश परस्पर मित्र-शत्रु हों तो एक (1) गुण मिलता है, दोनों के राशीश परस्पर सम-शत्रु हों तो आधा (॥) गुण मिलता है, दोनों के राशीश परस्पर शत्रु हों तो शून्य (0) गुण मिलते है॥

राशीमैत्रीकूट का परिहार :- वर-कन्या के नवांशेश मैत्री अथवा एकता हो, दोनों की राशियाँ भिन्न और नक्षत्र एक हो, सद्भकूट (गणं नाड़ीं नृदूरं च ग्रहवैरं न चिन्तयेत्) हो तो दोष का परिहार हो जाता है।

राशिनाथे विरुद्धेऽपि मित्रत्वे वांशनाथयो:। विवाहं कारयेद् धीमान् दम्पत्यो: सौख्यवर्धनम्॥

एकराशौ पृथक् धिष्ण्ये पृथग्राशौ तथैकभे। गणं नाड़ीं नृदूरं च ग्रहवैरं न चिन्तयेत्॥

6. गणकूट :-

6. गणमैत्री तालिका				
वर	गण	देव	नर	राक्षस
कन्या	देव	६	५	१
	नर	६	६	०
	राक्षस	०	०	६

गणकूट का सम्बन्ध नक्षत्रों से है। अश्विनी, मृगशिरा, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, स्वाती, अनुराधा, श्रवण, रेवती नक्षत्र देवगण में आते है, भरणी, रोहिणी, आद्र्रा, तीनों उत्तरा, तीनों पूर्वा मनुष्यगुण में आते हैं, कृत्तिका, आश्लेषा, मघा, चित्रा, विशाखा, ज्येष्ठा, मूल, धनिष्ठा, शतभिषा राक्षसगण में आते हैं। एक ही गण के नक्षत्रों वाले वर-कन्या का विवाह शुभ माना जाता है। देव व मनुष्यगण के नक्षत्र वाले वर-कन्या का विवाह भी कुछ शास्त्रकारों ने शुभ माना है। देव व राक्षसगण तथा मनुष्य व राक्षस गण वालों के विवाह अशुभ होते है। वर-कन्या के नक्षत्रों के गुण परस्पर क्रमश: देव-देव, मनुष्य-मनुष्य, मनुष्य-देव, राक्षस-राक्षस हो तो छ: (6) गुण मिलते है। वर-कन्या नक्षत्रों के गण देव-मनुष्य हो तो पाँच (5) गुण मिलते है, यदि वर-कन्या के नक्षत्रों के गण देव-राक्षस हो तो एक (1) गुण मिलता है, यदि वर-कन्या के नक्षत्रों के गण परस्पर क्रमश: मनुष्य-राक्षस, राक्षस-देव, राक्षस-मनुष्य हो तो शून्य (0) गुण मिलते है।

गणदोष का परिहार :- वर-कन्या के राशीश परस्पर मित्र, अतिमित्र या सम हो, वर-कन्या की एक ही राशि हो, नवांशेश मैत्री अथवा एकता हो, सद्भकूट हो तो दोष का परिहार हो जाता है।

सद्भकूटं योनिशुद्धिः ग्रहसंख्यं गुणत्रयम्।

एष्वेकतमसद्भावे नारी रक्षोगणा शुभा॥

ग्रहमैत्री च राशिश्च विद्यते नियतं यदि।

न गणाभावजनितं दूषणं स्याद्विरोधदम्॥

7. भकूट

7. भकूटगुण तालिका													
वर	राशि	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
कन्या	मेष	७	०	७	७	०	०	७	०	०	७	७	०
	वृष	०	७	०	७	७	०	०	७	०	०	७	७
	मिथुन	७	०	७	०	७	७	०	०	७	०	०	७
	कर्क	७	७	०	७	०	७	७	०	०	७	०	०
	सिंह	०	७	७	०	७	०	७	७	०	०	७	०
	कन्या	०	०	७	७	०	७	०	७	७	०	०	७
	तुला	७	०	०	७	७	०	७	०	७	७	०	०
	वृश्चिक	०	७	०	०	७	७	०	७	०	७	७	०
	धनु	०	०	७	०	०	७	७	०	७	०	७	७
	मकर	७	०	०	७	०	०	७	७	०	७	०	७
	कुम्भ	७	७	०	०	७	०	०	७	७	०	७	०
	मीन	०	७	७	०	०	७	०	०	७	७	०	७

इसे राशिकूट भी कहते है। यह तीन प्रकार का होता है:- 1. दिर्द्वादश, 2. नवम-पञ्चम, 3. षडष्टक। वर की राशि कन्या की राशि से अथवा कन्या की राशि वर की राशि से द्वितीय, द्वादश हो तो दिर्द्वादश राशिकूट दोष होता है, नवम व पञ्चम हो तो नवम-पञ्चम राशिकूट दोष होता है, षष्ठ या अष्टम होने पर षडष्टक राशिकूट दोष होता है। इन तीनों स्थितियों में राशिकूट का गुण शून्य (0) होता है। राशिकूट दोष न होने पर राशिकूट के गुण सात (7) होते है। राशिकूट दोष के अभाव को सद्भकूट कहा जाता है।

भकूट दोष का परिहार :- वर-कन्या के राशीश परस्पर मित्र, अतिमित्र या सम हो, वर-कन्या के नवांशेश मैत्री अथवा एकता हो, दोनों की राशियाँ भिन्न और नक्षत्र एक हो, सद्भकूट (गणं नाड़ीं नृदूरं च ग्रहवैरं न चिन्तयेत्) हो तो दोष का परिहार हो जाता है। तीनों भकूटों मे ें षडष्टक सबसे अधिक दोषकारक माना गया है, इसके ऊपर जो परिहार बतलाए गये है उनमें से किसी एक परिहार के साथ वश्यशुद्धि तथा ताराशुद्धि में से कोई एक भी प्राप्त हो जाए तो षडष्टक का परिहार उत्तम माना जाता है।

वर्गवैरं योनिवैरं गणवैरं नृदूरकं दुष्टकूटफलं सर्वं ग्रहमैत्र्या विनश्यति॥

8. नाड़ीकूट

8. नाड़ीमैत्री तालिका				
वर	नाड़ी	आदि	मध्य	अन्त्य
कन्या	आदि	०	८	८
	मध्य	८	०	८
	अन्त्य	८	८	०

नाडिय़ाँ तीन प्रकार की होती है :- 1. आदि, 2. मध्य, 3. अन्त्य। अश्विनी, आद्र्रा, पुनर्वसु, उ.फा., हस्त, ज्येष्ठा, मूल, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र आदिनाड़ी के, भरणी, मृगशिरा, पुष्य, पू.फा., चित्रा, अनुराधा, पूर्वाषाढ़ा, धनिष्ठा, उत्तराभाद्रपद मध्यनाड़ी के, कृत्तिका, रोहिणी, आश्लेषा, मघा, स्वाती, विशाखा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण व रेवती अन्त्यनाड़ी के अन्तर्गत आते है। वर-कन्या के नक्षत्र एक ही नाड़ी के हों तो नाड़ीदोष होता है। नाड़ी एक होने पर शून्य (0) गुण मिलते है एवं भिन्न नाड़ी में आठ (8) गुण मिलते है।

एकनाड़ीविवाहश्च गुणै: सर्वै: समन्वित:।

वर्जनीय: प्रयत्नेन दम्पत्योर्निधनं यत:॥

नाड़ीदोष का परिहार :- वर-कन्या की राशि एक हो और नक्षत्र भिन्न हों, नक्षत्र एक हो और चरण भिन्न हों, नक्षत्र एक हो और राशियाँ भिन्न हों, पादवेध न हो।

एकराशौ पृथग्धिष्ण्ये पृथग्राशौ तथैक-भे।

गणं नाड़ीं नृदूरं च ग्रहवैरं न चिन्तयेत्॥

नक्षत्रैक्ये पादभेदे शुभं स्यात्॥

विवाह में मङ्गलयोग का विचार तथा उसके परिहार -

विवाह संस्कार में वर-कन्या की जन्म कुण्डली में वर्ण, वश्य, तारा, ग्रहमैत्री, नाड़ी आदि अष्टकूट सम्बन्धी विचार के बाद मङ्गलिक योग पर विशेष रूप से विचार किया जाता हैं। मङ्गल रक्त का कारक भी हैं अत: इसका विचार तो करना ही चाहिए क्योंकि रक्तकारक ग्रह ही दूषित होगा तो अशुभ फल भी मिल सकता है। मङ्गलदोष का विचार सामान्यत: निम्न श्लोकों से किया जाता है।

धने व्यये च पाताले जामित्रे चाष्टमे कुजे।

भार्या भर्तु: विनाशाय भर्तुश्च स्त्रीविनाशनम्॥ :- अगस्त्य संहिता

धने व्यये च पाताले जामित्रे चाष्टमे कुजे।

कन्या भर्तुर्विनाशाय भर्तु: कन्या विनश्यति॥ :- मानसागरी

लग्ने व्यये चतुर्थे च सप्तमे वा अष्टमे कुज:।

भर्तारं नाशयेद् भार्या भर्ता भार्या विनाशयेत्॥ :- बृहत् ज्योतिषसार

लग्ने व्यये च पाताले जामित्रे चाष्टमे कुजे।

स्त्रीणां भर्तु: विनाश: स्यात् पुंसां भार्या विनश्यति॥ :- भावदीपिका

लग्ने व्यये सुखे वापि सप्तमे वा अष्टमे कुजे।

शुभदृग्योगहीने च पतिं हन्ति न संशयम्॥ :- बहत्पाराशर होराशास्त्र

लग्ने व्यये च पाताले जामित्रे चाष्टमे कुजे।

कन्या भर्तुर्विनाशाय भर्ता कन्याविनाशक:॥ :- मुहूर्तसंग्रहदर्पण

उपरोक्त सभी श्लोको का एक ही अर्थ है कि प्रथम, चतुर्थ, सप्तम, अष्टम या द्वादश भाव में यदि मङ्गल हो तो वधू वर के लिए तथा वर वधू के लिए हानिकारक होता है।

वैसे उपरोक्त श्लोको में कुछ श्लोक तर्कसङ्गत नहीं है क्योंकि उनमें कन्या (कुंवारी कन्या) व भर्ता (शादी के बाद पुरुष की संज्ञा) का उल्लेख है जो कि तर्कसम्मत नहीं बैठते है क्योंकि कुंवारी कन्या विवाहित पुरुष के लिए किस प्रकार से हानिप्रद हो सकती हैं क्योंकि कोई भी माता-पिता अपनी कन्या का विवाह विवाहित पुरुष से नहीं करेंगे, अत: इन श्लोकों में शब्दभेद है। यहाँ हमने इनका उल्लेख किया है क्योंकि बहुत से विद्वान मुहूर्तसंग्रहदर्पण का श्लोक ही व्यवहार में लाते हैं अन्य श्लोकों का उल्लेख नहीं करते है।

फिर भी कुछ श्लोक तर्कसंगत हैं क्योंकि वे भार्या व भर्ता की संज्ञा का उल्लेख कर रहे है। अत: उन्हीं श्लोकों की मर्यादा की रक्षा करते हुए हम यहाँ मङ्गलदोष के परिहारों का उल्लेख कर रहें जिससे मेरे विद्वान बन्धु मङ्गलयोग का पूर्ण विचार कर सके। यहाँ तक हमने मङ्गलदोष के विचार की बात कही, परन्तु चराचर जगत में प्रत्येक दोष का परिहार मिलता है तो इसका भी अवश्य होना चाहिए, अत: हम यहाँ कुछ प्रामाणिक श्लोक प्रस्तुत कर रहे है।

9.7.1. मंगल दोष के परिहार --

1. कुजदोषवती देया कुजदोषवते किल।

   नास्ति दोषो न चानिष्टं दम्पत्यो: सुखवर्धनम्॥

मङ्गलदोष से युक्त कन्या अथवा वर का विवाह मङ्गलिक कन्या अथवा वर से करने से मङ्गलदोष के कुप्रभाव समाप्त होरक शुभ फलों की प्राि‍प्त होती है।

2. शनि भौमोऽथवा कश्चित् पापो वा तादृशो भवेत्।

   तेष्वेव भवनेष्वेव भौमदोषविनाशकृत्॥ 1॥

:- फलित संग्रह

भौमेन सदृशो भौम: पापो वा तादृशो भवेत्।

विवाह: शुभद: प्रोक्तश्चिरायु: पुत्रपौत्रद:॥ 2॥

भौमतुल्यो यदा भौम: पापो वा तादृशो भवेत्।

उद्वाह: शुभद: प्रोक्तश्चिरायु: पुत्रवर्धन:॥ 3॥ :- ज्योतिष तत्त्व.

वर अथवा वधू की कुण्डली में जिस स्थान में मङ्गल स्थित हो उसी स्थान में वधू अथवा वर की कुण्डली में शनि, मङ्गल, सूर्य, राहु आदि कोई पापग्रह स्थित हो तो मङ्गलदोष का परिहार हो जाता है ॥1॥

एक की कुण्डली में मङ्गलदोष हो तथा दूसरे की कुण्डली में उसी स्थान में शनि आदि पापग्रह हो तो मङ्गलदोष का परिहार हो जाता है तथा विवाह मङ्गलकारी होता है ॥ 2॥

यदि वर-कन्या दोनों का मङ्गल समान स्थिति में हो या कोई अन्य पापग्रह मङ्गल के समान उसी भाव में स्थित हो तो विवाह मङ्गलकारी होता है ॥ 3॥

3. अजे लग्ने व्यये चापे पाताले वृश्चिके कुजे।

द्यूने मृगे कर्कि चाष्टौ भौमदोषो न विद्यते॥ 1॥ :- मुहूर्त पारिजात

द्यूने मीने घटे चाष्टौ भौमदोषो न विद्यते॥ 2॥

मेष राशि का मङ्गल लग्न में, वृश्चिक राशि का चतुर्थ भाव में, मकर राशि का सप्तम भाव में, कर्क राशि का मङ्गल आठवें भाव में तथा धनु राशि का मङ्गल द्वादश भाव में हो तो मङ्गलदोष का परिहार हो जाता है॥ 1॥

मीन राशि का मङ्गल सप्तम भाव में तथा कुम्भ राशि का मङ्गल अष्टमभाव में हो तो मङ्गलदोष का परिहार हो जाता है॥ 2॥

4. न मङ्गली चन्द्रभृगु: द्वितीये, न मङ्गली पश्यति यस्य जीवो।

न मङ्गली केन्द्रगते च राहु:, न मङ्गली मङ्गलराहुयोगे॥ :- मु. दीपक

यदि द्वितीय भाव में चन्द्र-शुक्र का योग हो या मङ्गल गुरु द्वारा दृष्ट हो, केन्द्र भावस्थ राहु हो अथवा केन्द्र में राहु व मङ्गल का योग हो तो मङ्गलदोष का परिहार हो जाता है।

5. सबले गुरौ भृगौ वा लग्ने द्यूनेऽथवा भौमे।

वक्रे नीचारिगेहस्थे वाऽस्ते न कुजदोष:॥ :- मुहूर्त दीपक

बलयुक्त गुरु या शुक्र लग्न में हो तो वक्री, नीचस्थ, अस्तङ्गत अथवा शत्रुओ से युक्त मङ्गल होन पर भी मङ्गलदोष का परिहार हो जाता है।

6. केन्द्रकोणे शुभाढ्ये च त्रिषडायेऽप्यसद्ग्रहा:।

तदा भौमस्य दोषो न मदने मदपस्तथा॥ :- मुहूर्त चिन्तामणि

केन्द्र व त्रिकोण में यदि शुभ ग्रह हो तथा तृतीय, षष्ठ, एकादश भाव में पाप ग्रह हो तथा सप्तम भाव का स्वामी सप्तम में ही हो तो मङ्गलदोष का परिहार हो जाता है।

7. तनुधनसुखमदनायुर्लाभव्ययगः कुजस्तु दाम्पत्यम्।
विघटयति तद् गृहेशो न विघटयति तुङ्गमित्रगेहे वा॥

:- मु. चि.

यद्यपि प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ, सप्तम, अष्टम, एकादश व द्वादश भावों में स्थित मंगल वर-वधू के वैवाहिक जीवन में विघटन उत्पन्न करता है, परन्तु यदि मंगल स्वगृही हो, उच्चस्थ (मकर राशि) या मित्रक्षेत्र मे हो तो मङ्गलदोष का परिहार हो जाता है।

8. राशिमैत्रं यदा याति गणैक्यं वा यदा भवेत्।
अथवा गुणबाहुल्यं भौमदोषो न विद्यते॥ :- मुहूर्त दीपक

यदि वर-कन्या की कुण्डलियों में परस्पर राशिमैत्री हो, गणैक्य हो, 27 या इससे अधिक गुण मिले तो मङ्गलदोष का परिहार हो जाता है।

वर-कन्या की कुण्डली में मङ्गलदोष एवं उसके परिहार का निर्णय अत्यन्त विवेकपूर्वक करना चाहिए। मात्र 1, 4, 7, 8, 12 में मंगल को देखकर दाम्पत्य जीवन के सुख दु:ख का निर्णय नहीं करना चाहिए। जहाँ मंगल हो उन्हीं भावों में यदि कोई अन्य क्रूर ग्रह भी 1, 2, 7, 12 भाव में हो तो वह भी पारिवारिक एवं वैवाहिक जीवन के लिए अनिष्टकारक होता है।

यथा- लग्ने क्रूराः व्यये क्रूराः धने क्रूराः कुजस्तथा।
सप्तमे भवने क्रूराः परिवारक्षयङ्कराः॥ **:- मुहूर्तसंग्रह दर्पण**

मङ्गलदोष का निर्णय कुण्डली विशेष में सभी ग्रहों के पारस्परिक अनुशीलन के पश्चात् ही करना चाहिए। सभी लग्नकुण्डलियों में मङ्गलदोष का प्रभाव एक जैसा नहीं होता है। इसमें तो कोई सन्देह नहीं कि कुछ लग्न कुण्डलियों में मङ्गलदोष का अशुभ प्रथाव वर-वधू के वैवाहिक जीवन पर पड़ता है, परन्तु यदि किसी कुण्डली में मङ्गल अन्य ग्रहों के साहचर्य से योगकारक हो, उच्चस्थ या स्वराशिगत हो अथवा शुभ ग्रहों की दृष्टि से प्रभावित हो तो मङ्गल का शुभ फल मिलता है। जैसे मकर, मेष, वृश्चिक, सिंह, धनु व मीन राशि का मङ्गल शुभफलदायी होता है तथा कर्क व सिंह लग्न में मङ्गल केन्द्रत्रिकोणपति होने से मङ्गल शुभ होकर योगकारक माना जाएगा।

यथा- **सर्वे त्रिकोणनेतारो ग्रहाः शुभफलप्रदाः॥**
स्वोच्चस्थितः शुभफलं प्रकरोति पूर्णम्।
नीचर्क्षगस्तु विफलं रिपुमन्दिरेऽल्पम्॥ :- सारावली
भावाः सर्वे शुभपतियुताः वीक्षिताः वा शुभेशैः।

तत्तद्भावा: सकलफलदा: पापदृग्योगहीना:॥

अत: वर-कन्या की कुण्डलियों का मिलान करते समय उनके सुखी एवं सम्पन्न जीवन के लिए मङ्गल पर ही अत्यधिक बल न देते हुए मेलापक सम्बन्धी अन्य तत्वों का भी सर्वाङ्ग रूप से विवेचन करना चाहिए, जिनमें कुछ मुख्य तत्त्व निम्नलिखित है।

चलित भाव कुण्डली :- जो ग्रह भावमध्य होते है, वह भाव का पूर्ण फल देते है। जो ग्रह भावसन्धि में होते है, वे शून्य फल देते है। उसी के अनुसार वर-कन्या की कुण्डलियों का मिलान करते समय दोनों की कुण्डलियों के ग्रह स्पष्ट, भाव स्पष्ट एवं चलित भाव कुण्डली बनी होनी चाहिए, तभी मङ्गलदोष की स्थिति स्पष्ट हो सकती है। यदि दोनों की कुण्डलियों में मंगल सन्धिगत हो तथा मङ्गलीयोगप्रद भाव से अतिरिक्त भाव में हो तो भी मङ्गलदोष का परिहार हो जाता है।

अन्य परिहार :- सप्तमभाव या सप्तमेश या शुभ एवं योगकारक ग्रहों की स्थिति अथवा मङ्गल या सप्तमभाव पर गुरु या शुक्र की दृष्टि हो अथवा सप्तमेश ग्रह की स्वगृही दृष्टि होने से मङ्गलदोष का प्रभाव क्षीण हो जाता है। इस स्थिति में धार्मिक अनुष्ठान भी करवाने चाहिए।

शुभ योग :- सप्तमेश ग्रह उच्चस्थ या स्वमित्रादि की राशि में होकर केन्द्र, त्रिकोणादि भावों में स्थित हो तो विवाह में मङ्गलदोष का परिहार हो जाता है।

अशुभ योग :- यदि सप्तमेश त्रिक में हो, पापग्रहयुक्त व पापदृष्ट, नीचराशिगत अथवा अस्तङ्गत हो तो विवाह का पूर्ण सुख नहीं मिलता है। यथा :-

दु:स्थे कामपतौ तु पापग्रहगे पापेक्षिते तद्युते। तज्जाया भवनस्य मध्यमफलं सर्वं शुभं चान्यथा॥

लग्नेश, द्वितीयेश, पंचमेश, अष्टमेश, सप्तमेश एवं चन्द्र, शुक्र, गुरु, मंगलादि ग्रहों के बलाबल का विचार करना भी नितान्त आवश्यक होता है।

उपरोक्त विषय पर अध्ययन हमने इसीलिए किया हैं क्योंकि वर्तमान में समाज में मङ्गलदोष के विषय में कई प्रकार की भ्रांतियाँ फैल रही है। बहुत से लोग मङ्गलदोष का विशद अध्ययन नहीं करके केवल एक योगमात्र से लोगों के मन में भय उत्पन्न करते रहते है, जिससे ज्योतिष का अपयश होता है।

नोट :- यदि आप मङ्गलदोष का परिहार कर रहे हैं तो मङ्गल के निमित्त पूजा-पाठ भी करवायें तो शुभफलों में वृद्धि ही होगी।

9.8. विवाह का निर्णय करते समय बृहस्पति का विचार करे या नहीं?

विवाह में कन्या हेतु बृहस्पति का विचार किया जाये या नहीं इस विषय में सभी पण्डित एकमत नहीं है। अत: हम यहाँ हम सभी तथ्यों पर विचार करते हुए निष्कर्ष निकालने का प्रयास करेंगे। शास्त्रों में कन्या के रजोधर्म योग्य होने के पहिले ही विवाह का विधान बताया गया है। लेकिन ये सब बातें तब की है जब ये सभी बाते तर्कसङ्गत थी क्योंकि पहले बाल्यकाल में विवाह होने के बाद भी गौना लड़के-लड़की के

युवा (वयस्क) होने पर ही होता था अर्थात् जब कन्या युवा (वयस्क) हो जाये तभी वह पति के साथ रहने तथा सांसारिक धर्म में प्रवृत्त होने के योग्य होती थी।

शास्त्रों में रजोधर्म के योग्य होन के पहिले कन्या का विवाह करने का विधान है। उस समय कन्या के विवाह में गुरुशुद्धि परम आवश्यक थी।

अष्टवर्षा भवेद्गौरी नवमे रोहिणी भवेत्।

दशमे कन्यका प्रोक्ता द्वादशे वृषली मता।। :- ज्योतिर्निबन्ध

अर्थात् आठ वर्ष की 'गौरी', नौ वर्ष की 'रोहिणी', दस वर्ष की 'कन्यासंज्ञक', तथा तदनन्तर द्वादशादि वर्षों की कन्या 'वृषली' अर्थात् रजस्वला संज्ञक होती है।

गौरी विवाहिता सौख्यसम्पन्ना स्यात्पतिव्रता। रोहिणी धनधान्यादिपुत्राढ्या सुभगा भवेत्।

कन्याविवाहिता सम्पत्समृद्धा स्वामिपूजिता।। :- पीयूषधारा

अर्थात् आठ, नौ तथा दसवर्ष की कन्या का विवाह ही शास्त्रों में शुभ माना गया है।

परन्तु वर्तमान में उपरोक्त बातें व्यवहारिक नहीं है। क्योंकि यदि हम बालविवाह करते हैं तो अब न वे मानवीयमूल्य बचे तो न ही हमारा कानून इसकी अनुमति देता है। यदि हम बालविवाह करते है सपरिवार कारावास की जिन्दगी का अनुभव करना पड़ सकता है तथा आजकल तो बालविवाह कराने वाले पण्डित जी को भी जेल भेजने का प्रमाण भारतीय दण्ड संहिता में है।

उपरोक्त बातों पर विचार करने के बाद एक बात तो स्पष्ट है कि यदि कन्या का विवाह 11 या 12 वर्ष की आयु तक किया जाये तब ही गुरुशुद्धि की आवश्यकता है।

यदि हम 11 या 12 वर्ष के बाद कन्या विवाह करते है तो गुरुशुद्धि की आवश्यकता नही होती इसके लिए हम यहाँ कई प्रमाण दे रहे है। अब हमे आशा है प्रबुद्ध विद्वान अपनी तर्कशक्ति का विकास करते हुए गुरुशुद्धि का प्रामाणिक निर्णय कर सकेंगे।

1. यदि कन्या की आयु 11 या 12 वर्ष की हो तो गुरु के निर्बल होने पर भी शास्त्रोक्त 'बृहस्पति शान्ति' तथा शकुनादि विचार के सम्पादन के साथ उसका विवाह लग्न निर्धारित करें।

   द्वादशैकादशे वर्षे तस्या: शुद्धिर्न जायते।

   पूजाभि: शकुनैर्वापि तस्य लग्नं प्रदापेयत्।। :- शीघ्रबोध

2. दस वर्ष से अधिक आयु की कन्या रजस्वला हो जाने के कारण उसकी गुरुशुद्धि न देखकर चन्द्र व तारादि बल का विचार करना चाहिए।

   दशवर्षव्यतिक्रान्ता कन्या शुद्धिविवर्जिता।

   तस्यास्तारेन्दुलग्नानां शुद्धौ पाणिग्रहो मत:।। :- व्यासवचन

3. रजोदर्शन के पश्चात् गुरु शुद्धि की आवश्यकता नही है। आठवें गुरु में त्रिगुणित पूजा करके विवाह कर सकते है।

रजस्वला यदा कन्या गुरुशुद्धिं न चिन्तयेत्।

अष्टमेऽपि प्रकत्र्तव्यो विवाहस्त्रिगुणार्चनात्।। :- बृहस्पति

4. किसी भी अवस्था की कन्या को 4-8-12 गुरु होने पर भी द्विगुणित पूजा करने पर विवाह में कोई दोष नहीं होता है।

कन्यात्र्क्षाद्द्विसुतद्यूनायनवमे श्रेष्ठो गुरुश्चान्यथा।

पूज्योऽष्टान्त्यसुखेतिकाल इहतु प्राज्ञैर्द्विरच्र्य: शुभ:। :- उद्वाहतत्त्व

5. कन्या की उम्र सात वर्ष की हो जाने के भी पाँच वर्ष के बाद (12 वर्ष) उच्च या स्वराशि (कर्क, धनु, मीन) का अशुभ गुरु भी शुभ फलदायक होता है।

सप्ताब्दात्पञ्चवर्षेषु स्वोच्चस्वक्र्षगतो यदि।

अशुभोऽपि शुभं दद्याच्छुभदक्र्षेषु किं पुन:।। :- ज्योतिर्निबन्ध

6. गौरी संज्ञक कन्या को गुरुबल, रोहिणी का सूर्यबल, कन्या को चन्द्रबल तथा रजस्वला को लग्नबल की आवश्यकता होती है।

देया गुरुबला गौरी, रोहिणी भानुमद्बला।

कन्या चन्द्रबला ग्राह्या ततो लग्नबलेत्तरा।।

:- मुहूर्त गणपति

7. शूद्र, निषादादि चतुर्थ वर्णो के लिए गुरुशुद्धि का चिन्तन अनिवार्य नहीं है।

केचिदाहुर्गुरो: शुद्धिर्नान्वेष्या गणकोत्तमै:।

विवाहे त्वन्त्यादीनां चण्डालानां च पुल्कसाम्।। :- ज्योतिर्निबन्ध

निष्कर्ष :- उपरोक्त विषय पर प्रस्तुत प्रमाणों के आधार पर यह स्पष्ट है कि वर्तमान काल में गुरुशुद्धि की आवश्यकता नहीं है।

अत: कन्या रजस्वला हो जाये तो गुरुशुद्धि का विचार नही करना चाहिए। यदि मासिक धर्म प्रारम्भ होने के पूर्व ही विवाह करना हो तो गुरुशुद्धि की आवश्यकता हैं।

9.9. कन्या के विवाह में विलम्बदोष का परिहार

किसी शुभदिन में वर प्राप्ति के लिए कन्या स्नानादि से निवृत्त होकर प्रात: काल कमलबीज की माला से श्रीगणेशजी के मन्त्र (ऊँ श्रीगणेशाय नम:) की एक माला जप कर गणेशजी का ध्यान करे फिर गौरी और शङ्कर का ध्यान करती हुई -

ऊँ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पतिवेदनम्।

उर्व्वारु कमिव बन्धनादितो मुक्षीय मामुत:॥ स्वाहा॥''

प्रतिदिन उपरोक्त स्वाहा रहित मन्त्र की एक माला का अवश्य जाप करे। हर रविवार के दिन जाप के बाद प्रात: देशी घी में फीकी फुल्लियों को भिगोकर प्रज्वलित अग्नि में 108 आहुतियाँ देवे। मन्त्र के साथ स्वाहा का उच्चारण भी अवश्य करे। श्री शिव, पार्वती और गणेशजी का चित्र हो तो सामने अवश्य रखे अथवा मानसिक ध्यान भी लाभकारी होगा।

जप व हवन के बाद प्रार्थना :-

ऊँ कात्यायनि महामाये महायोगिन्यधीश्वरी।

नन्दगोपसुते देवी पतिं देहि मनोरमम्॥''

यह अनुष्ठान कन्या अपने विवाह की नवग्रह शान्ति तक करती रहे। कन्या के माता पिता भी श्रीगणेशजी की 21-21 माला का जाप करे। सवा लक्ष जाप होने पर अपने तोल के बराबर हरा घास, भूसा, खल, पत्तरी, जौ का दाला, चने आदि को गौओं को डाल दिया करे। पक्षियों को प्रतिदिन चावल, बाजरा आदि भी डालते रहे।

अथवा

कन्या हरिद्रा (हल्दी) की माला से निम्नलिखित मन्त्र की प्रतिदिन पाँच माला का जाप विवाह की नवग्रह शान्ति तक करे :-

ऊँ हे गौरि ! शङ्करार्धाङ्गी ! यथा त्वं शङ्करप्रिया।

तथा मां कुरु कल्याणि कान्तकान्तां सूदुर्लमाम्॥''

उपरोक्त अनुष्ठान के साथ निम्नलिखित रामचरितमानस की चौपाईयों का पाठ भी नित्य प्रतिदिन विवाह की नवग्रह शान्ति तक करना चाहिए -

जय जय गिरिबरराज किसोरि। जय महेस मुख चन्द चकोरी॥

जय गजबदन षडानन माता। जगत जननि दामिनी दुति गाता॥

नहिं तव आदि मध्य अवसाना। अमित प्रभाउ बेदु नहिं जाना॥

भव भव विभव पराभव कारिनी। बिस्व बिमोहिनी स्वबस बिहारिनी॥

पतिदेवता सुतीय महुँ मातु प्रथम तब रेख।
महिमा अमित न सकहिं कहि सहस सारदा सेष॥
सेवत तोहि सुलभ फल चारि। बरदायनी पुरारि पिआरी॥
देबि पूजि पद कमल तुम्हारे। सुर नर मुनि सब होहिं सुखारे॥
मोर मनोरथु जानहु नीकें। बसहु सदा उर पुर सबहीं कें॥
कीन्हेउँ प्रगट न कारन तेहीं। अस कहि चरन गहे बैदेहीं॥
बिनय प्रेम बस भई भवानी। खसी माल मूरति मुसुकानी॥
सादर सियँ प्रसादु सिर धरेऊ। बोली गौरि हरषु हियँ भरेऊ॥
सुनु सिय सत्य असीस हमारी पूजिहि मनकामना तुम्हारी॥
नारद बचन सदा सुचि साचा। सो बरु मिलिहि जाहिं मनु राचा॥
मनु जाहि राचेउ मिलिहि सो बरु सहज सुन्दर साँवरो।
करुना निधान सुजान सीलु सनेहु जानत रावरो॥
एहि भाँति गौरि असीस सुनि सिय सहित हियँ हरषी अली।
तुलसी भवानीहि पूजि पुनि पुनि मुदित मन मन्दिर चली॥
जानि गौरि अनुकूल सिय हिय हरषु न जाइ कहि।
मंजुल मंगल मूल बाम अंग फरकन लगे॥

(रामचरितमानस, 1-235-5 से 236 तक)

कन्या के विवाह हेतु अन्य सिद्ध मन्त्र -

ऊँ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पतिवेदनम्।
उर्व्वारुकमिव बन्धनादितो मुक्षीय मामुत:॥ 1॥
देहि सौभाग्यम् आरोग्यं देहि मे परमं सुखम्।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि॥ 2॥
ऊँ देवेन्द्रामणि नमस्तुभ्यं देवेन्द्रप्रियभामिनी।
विवाहं भाग्यम् आरोग्यं शीघ्रलाभं च देहि मे॥ 3॥
ऊँ शं शंकराय सकलजन्मार्जितपापविध्वंसनाय।
पुरुषार्थचतुष्टयलाभाय च पतिं देहि कुरु कुरु स्वाहा॥ 4॥

पुरुष के विवाह हेतु सिद्ध मन्त्र -

पत्नीं मनोरमां देहि मनोवृत्तानुसारिणीम्।

तारिणीं दुर्गसंसारसागरस्य कुलोद्भवाम्॥ 1॥ (दुर्गासप्तशती)

स देवि नित्यं परितप्यमानस्त्वामेव सीतेत्यभिभाषमाणः।

धृतव्रतो राजसुतो महात्मा, तवैव लाभाय कृतप्रयत्नः॥

(वाल्मीकि रामायण, सुन्दरकाण्ड)

9.10. मेलापक सारिणी के प्रयोग हेतु आवश्यक निर्देश

सारिणी के कोष्ठक के ऊपरी भाग में गुण है तथा नीचे के भाग में दोष है। जिनकी पहचान के चिह्न है - गणदोष (1), वैरयोनि (2), नाडीदोष (3), दिर्द्वादश (4), नवमपंचम (5), षडष्टक (6)। जहाँ दोष का थोड़ा परिहार है वहाँ (-), जहाँ पूरा निर्वाह है वहाँ (x +) का चिह्न है। जहाँ वर के पूर्व वधू का नक्षत्र है, वहाँ महादोष (0) माना है। दोषहीन कोष्ठक में केवल गुण है। 1-18 तक गुण नेष्ट, 19-27 मध्यम व 27-36 श्रेष्ठ होते है।

नोट :- उपरोक्त दोषों के परिहार हेतु आगे दिया गया फलित में परमोपयोगी ग्रह-दृष्ट्यादि चक्र की सहायता से ग्रहों के मैत्री चक्र का अवलोकन करते हुए आप सरलता से दोष परिहार कर सकते है, यदि राशि स्वमी मैत्री हो तो भी दोषपरिहार हो जाता है, अन्य परिस्थितियों का भी विचार कर लेना चाहिए।

जन्म कुण्डली मिलान का उदाहरण :-

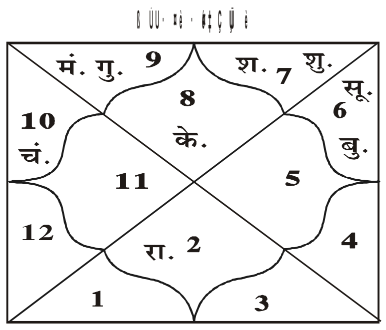

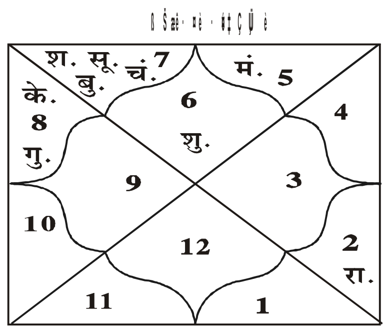

वर का नाम	जन्मतिथि	जन्मसमय	जन्स्थान
रवि	05/10/1984	10:35 प्रात:	जयपुर, राजस्थान
जन्मनक्षत्र :- धनिष्ठा - प्रथम चरण		राशि :- मकर	राशिस्वामी :- शनि

कन्या का नाम	जन्मतिथि	जन्मसमय	जन्स्थान
पूजा	05/11/1983	04:55 प्रात: काल	कोटा, राजस्थान
जन्मनक्षत्र :- स्वाती - चतुर्थ चरण		राशि :- तुला	राशिस्वामी :- शुक्र

अष्टकूट मिलान गुण-तालिका

कूट	वर	कन्या	दोष	अधिकतम	प्राप्ताङ्क	क्षेत्र
वर्ण	वैश्य	विप्र	-	1	1	जातीय कर्म
वश्य	जलचर	जलचर	-	2	½	स्वभाव
तारा	प्रत्यरि	साधक	-	3	3	भाग्य
योनि	सिंह	मार्जार	-	4	1	यौन-विचार
ग्रहमैत्री	शनि	चन्द्र	-	5	5	आपसी-सम्बन्ध
गण	राक्षस	राक्षस	-	6	1	सामाजिकता
भकूट	मकर	कर्क	-	7	7	जीवन-शैली
नाड़ी	मध्य	अन्त्य	-	8	8	आयु/सन्तान
कुल	-	-	-	36	26½	-

मिलान-विश्लेषण :- रवि का वर्ग मार्जार है, पूजा का वर्ग मार्जार है, इन दोनों में समता है, अष्टकूट तालिका में वर्ण से लेकर नाड़ी तक किसी के भी गुण शून्य नहीं आये है, अत: अष्टकूट मिलान निर्दोष है।

मंगल विचार :- रवि माङ्गलिक नहीं है क्योंकि कुण्ड़ली में मङ्गल 1-4-7-8-12 में स्थित नहीं है, मङ्गल रवि के कुण्ड़ली में द्वितीय भाव में स्थित है।

पूजा मङ्गलिक है क्योंकि पूजा की कुण्ड़ली में मङ्गल द्वादश भाव में स्थित है।

मङ्गल दोष परिहार :- फलित संग्रह एवं ज्योतिष दर्पण के अनुसार यदि वर-कन्या की कुण्ड़ली में से कोई एक मङ्गलदोष से पीड़ित हो तथा दूसरे की कुण्ड़ली में 1-4-7-8-12 भाव में मङ्गल अथवा अन्य कोई पापग्रह स्थित हो तो मङ्गलदोष का परिहार हो जाता है। यथा :-

शनि भौमोऽथवा कश्चित् पापो वा तादृशो भवेत्।
तेष्वेव भवनेष्वेव भौमदोषविनाशकृत्॥ 1॥ :- फलित संग्रह

भौमेन सदृशो भौम: पापो वा तादृशो भवेत्।
विवाह: शुभद: प्रोक्तश्चिरायु: पुत्रपौत्रद:॥ 2॥

भौमतुल्यो यदा भौम: पापो वा तादृशो भवेत्।
उद्वाह: शुभद: प्रोक्तश्चिरायु: पुत्रवर्धन:॥ 3॥ :- ज्योतिष तत्त्व.

निष्कर्ष :- अष्टकूट मिलान निर्दोष है, तथा मङ्गलदोष का भी परिहार हो रहा है, अत: सम्बन्ध श्रेष्ठ है।

9.11. सारांश

कुण्ड़ली का सातवाँ भाव विवाह, पत्नी, ससुराल, भागीदारी का कहा गया है, विवाह एक संस्कार है, जो सन्तान परम्परा को अक्षुण्ण रखने तथा आत्मसंयम एवं पारस्परिक सहयोग द्वारा जीवन में आभ्युदय प्राप्ति हेतु स्त्री-पुरुष को एक सूत्र में बाँधता है। अत: इसी परिप्रेक्ष्य में ज्योतिष द्वारा द्वारा कुण्ड़ली में विवाह योग तथा विवाह मिलान हेतु प्राय: माता-पिता को आते देखा गया है। विवाह से सन्दर्भ में कारक ग्रह शुक्र, गुरु और मङ्गल को कहा गया है। सप्तम, सप्तमेश का शुभ सम्बन्ध इन ग्रहों से कुण्ड़ली में सुखी वैवाहिक जीवन की सूचना देता है।

भारतीय परम्परा के अनुसार सुखी और समृद्ध दाम्पत्य के लिए विधिवत वर-कन्या का चयन मेलापक द्वारा किया जाता है। इसके लिए वर-वधू के जन्म-नक्षत्रों के आधार पर अष्टकूट गुण मिलान करने की विधि शास्त्रों द्वारा निर्देशित है। अत: इस इकाई के माध्यम से विवाह पर समीचीन ज्ञान का संचार सभी में हो सकता है।

9.12. शब्दावली

- दैवज्ञ = देवताओं के विषय के ज्ञाता
- आश्रम = ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्यास
- मेलापक = कुण्ड़ली व अष्टकूट मिलान
- परिहार = दोष की निवृत्ति
- राशिमैत्री = राशि स्वामियों की मित्रता
- अष्टकूट = 1. वर्ण, 2. वश्य, 3. तारा, 4. योनि,
  5. राशीशमैत्री, 6. गण,
  7. भकूट, 8. नाड़ी।
- वृषली = मासिक-धर्म प्राप्त कन्या

9.13. अति लघुत्तरात्मक प्रश्न

1 विवाह की व्याख्या कीजिए?

उत्तर : वि = विशेष, वाह = वहन करना अर्थात् विशेषरूप से वहन करने योग्य सम्बन्ध को विवाह कहते है।

2 जन्मकुण्ड़ली में विवाह सम्बन्धी प्रश्न किस भाव से देखा जायेगा?

उत्तर : विवाह का कारक भाव सप्तम भाव को कहा जाता है।

3 विवाह के सन्दर्भ में कुण्ड़ली मिलान का क्या महत्त्व है?

उत्तर : वर-कन्या की विशेषता एवं अवगुणों का दाम्पत्य जीवन के आचरण का विचार कुण्ड़ली मिलान से ही होता है।

4 अष्टकूट गुण मिलान किसे कहते है?

उत्तर : जन्म नक्षत्रों द्वारा मेलापक को अष्टकूट गुण मिलान कहते है।

5 मेलापक रहस्य को किन चार वर्गों में विभाजित किया गया है?

उत्तर : लग्न मेलापक, ग्रह मेलापक, भाव मेलापक एवं नक्षत्र मेलापक।

6 कुण्ड़ली मिलान के सन्दर्भ में कौन सा मेलापक सर्वाधिक प्रचलित है?

उत्तर : नक्षत्र मेलापक ही सर्वाधिक प्रचलित है।

7 वर-कन्या में किसी एक की अग्नि तत्त्व की लग्नराशि है तो दूसरे पक्ष की कौनसी राशि अनुकूल होगी?

उत्तर : दूसरे पक्ष के लिए अग्नि तथा वायु तत्त्व लग्न को अनुकूलता प्रदान करेगी।

8 अष्टकूट गुण मिलान में कौनसे आठ तत्त्व बताये गये है?

उत्तर : 1. वर्ण, 2. वश्य, 3. तारा, 4. योनि, 5. राशीशमैत्री, 6. गण, 7. भकूट, 8. नाड़ी।

9 अष्टकूट गुण मिलान में कुल कितने गुणाङ्क बताये गये है?

उत्तर : अधिकतम 36 गुण मिलान के प्राप्ताङ्क होते है।

10 मङ्गलिक का विचार किन भावों से किया जाता है?

उत्तर : मङ्गलिक का विचार लग्न, चतुर्थ, सप्तम, अष्टम एवं द्वादश भाव में मङ्गल के स्थित होन पर किया जाता है।

9.14. लघुत्तरात्मक प्रश्न

1 लग्नादि द्वादश भावों का विवाह पर प्रभाव बताईये?

2 जन्मकुण्ड़ली में विवाह हेतु शुभ योगों का वर्णन कीजिये?

3 विवाह हेतु जन्मपत्री मिलान का क्या महत्त्व है?

4 मङ्गलिक दोष क्या होता है एवं कुण्ड़ली मिलान में उसका क्या प्रभाव है? सपरिहार विवेचना कीजिये।

5 नीचे दिये गये जन्माङ्ग के आधार पर अष्टकूट मिलान पर प्रकाश डालिये।

वर का नाम	जन्मतिथि	जन्मसमय	जन्स्थान
विकास	22/03/1975	07:00 प्रात:	देहली, भारत
जन्मनक्षत्र :- पुनर्वसु - प्रथम चरण		राशि :- मिथुन	राशिस्वामी :- बुध
कन्या का नाम	जन्मतिथि	जन्मसमय	जन्स्थान
पूर्ति	30/11/1977	06:50 सायं काल	आगरा, उत्तरप्रदेश
जन्मनक्षत्र :- पुष्य - द्वितीय चरण		राशि :- कर्क	राशिस्वामी :- चन्द्र

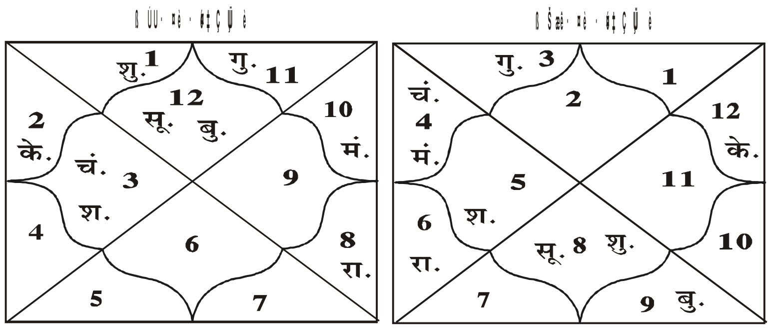

9.15. सन्दर्भ ग्रन्थ

1. सारावली
   सम्पादक: डॉ. मुरलीधर चतुर्वेदी
   प्रकाशक: मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।
2. बृहत्पाराशर होराशास्त्र
   सम्पादक: श्री सुरेश चन्द्र मिश्र
   प्रकाशक: रंजन पब्लिकेशन, दिल्ली।
3. विवाह-संस्कार, द्वितीय संस्करण
   सम्पादक: डॉ. रवि शर्मा
   प्रकाशक: हंसा प्रकाशन, जयपुर।

फलित में परमोपयोगी ग्रह-दृष्टयादि विवरण -चक्र

रवि	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु	ग्रह और उनके चिन्ह
३-१०	३-१०	३-१०	३-१०	३-१०	३-१०	०	३-१०	३-१०	ग्रहों की एक-पाद दृष्टि
५-९	५-९	५-९	५-९	०	५-९	५-९	५-९	५-९	दो-पाद दृष्टि
४-८	४-८	०	४-८	४-८	४-८	४-८	४-८	४-८	तीन-पाद दृष्टि
७	७	४-७-८	७	५-७-९	७	३-७-१०	७	७	सम्पूण दृष्टि
५-१५	१५	७,८,१०,१५	९-१२-१५	१०-१५-१९	९-१२-१५	३,५,१५,१९	९-१५	९-१५	नक्षत्रदृष्टि
चं.मं.गु.	र.बु	र.चं.गु.	र.शु.रा.	र.चं.मं.	बु.श.रा.	बु.शु.रा.	बु.शु.श.	बु.	मित्र-दृष्टि
बु.	मं.गु.शु.श.	शु.श.	मं. गु.श.	श.रा.	मं.गु.	गु.	गु.	×	सम-ग्रह
शु.श.रा.	रा.	बु.रा.	चं.	बु.शु.	र.चं.	र.च.मं.	र.रं.मं.	×	शत्रु-ग्रह
दशम	चतुर्थ	दशम	प्रथम	प्रथम	चतुर्थ	सप्तम	×	×	बलवत्तम भाव
१-९-१०	४	३-६	४-१०	२-५-९	७	६-८-	×	×	कारक भाव
				१०-११		१०-१२			
मेष १०	वृष ३	मकर २८	कन्या १५	कर्क ५	मीन २७	तुला २०	मिथुन १५	धनु १५	उच्चराशि एवं परमोच्चांश
तुला १०	वृश्चिक ३	कर्क २८	मीन १५	मकर ५	कन्या २७	मेष २०	धनु १५	मिथुन १५	नीचराशि एवं परमनीचांश
सिंह २०	वृष ३ से ३०	मेष १८	क. १६ से २०	धनु १३	तुला १०	कुम्भ २०	कर्क	मकर	मूल त्रिकोण राशि, अंश
सिंह	कर्क	मेष, वृश्चिक	मि., कन्या	धनु, मीन	वृष, तुला	म., कुम्भ	कन्या	मीन	स्वगृह- (राशि)
९	३	६	१	११	५	१२	×	×	हर्ष-स्थान
२,६,७,१०,११,	६	३-६	४	२-३-६-७	४-५	१-४-५-८	१-४-५-८	×	शत्रु-राशियाँ
११	१०	२-७	९-१२	३-६	१-८	४-५	१२	६	स्वगृह से सप्तम (अस्त) राशि
कृत्तिका,	रोहिणी,	मृग.,	आश्लेषा,	पुन.,	पू.षा.,भर.	पुष्य	आर्द्रा		विशो. दशा-नक्षत्र
उ.षा.,उ.फा.	ह.,श्र.	चि.,ध.	ज्ये.,रे	वि.,पू.भा.	पू.फा.	अनुराधा,उ.भा.	स्वाती, शत	अश्विनी,मघा	
वर्ष ६	वर्ष १०	वर्ष ७	वर्ष १७	वर्ष १६	वर्ष २०	वर्ष१९	वर्ष १८	वर्ष ७	विशो. दशा-वर्ष
२२	२४	२८	३२	१६	२५	३६	४२	४२	ग्रहों के भाग्योदयकारी वर्ष
पूर्व	वयव्य	दक्षिण	उत्तर	ईशान	आग्नेय	पश्चिम	नैऋत्य	नैऋत्य	दिशा+
१	०-०-७४	१-९	०-२	११-९	०-६	२९-५	१८-६	१५-६	राशिचक्र-परिभ्रमण वर्ष
१ माह	२१ दिन	४५ दिन	२५ दिन	१३ माह	२८ दिन	३० दिन	१८ माह	१८ माह	मध्यम राशि-भ्रमण-काल
१३	१	२०	१०	१७३	१२	४००	२४०	२४०	नक्षत्र-चार-दिन
५९'-८''	७९०'-३५''	३१'-२७''	५९'-८''	४'-५९''	५९'-८''	२'-०''	३'-११''	३'-११''	मध्य दिनगति, कला, विकला
६०'-४''	८२३'-४८''	३९'-१''	१०४'-४६''	१२'-२२''	७३'-४३''	५'-२७''	×	×	शीघ्र गति, कला, विकला
६१	८५७'	४६'-११''	११३'-३२''	१४'-४''	७५'४२''	७'-४५''	×	×	परमशीघ्रगति (अतिचारी),
४-८-१२	४-८-१२	४-८-१२	४-८-१२	४-८-१२	४-८-१२	४-८-१२	४-८-१२	४-८-१२	गोचर से निंद्य
१-२-५	२-५-९	१-२-५	१-३-५	१-३	५-६	१-२-५	१-२-५	१-२-५	गोचर से पूज्य
७-९		७-९	७-९	६-१०	७-१०	७-९	७-९	७-९	
३-६	१-३-६	३-६	२-६	२-५-७	१-२-३	३-६	३-६	३-६	गोचर से शुद्ध
१०-११	७-१०-११	१०-११	१०-११	९-११	९-११	१०-११	१०-११	१०-११	
९-१२-४-५	५-९-१२	१२-९	५-१	१२-४-३	८-७-१	१२-९	१२-९	१२-९	अनुक्रम से वेध-स्थान
	२-४-८	१०-५	८-१२	१०-८	११-३	१०-५	१०-५	१०-५	
शनि वर्जित	बुध वर्जित		चन्द्र वर्जित			सूर्य वर्जित			
अग्नि	वरुण	स्कन्द	विष्णु	इन्द्र	इन्द्राणी	ब्रह्मा	वायु	आकाश	देवता
ग्रीष्म	वर्षा	ग्रीष्म	शरद्	हेमन्त	बसन्त	शिशिर	शिशिर	शिशिर	ऋतु
हरिवंश कथा	त्रिपुर रूद्र-जप	रूद्री-जप	कांस्य दान	अमावस व्रत	गौसेवा, दान	मृत्युंजय जाप	सीसा दान	ध्वजा दान	शुभफल हेतु उपाय

टिप्पणी: चन्द्रमा शुक्ल पक्ष में २.५.९वें स्थानों में भी शुभ होता है। यदि क्रमशः ६.८.४ स्थान में बुध के सिवा अन्य ग्रह न हों। +ग्रह जिस दिशा का स्वामी है, यात्रा कालिक कुण्डली में उसी दिशा में पड़े तो ललाट-योग होता है जो युद्ध यात्रा में वर्ज्य है। यात्रा की दिशा का स्वामी-ग्रह तातकालिक कुण्डली के केन्द्र में हो तो यात्रा विहित है।

सङ्केत :- ॥ का अर्थ है आधा (1/2) गुण

गणनागुणैक्य बोधक चक्र

सङ्केत :- 0 का अर्थ है दोष

वर की राशि				मेष			वृष			मिथुन			कर्क			सिंह			कन्या			तुला			वृश्चिक			धनु			मकर			कुम्भ			मीन		
कन्या की राशि	नक्षत्र	चरण	नक्षत्र	अश्वि	भर	कृ	कृ	रोहि	मृग	मृग	आ	पुन	पुन	पुष्य	अश	मघा	पूफा	उफा	उफा	हस्त	चित्रा	चित्रा	स्वा	वि	वि	अनु	ज्ये	मूल	पूषा	उषा	उषा	श्रव	धनि	धनि	शत	पूभा	पूभा	उभा	रेव
			चरण	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4
			वर्णाक्षर	चू चे चो	लि लू ले		इ उ	ओ वा वि	वे	क	कू घ ङ	के को		हु हे हो	डी डू डे	म मी मू	मो टा टी		टो प	पू ष ण	पे	र	रू रे रो	ती तू		न नी नू	नो या यी	ये यो भ	भू धा फा		भो ज	खि खू खे	ग	गु	गो सा सी	से सो		दू थ झ	दे दो चा
			अष्टकूट	ला	लो	अ	ए	वू	वो	कि	छ	ह	ही	डा	डो	मे	टू	टे	पी	ठ	पो	री	ता	ते	तो	ने	यू	भी	ढा	भे	जी	खो	गि	गे	सू	द	दी	ञ	ची
मेष	अश्विनी	चू, चे, चो, ला	वर्ण	1	1	1	0	0	0	0	0	0	1	1	1	1	1	1	0	0	0	0	0	0	1	1	1	1	1	1	0	0	0	0	0	0	1	1	1
			वश्य	2	2	2	2	2	2	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1
			तारा	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3
			योनि	4	2	3	3	2	2	2	2	3	3	3	3	3	3	3	3	0	1	1	0	1	1	3	3	2	2	2	2	2	1	1	4	1	1	3	2
			राशीश मैत्री	5	5	5	3	3	3	॥	॥	॥	4	4	4	5	5	5	॥	॥	॥	3	3	3	5	5	5	5	5	5	॥	॥	॥	॥	॥	॥	5	5	5
			गण	6	5	1	1	5	6	6	5	6	6	6	1	1	5	5	5	6	1	1	6	1	1	6	1	1	5	5	5	6	1	1	1	5	5	5	6
			भकूट	7	7	7	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0
			नाड़ी	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8
			गुणयोग	28	33	28॥	18॥	21॥	22॥	26	17	19	23॥	31॥	28	21	25	15॥	11	9	13	22॥	26॥	22॥	18॥	25॥	14	13	25	23॥	25	26	20	20	15	16	14॥	24॥	26
	भरणी	ली, लू, ले, लो	वर्ण	1	1	1	0	0	0	0	0	0	1	1	1	1	1	1	0	0	0	0	0	0	1	1	1	1	1	1	0	0	0	0	0	0	1	1	1
			वश्य	2	2	2	2	2	2	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1
			तारा	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥
			योनि	2	4	3	3	2	2	2	2	3	3	3	3	3	3	3	3	3	1	1	3	1	1	3	3	2	2	2	2	2	0	0	2	0	0	3	4
			राशीश मैत्री	5	5	5	3	3	3	॥	॥	॥	4	4	4	5	5	5	॥	॥	॥	3	3	3	5	5	5	5	5	5	॥	॥	॥	॥	॥	॥	5	5	5
			गण	6	6	0	0	6	6	6	6	6	6	6	0	0	6	6	6	6	0	0	6	0	0	6	0	0	6	6	6	6	0	0	0	6	6	6	6
			भकूट	7	7	7	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0
			नाड़ी	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8
			गुणयोग	34	28	29	19	22॥	14॥	18	26	27	31॥	23॥	25॥	20	18	26	21॥	20	4	13॥	29॥	21॥	17॥	17॥	19॥	20	18	26	27॥	26	10	10	20	24	22॥	17॥	26॥
	कृत्तिका	अ	वर्ण	1	1	1	0	0	0	0	0	0	1	1	1	1	1	1	0	0	0	0	0	0	1	1	1	1	1	1	0	0	0	0	0	0	1	1	1
			वश्य	2	2	2	2	2	2	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1
			तारा	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥
			योनि	3	3	4	4	2	2	2	2	3	3	4	3	3	3	3	3	3	1	1	3	1	1	3	3	2	0	2	2	0	1	1	3	1	1	3	3
			राशीश मैत्री	5	5	5	3	3	3	॥	॥	॥	4	4	4	5	5	5	॥	॥	॥	3	3	3	5	5	5	5	5	5	॥	॥	॥	॥	॥	॥	5	5	5
			गण	0	0	6	6	0	0	0	0	0	0	0	6	6	0	0	0	0	6	6	0	6	6	0	6	6	0	0	0	0	6	6	6	0	0	0	0
			भकूट	7	7	7	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0
			नाड़ी	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0
			गुणयोग	27॥	29	28	18	10	16॥	20	20	21	25॥	26॥	23॥	16॥	20	20	15॥	15॥	18	27॥	15॥	19॥	15॥	19॥	25॥	24॥	18	12	13॥	11॥	25	25	27	19	17॥	19॥	11॥

सङ्केत :- ॥ का अर्थ है आधा (1/2) गुण

गणनागुणैक्य बोधक चक्र

सङ्केत :- 0 का अर्थ है दोष

कन्या की राशि / नक्षत्र / चरण	वर की राशि	मेष			वृष			मिथुन			कर्क			सिंह			कन्या			तुला			वृश्चिक			धनु			मकर			कुम्भ			मीन		
	नक्षत्र	अश्वि	भर	कृ	कृ	रोहि	मृग	मृग	आ	पुन	पुन	पुष्य	अश्ले	मघा	पूफा	उफा	उफा	हस्त	चित्रा	चित्रा	स्वा	वि	वि	अनु	ज्ये	मूल	पूषा	उषा	उषा	श्रव	धनि	धनि	शत	पूभा	पूभा	उभा	रेव
	चरण	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4
	वर्णाक्षर	चू चे चो ला	लि लू ले लो	अ	इ उ ए	ओ वा वि वू	वे वो	क कि	कू घ ङ छ	के को ह	ही	हु हे हो डा	डी डू डे डो	म मी मू मे	मो टा टी टू	टे	टो प पी	पू ष ण ठ	पे पो	र री	रू रे रो ता	ती तू ते	तो	न नी नू ने	नो या यी यू	ये यो भ भी	भू धा फा ढा	भे	भो ज जी	खि खू खे खो	ग गि	गु गे	गो सा सी सू	से सो द	दी	दू थ झ ञ	दे दो चा ची
	अष्टकूट																																				
कृत्तिका (इ, उ, ए)	वर्ण	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1
	वश्य	2	2	2	2	2	2	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1
	तारा	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥
	योनि	3	3	4	4	2	2	2	2	3	3	4	3	3	3	3	3	3	1	1	3	1	1	3	3	2	0	2	2	0	1	1	3	1	1	3	3
	राशीश मैत्री	3	3	3	5	5	5	5	5	5	॥	॥	॥	0	0	0	5	5	5	5	5	5	3	3	3	॥	॥	॥	5	5	5	5	5	5	॥	॥	॥
	गण	0	0	6	6	0	0	0	0	0	0	0	6	6	0	0	0	0	6	6	0	6	6	0	6	6	0	0	0	0	6	6	6	0	0	0	0
	भकूट	0	0	0	7	7	7	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	7	7	7
	नाड़ी	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0
	गुणयोग	18॥	20	19	28	20	26॥	17॥	17॥	18॥	22	23	20	18॥	22	22	21	21	23॥	22॥	10॥	14॥	20॥	24॥	30॥	20	13॥	7॥	12	10	23॥	29॥	31॥	23॥	20	22	14
वृष — रोहिणी (ओ, वा, वि, वु)	वर्ण	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1
	वश्य	2	2	2	2	2	2	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1
	तारा	1॥	1॥	3	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥
	योनि	2	2	2	2	4	4	4	2	1	1	2	1	1	1	2	2	2	2	2	2	2	2	2	2	2	1	0	0	1	2	2	2	2	2	2	2
	राशीश मैत्री	3	3	3	5	5	5	5	5	5	॥	॥	॥	0	0	0	5	5	5	5	5	5	3	3	3	॥	॥	॥	5	5	5	5	5	5	॥	॥	॥
	गण	6	6	0	0	6	6	6	6	6	6	6	0	0	6	6	6	6	0	0	6	0	0	6	0	0	6	6	6	6	0	0	0	6	6	6	6
	भकूट	0	0	0	7	7	7	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	7	7	7
	नाड़ी	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0
	गुणयोग	23॥	23॥	11	20	28	36	27	23॥	22॥	26	27	12	10॥	24॥	27	26	26	20	19	15॥	9॥	15॥	29॥	23॥	14	19	11॥	16	17	20	26	24॥	30॥	27	27	19
मृगशिरा (वे, वो)	वर्ण	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1
	वश्य	2	2	2	2	2	2	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1
	तारा	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥
	योनि	2	2	2	2	4	4	4	2	1	1	2	1	1	1	2	2	2	2	2	2	2	2	2	2	2	1	0	0	1	2	2	2	2	2	2	2
	राशीश मैत्री	3	3	3	5	5	5	5	5	5	॥	॥	॥	0	0	0	5	5	5	5	5	5	3	3	3	॥	॥	॥	5	5	5	5	5	5	॥	॥	॥
	गण	6	5	1	1	5	6	6	5	6	6	6	1	1	5	5	5	6	1	1	6	1	1	6	1	1	5	5	5	6	1	1	1	5	5	5	6
	भकूट	0	0	0	7	7	7	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	7	7	7
	नाड़ी	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8
	गुणयोग	23॥	14॥	18॥	27॥	35	28	19	24	22॥	26	19	21	19॥	15॥	24॥	23॥	26	13	12	25	18॥	24॥	21॥	24॥	15	10	17	21॥	25	13	19	27	29॥	26	18	27

गणनागुणैक्य बोधक चक्र

सङ्केत :- ॥ का अर्थ है आधा (1/2) गुण

सङ्केत :- 0 का अर्थ है दोष

वर की राशि	मेष			वृष			मिथुन			कर्क			सिंह			कन्या			तुला			वृश्चिक			धनु			मकर			कुम्भ			मीन		
नक्षत्र	अश्वि	भर	कृ	कृ	रोहि	मृग	मृग	आ	पुन	पुन	पुष्य	अश	मघा	पूफा	उफा	उफा	हस्त	चित्रा	चित्रा	स्वा	वि	वि	अनु	ज्ये	मूल	पूषा	उषा	उषा	श्रव	धनि	धनि	शत	पूभा	पूभा	उभा	रेव
चरण	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4
वर्णाक्षर अष्टकूट	चू चे चो ला	लि लू ले लो	अ	इ उ ए	ओ वा वि वू	वे वो	क कि	कू घ ङ छ	के को ह	ही	हु हे हो डा	डी डू डे डो	म मी मू मे	मो टा टी टू	टे	टो प पी	पू ष ण ठ	पे पो	र री	रू रे रो ता	ती तू ते	तो	न नी नू ने	नो या यी यू	ये यो भ भी	भू धा फा ढा	भे	भो ज जी	खि खू खे खो	ग गि	गु गे	गो सा सी सू	से सो द	दी	दू थ झ ञ	दे दो चा ची
कन्या की राशि: मिथुन — मृगशिरा, क, कि																																				
वर्ण	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1
वश्य	1	1	1	1	1	1	2	2	2	॥	॥	॥	0	0	0	2	2	2	2	2	2	0	0	0	2	2	2	॥	॥	॥	2	2	2	॥	॥	॥
तारा	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥
योनि	2	2	2	2	4	4	4	2	1	1	2	1	1	1	2	2	2	2	2	2	2	2	2	2	2	1	0	0	1	2	2	2	2	2	2	2
राशीश मैत्री	॥	॥	॥	5	5	5	5	5	5	1	1	1	4	4	4	5	5	5	5	5	5	॥	॥	॥	॥	॥	॥	4	4	4	4	4	4	॥	॥	॥
गण	6	5	1	1	5	6	6	5	6	6	6	1	1	5	5	5	6	1	1	6	1	1	6	1	1	5	5	5	6	1	1	1	5	5	5	6
भकूट	7	7	7	0	0	0	7	7	7	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7
नाड़ी	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8
गुणयोग	27	18	22	19॥	27	20	28	33	31॥	19	12	14	23॥	19॥	28॥	31॥	34	21	14	27	20॥	14	11	14	23	18	25	20	23॥	11॥	13	21	23॥	25॥	17॥	26॥
कन्या की राशि: मिथुन — आर्द्रा, कु, घ, ङ, छ																																				
वर्ण	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1
वश्य	1	1	1	1	1	1	2	2	2	॥	॥	॥	0	0	0	2	2	2	2	2	2	0	0	0	2	2	2	॥	॥	॥	2	2	2	॥	॥	॥
तारा	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	3	1॥	1॥
योनि	2	2	2	2	2	2	2	4	1	1	2	1	2	2	2	2	2	1	1	2	1	1	0	0	4	2	2	2	2	1	1	2	1	1	2	2
राशीश मैत्री	॥	॥	॥	5	5	5	5	5	5	1	1	1	4	4	4	5	5	5	5	5	5	॥	॥	॥	॥	॥	॥	4	4	4	4	4	4	॥	॥	॥
गण	6	6	0	0	6	6	6	6	6	6	6	0	0	6	6	6	6	0	0	6	0	0	6	0	0	6	6	6	6	0	0	0	6	6	6	6
भकूट	7	7	7	0	0	0	7	7	7	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7
नाड़ी	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8
गुणयोग	19	27	21	18॥	24॥	26	34	28	25	12॥	20	13	23॥	29॥	21॥	24॥	24॥	27	20	27	20	13॥	17	3	16	28	28	23	23	17॥	19	12	17	19	26॥	26॥
कन्या की राशि: मिथुन — पुनर्वसु, के, को, ह																																				
वर्ण	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1
वश्य	1	1	1	1	1	1	2	2	2	॥	॥	॥	0	0	0	2	2	2	2	2	2	0	0	0	2	2	2	॥	॥	॥	2	2	2	॥	॥	॥
तारा	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥
योनि	3	3	3	3	1	1	1	1	4	4	3	4	0	0	3	3	3	2	2	3	2	2	3	3	1	2	2	2	2	1	1	3	1	1	3	3
राशीश मैत्री	॥	॥	॥	5	5	5	5	5	5	1	1	1	4	4	4	5	5	5	5	5	5	॥	॥	॥	॥	॥	॥	4	4	4	4	4	4	॥	॥	॥
गण	6	5	1	1	5	6	6	5	6	6	6	1	1	5	5	5	6	1	1	6	1	1	6	1	1	5	5	5	6	1	1	1	5	5	5	6
भकूट	7	7	7	0	0	0	7	7	7	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7
नाड़ी	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8
गुणयोग	20	27	23	20॥	22॥	23॥	31॥	24	28	15॥	22॥	17	22॥	26॥	21॥	24॥	25॥	27॥	20॥	28	22	15॥	21॥	7	14	27	27	22	23	17	18॥	14	16	18	28	27॥

सङ्केत :- ॥ का अर्थ है आधा (1/2) गुण

गणनागुणैक्य बोधक चक्र

सङ्केत :- 0 का अर्थ है दोष

कन्या की राशि	नक्षत्र	चरण	वर की राशि	मेष			वृष			मिथुन			कर्क			सिंह			कन्या			तुला			वृश्चिक			धनु			मकर			कुम्भ			मीन		
			नक्षत्र	अश्वि	भर	कृ	कृ	रोहि	मृग	मृग	आ	पुन	पुन	पुष्य	अश	मघा	पूफा	उफा	उफा	हस्त	चित्रा	चित्रा	स्वा	वि	वि	अनु	ज्ये	मूल	पूषा	उषा	उषा	श्रव	धनि	धनि	शत	पूभा	पूभा	उभा	रेव
			चरण	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4
			वर्णाक्षर	चू चे चो	लि लू ले		इ उ	ओ वा वि	वे	क	कू घ ङ	के को		हु हे हो	डी डू डे	म मी मू	मो टा टी		टो प	पू ष ण	पे	र	रू रे रो	ती तू		न नी नू	नो या यी	ये यो भ	भू धा फा		भो ज	खि खू खे	ग	गु	गो सा सी	से सो		दू थ झ	दे दो चा
			अष्टकूट	ला	लो	अ	ए	वू	वो	कि	छ	ह	ही	डा	डो	मे	टू	टे	पी	ठ	पो	री	ता	ते	तो	ने	यू	भी	ढा	भे	जी	खो	गि	गे	सू	द	दी	ञ	ची
कर्क	पुनर्वसु	ही	वर्ण	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1
			वश्य	1	1	1	1	1	1	॥	॥	॥	2	2	2	1	1	1	॥	॥	॥	॥	॥	॥	1	1	1	॥	॥	॥	2	2	2	॥	॥	॥	2	2	2
			तारा	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥
			योनि	3	3	3	3	1	1	1	1	4	4	3	4	0	0	3	3	3	2	2	3	2	2	3	3	1	2	2	2	2	1	1	3	1	1	3	3
			राशीश मैत्री	4	4	4	॥	॥	॥	1	1	1	5	5	5	5	5	5	1	1	1	॥	॥	॥	4	4	4	4	4	4	॥	॥	॥	॥	॥	॥	4	4	4
			गण	6	5	1	1	5	6	6	5	6	6	6	1	1	5	5	5	6	1	1	6	1	1	6	1	1	5	5	5	6	1	1	1	5	5	5	6
			भकूट	7	7	7	7	7	7	0	0	0	7	7	7	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	0	0	0	0	0	0
			नाड़ी	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8
			गुणयोग	22॥	29॥	25॥	22	24	25	18	10॥	14॥	28	35	29	16॥	20॥	15॥	18	19	21	20॥	28	22	20	26	11॥	8	21	21	26	27	21	12॥	8	10	16	26	25॥
	पुष्य	हु, हे, हो, डा	वर्ण	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1
			वश्य	1	1	1	1	1	1	॥	॥	॥	2	2	2	1	1	1	॥	॥	॥	॥	॥	॥	1	1	1	॥	॥	॥	2	2	2	॥	॥	॥	2	2	2
			तारा	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3
			योनि	3	3	4	4	2	2	2	2	3	3	4	3	3	3	3	3	3	1	1	3	1	1	3	3	2	0	2	2	0	1	1	3	1	1	3	3
			राशीश मैत्री	4	4	4	॥	॥	॥	1	1	1	5	5	5	5	5	5	1	1	1	॥	॥	॥	4	4	4	4	4	4	॥	॥	॥	॥	॥	॥	4	4	4
			गण	6	5	1	1	5	6	6	5	6	6	6	1	1	5	5	5	6	1	1	6	1	1	6	1	1	5	5	5	6	1	1	1	5	5	5	6
			भकूट	7	7	7	7	7	7	0	0	0	7	7	7	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	0	0	0	0	0	0
			नाड़ी	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8
			गुणयोग	30॥	21॥	26॥	23	25	18	11	18	21॥	35	28	30	19॥	15॥	23॥	26	27	12	11॥	26॥	21	19	18	21	17	11	21	26	25	13	4॥	14॥	18	24	18	27
	आश्लेषा	डी, डू, डे, डो	वर्ण	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1
			वश्य	1	1	1	1	1	1	॥	॥	॥	2	2	2	1	1	1	॥	॥	॥	॥	॥	॥	1	1	1	॥	॥	॥	2	2	2	॥	॥	॥	2	2	2
			तारा	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3
			योनि	3	3	3	3	1	1	1	1	4	4	3	4	0	0	3	3	3	2	2	3	2	2	3	3	1	2	2	2	2	1	1	3	1	1	3	3
			राशीश मैत्री	4	4	4	॥	॥	॥	1	1	1	5	5	5	5	5	5	1	1	1	॥	॥	॥	4	4	4	4	4	4	॥	॥	॥	॥	॥	॥	4	4	4
			गण	0	0	6	6	0	0	0	0	0	0	0	6	6	0	0	0	0	6	6	0	6	6	0	6	6	0	0	0	0	6	6	6	0	0	0	0
			भकूट	7	7	7	7	7	7	0	0	0	7	7	7	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	0	0	0	0	0	0
			नाड़ी	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0
			गुणयोग	26	24॥	22॥	19	11	19	12	12	15	28॥	29	28	15	15॥	18॥	21	21	26	25॥	12॥	17॥	15॥	20	26	22॥	16	8	13	13	26	17॥	19॥	11॥	17॥	21	13

सङ्केत :- ॥ का अर्थ है आधा (1/2) गुण

गणनागुणैक्य बोधक चक्र

सङ्केत :- 0 का अर्थ है दोष

कन्या की राशि	नक्षत्र	चरण	वर की राशि	मेष			वृष			मिथुन			कर्क			सिंह			कन्या			तुला			वृश्चिक			धनु			मकर			कुम्भ			मीन		
			नक्षत्र	अश्वि	भर	कृ	कृ	रोहि	मृग	मृग	आ	पुन	पुन	पुष्य	अश	मघा	पूफा	उफा	उफा	हस्त	चित्रा	चित्रा	स्वा	वि	वि	अनु	ज्ये	मूल	पूषा	उषा	उषा	श्रव	धनि	धनि	शत	पूभा	पूभा	उभा	रेव
			चरण	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4
			वर्णाक्षर	चू चे चो	लि लू ले		इ उ	ओ वा वि	वे	क	कू घ ङ	के को		हु हे हो	डी डू डे	म मी मू	मो टा टी		टो प	पू ष ण	पे	र	रू रे रो	ती तू		न नी नू	नो या यी	ये यो भ	भू धा फा		भो ज	खि खू खे	ग	गु	गो सा सी	से सो		दू थ झ	दे दो चा
			अष्टकूट	ला	लो	अ	ए	वू	वो	कि	छ	ह	ही	डा	डो	मे	टू	टे	पी	ठ	पो	री	ता	ते	तो	ने	यू	भी	ढा	भे	जी	खो	गि	गे	सू	द	दी	ञ	ची
सिंह	मघा	म, मी, मू, मे	वर्ण	1	1	1	0	0	0	0	0	0	1	1	1	1	1	1	0	0	0	0	0	0	1	1	1	1	1	1	0	0	0	0	0	0	1	1	1
			वश्य	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1	2	2	2	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1	0	0	0	1	1	1
			तारा	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3
			योनि	3	3	3	3	1	1	1	2	0	0	3	0	4	4	3	3	3	2	2	3	2	2	3	3	2	2	1	1	2	2	2	3	2	2	3	3
			राशीश मैत्री	5	5	5	0	0	0	4	4	4	5	5	5	5	5	5	4	4	4	0	0	0	5	5	5	5	5	5	0	0	0	0	0	0	5	5	5
			गण	0	0	6	6	0	0	0	0	0	0	0	6	6	0	0	0	0	6	6	0	6	6	0	6	6	0	0	0	0	6	6	6	0	0	0	0
			भकूट	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	7	7	7	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	0	0	0
			नाड़ी	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0
			गुणयोग	20	20	16॥	17॥	9॥	17॥	21॥	22॥	20॥	16॥	19॥	16	28	30	27॥	16॥	16॥	21॥	24॥	11॥	16॥	22॥	25॥	33	25	19	8॥	3॥	4॥	18॥	24॥	25॥	18॥	18॥	19॥	13
	पूर्वाफाल्गुनी	मो, टा, टी, टू	वर्ण	1	1	1	0	0	0	0	0	0	1	1	1	1	1	1	0	0	0	0	0	0	1	1	1	1	1	1	0	0	0	0	0	0	1	1	1
			वश्य	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1	2	2	2	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1	0	0	0	1	1	1
			तारा	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥
			योनि	3	3	3	3	1	1	1	2	0	0	3	0	4	4	3	3	3	2	2	3	2	2	3	3	2	2	1	1	2	2	2	3	2	2	3	3
			राशीश मैत्री	5	5	5	0	0	0	4	4	4	5	5	5	5	5	5	4	4	4	0	0	0	5	5	5	5	5	5	0	0	0	0	0	0	5	5	5
			गण	6	6	0	0	6	6	6	6	6	6	6	0	0	6	6	6	6	0	0	6	0	0	6	0	0	6	6	6	6	0	0	0	6	6	6	6
			भकूट	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	7	7	7	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	0	0	0
			नाड़ी	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8
			गुणयोग	26	18	20	21	23॥	15॥	19॥	28॥	26॥	22॥	17॥	16॥	30	28	35	24	22॥	7॥	10॥	25॥	18॥	24॥	23॥	25॥	19	17	24	19	18॥	4॥	10॥	19॥	24॥	24॥	17॥	25॥
	उत्तराफाल्गुनी	टे	वर्ण	1	1	1	0	0	0	0	0	0	1	1	1	1	1	1	0	0	0	0	0	0	1	1	1	1	1	1	0	0	0	0	0	0	1	1	1
			वश्य	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1	2	2	2	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1	0	0	0	1	1	1
			तारा	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥
			योनि	3	3	3	3	2	2	2	2	3	3	3	3	3	3	4	4	3	0	0	3	0	0	3	3	2	2	2	2	2	1	1	3	1	1	4	3
			राशीश मैत्री	5	5	5	0	0	0	4	4	4	5	5	5	5	5	5	4	4	4	0	0	0	5	5	5	5	5	5	0	0	0	0	0	0	5	5	5
			गण	6	6	0	0	6	6	6	6	6	6	6	0	0	6	6	6	6	0	0	6	0	0	6	0	0	6	6	6	6	0	0	0	6	6	6	6
			भकूट	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	7	7	7	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	0	0	0
			नाड़ी	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8
			गुणयोग	16॥	26	20	21	26	24॥	28॥	20॥	21॥	17॥	25॥	19॥	27॥	35	28	17	16	13॥	16॥	25॥	16॥	22॥	31॥	17॥	9॥	25	25	20	20	11॥	17॥	11॥	15॥	15॥	26॥	25॥

सङ्केत :- ॥ का अर्थ है आधा (1/2) गुण

गणनागुणैक्य बोधक चक्र

सङ्केत :- 0 का अर्थ है दोष

वर की राशि				मेष			वृष			मिथुन			कर्क			सिंह			कन्या			तुला			वृश्चिक			धनु			मकर			कुम्भ			मीन		
कन्या की राशि	नक्षत्र	चरण	नक्षत्र	अश्वि	भर	कृ	कृ	रोहि	मृग	मृग	आ	पुन	पुन	पुष्य	अश्	मघा	पूफा	उफा	उफा	हस्त	चित्रा	चित्रा	स्वा	वि	वि	अनु	ज्ये	मूल	पूषा	उषा	उषा	श्रव	धनि	धनि	शत	पूभा	पूभा	उभा	रेव
			चरण	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4
			वर्णाक्षर / अष्टकूट	चू चे चो ला	लि लू ले लो	अ	इ उ ए	ओ वा वि वू	वे वो	क कि	कू घ ङ छ	के को ह	ही	हु हे हो डा	डी डू डे डो	म मी मू मे	मो टा टी टू	टे	टो प पी	पू ष ण ठ	पे पो	र री	रू रे रो ता	ती तू ते	तो	न नी नू ने	नो या यी यू	ये यो भ भी	भू धा फा ढा	भे	भो ज जी	खि खू खे खो	ग गि	गु गे	गो सा सी सू	से सो द	दी	दू थ झ ञ	दे दो चा ची
कन्या	उत्तराफाल्गुनी	टो, प, पी	वर्ण	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1
			वश्य	1	1	1	1	1	1	2	2	2	॥	॥	॥	0	0	0	2	2	2	2	2	2	0	0	0	2	2	2	॥	॥	॥	2	2	2	॥	॥	॥
			तारा	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥
			योनि	3	3	3	3	2	2	2	2	3	3	3	3	3	3	4	4	3	0	0	3	0	0	3	3	2	2	2	2	2	1	1	3	1	1	4	3
			राशीश मैत्री	॥	॥	॥	5	5	5	5	5	5	1	1	1	4	4	4	5	5	5	5	5	5	॥	॥	॥	॥	॥	॥	4	4	4	4	4	4	॥	॥	॥
			गण	6	6	0	0	6	6	6	6	6	6	6	0	0	6	6	6	6	0	0	6	0	0	6	0	0	6	6	6	6	0	0	0	6	6	6	6
			भकूट	0	0	0	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	7	7	7	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7
			नाड़ी	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8
			गुणयोग	13	22॥	16॥	21	26	24॥	31॥	23॥	24॥	20	28	22	17॥	25	18	28	27	24॥	16॥	25॥	16॥	18	27	13	14	29॥	29॥	24॥	24॥	16	16॥	10॥	14॥	17॥	28॥	27॥
	हस्त	पू, ष, ण, ठ	वर्ण	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1
			वश्य	1	1	1	1	1	1	2	2	2	॥	॥	॥	0	0	0	2	2	2	2	2	2	0	0	0	2	2	2	॥	॥	॥	2	2	2	॥	॥	॥
			तारा	1॥	1॥	3	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥
			योनि	0	3	3	3	2	2	2	2	3	3	3	3	3	3	3	3	4	1	1	4	1	1	2	2	2	2	2	2	2	1	1	0	1	1	3	3
			राशीश मैत्री	॥	॥	॥	5	5	5	5	5	5	1	1	1	4	4	4	5	5	5	5	5	5	॥	॥	॥	॥	॥	॥	4	4	4	4	4	4	॥	॥	॥
			गण	6	5	1	1	5	6	6	5	6	6	6	1	1	5	5	5	6	1	1	6	1	1	6	1	1	5	5	5	6	1	1	1	5	5	5	6
			भकूट	0	0	0	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	7	7	7	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7
			नाड़ी	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8
			गुणयोग	10	20	17॥	22	25	26	33	22॥	24॥	20	28	23	18॥	22॥	16	26	28	28	20	26॥	18॥	20	26	13	15	27	28॥	23॥	24॥	18॥	19	8॥	13॥	16॥	26॥	27॥
	चित्रा	पे, पो	वर्ण	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1
			वश्य	1	1	1	1	1	1	2	2	2	॥	॥	॥	0	0	0	2	2	2	2	2	2	0	0	0	2	2	2	॥	॥	॥	2	2	2	॥	॥	॥
			तारा	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥
			योनि	1	1	1	1	2	2	2	1	2	2	1	2	2	2	0	0	1	4	4	1	4	4	1	1	1	2	2	2	2	1	1	1	1	1	0	1
			राशीश मैत्री	॥	॥	॥	5	5	5	5	5	5	1	1	1	4	4	4	5	5	5	5	5	5	॥	॥	॥	॥	॥	॥	4	4	4	4	4	4	॥	॥	॥
			गण	0	0	6	6	0	0	0	0	0	0	0	6	6	0	0	0	0	6	6	0	6	6	0	6	6	0	0	0	0	6	6	6	0	0	0	0
			भकूट	0	0	0	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	7	7	7	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7
			नाड़ी	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8
			गुणयोग	13	5	19	23॥	20	12	19	26	25॥	21	12	27	22॥	8॥	14॥	24॥	27	28	20	19	26॥	28	11	25	27	14	22	17	18॥	15॥	16	24	16॥	19॥	10॥	19॥

सङ्केत :- ॥ का अर्थ है आधा (1/2) गुण

गणनागुणैक्य बोधक चक्र

सङ्केत :- 0 का अर्थ है दोष

कन्या की राशि	नक्षत्र	चरण	वर की राशि	मेष			वृष			मिथुन			कर्क			सिंह			कन्या			तुला			वृश्चिक			धनु			मकर			कुम्भ			मीन		
			नक्षत्र	अश्वि	भर	कृ	कृ	रोहि	मृग	मृग	आ	पुन	पुन	पुष्य	अश	मघा	पूफा	उफा	उफा	हस्त	चित्रा	चित्रा	स्वा	वि	वि	अनु	ज्ये	मूल	पूषा	उषा	उषा	श्रव	धनि	धनि	शत	पूभा	पूभा	उभा	रेव
			चरण	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4
			वर्णाक्षर	चू चे चो	लि लू ले		इ उ	ओ वा वि	वे	क	कू घ ङ	के को		हु हे हो	डी डू डे	म मी मू	मो टा टी		टो प	पू ष ण	पे	र	रू रे रो	ती तू		न नी नू	नो या यी	ये यो भ	भू धा फा		भो ज	खि खू खे	ग	गु	गो सा सी	से सो		दू थ झ	दे दो चा
			अष्टकूट	ला	लो	अ	ए	वू	वो	कि	छ	ह	ही	डा	डो	मे	टू	टे	पी	ठ	पो	री	ता	ते	तो	ने	यू	भी	ढा	भे	जी	खो	गि	गे	सू	द	दी	ञ	ची
	चित्रा	र, री	वर्ण	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1
			वश्य	1	1	1	1	1	1	2	2	2	॥	॥	॥	0	0	0	2	2	2	2	2	2	0	0	0	2	2	2	॥	॥	॥	2	2	2	॥	॥	॥
			तारा	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥
			योनि	1	1	1	1	2	2	2	2	2	2	1	2	2	2	0	0	1	4	4	1	4	4	1	1	1	2	2	2	2	1	1	1	1	1	0	1
			राशीश मैत्री	3	3	3	5	5	5	5	5	5	॥	॥	॥	0	0	0	5	5	5	5	5	5	3	3	3	॥	॥	॥	5	5	5	5	5	5	॥	॥	॥
			गण	0	0	6	6	0	0	0	0	0	0	0	6	6	0	0	0	0	6	6	0	6	6	0	6	6	0	0	0	0	6	6	6	0	0	0	0
			भकूट	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	7	7	7	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	0	0	0
			नाड़ी	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8
			गुणयोग	22॥	14॥	28॥	23॥	20	12	13	21	19॥	20॥	11॥	26॥	25॥	11॥	17॥	17॥	20	21	28	27	34॥	23॥	6॥	20॥	27	14	22	25	26॥	23॥	18	26	18॥	12॥	3॥	12॥
तुला	स्वाती	रू, रे, रो, ता	वर्ण	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1
			वश्य	1	1	1	1	1	1	2	2	2	॥	॥	॥	0	0	0	2	2	2	2	2	2	0	0	0	2	2	2	॥	॥	॥	2	2	2	॥	॥	॥
			तारा	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	3	1॥	1॥
			योनि	0	3	3	3	2	2	2	2	3	3	3	3	3	3	3	3	4	1	1	4	1	1	2	2	2	2	2	2	2	1	1	0	1	1	3	3
			राशीश मैत्री	3	3	3	5	5	5	5	5	5	॥	॥	॥	0	0	0	5	5	5	5	5	5	3	3	3	॥	॥	॥	5	5	5	5	5	5	॥	॥	॥
			गण	6	5	1	1	5	6	6	5	6	6	6	1	1	5	5	5	6	1	1	6	1	1	6	1	1	5	5	5	6	1	1	1	5	5	5	6
			भकूट	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	7	7	7	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	0	0	0
			नाड़ी	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0
			गुणयोग	27॥	29॥	17॥	12॥	15॥	26	27	26	28	29	27॥	14॥	13॥	25॥	25॥	25॥	27॥	21	28	28	20	9	21॥	16॥	23	27	19	22	23	26॥	21	20	25	19	19॥	12॥
	विशाखा	ती, तू, ते	वर्ण	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1
			वश्य	1	1	1	1	1	1	2	2	2	॥	॥	॥	0	0	0	2	2	2	2	2	2	0	0	0	2	2	2	॥	॥	॥	2	2	2	॥	॥	॥
			तारा	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥
			योनि	1	1	1	1	2	2	2	1	2	2	1	2	2	2	0	0	1	4	4	1	4	4	1	1	1	2	2	2	2	1	1	1	1	1	0	1
			राशीश मैत्री	3	3	3	5	5	5	5	5	5	॥	॥	॥	0	0	0	5	5	5	5	5	5	3	3	3	॥	॥	॥	5	5	5	5	5	5	॥	॥	॥
			गण	0	0	6	6	0	0	0	0	0	0	0	6	6	0	0	0	0	6	6	0	6	6	0	6	6	0	0	0	0	6	6	6	0	0	0	0
			भकूट	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	7	7	7	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	0	0	0
			नाड़ी	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0
			गुणयोग	22॥	22॥	20॥	15॥	10॥	18॥	19॥	20	21	22	21	18॥	17॥	19॥	17॥	17॥	18॥	27॥	34॥	19	28	17	16	20॥	27	22	14	17	17	30	24॥	26	20	14	13	4॥

सङ्केत :- ॥ का अर्थ है आधा (1/2) गुण

गणनागुणैक्य बोधक चक्र

सङ्केत :- 0 का अर्थ है दोष

वर की राशि				मेष			वृष			मिथुन			कर्क			सिंह			कन्या			तुला			वृश्चिक			धनु			मकर			कुम्भ			मीन		
कन्या की राशि	नक्षत्र	चरण	नक्षत्र	अश्वि	भर	कृ	कृ	रोहि	मृग	मृग	आ	पुन	पुन	पुष्य	अश्ले	मघा	पूफा	उफा	उफा	हस्त	चित्रा	चित्रा	स्वा	वि	वि	अनु	ज्ये	मूल	पूषा	उषा	उषा	श्रव	धनि	धनि	शत	पूभा	पूभा	उभा	रेव
			चरण	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4
			वर्णाक्षर	चू चे चो	लि लू ले		इ उ	ओ वा वि	वे	क	कू घ ङ	के को		हु हे हो	डी डू डे	म मी मू	मो टा टी		टो प	पू ष ण	पे	र	रू रे रो	ती तू		न नी नू	नो या यी	ये यो भ	भू धा फा		भो ज	खि खू खे	ग	गु	गो सा सी	से सो		दू थ झ	दे दो चा
			अष्टकूट	ला	लो	अ	ए	वू	वो	कि	छ	ह	ही	डा	डो	मे	टू	टे	पी	ठ	पो	री	ता	ते	तो	ने	यू	भी	ढा	भे	जी	खो	गि	गे	सू	द	दी	ञ	ची
वृश्चिक	विशाखा	ते	वर्ण	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1
			वश्य	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	2	2	2	0	0	0	1	1	1	0	0	0	1	1	1
			तारा	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥
			योनि	1	1	1	1	2	2	2	1	2	2	1	2	2	2	0	0	1	4	4	1	4	4	1	1	1	2	2	2	2	1	1	1	1	1	0	1
			राशीश मैत्री	5	5	5	3	3	3	॥	॥	॥	4	4	4	5	5	5	॥	॥	॥	3	3	3	5	5	5	5	5	5	॥	॥	॥	॥	॥	॥	5	5	5
			गण	0	0	6	6	0	0	0	0	0	0	0	6	6	0	0	0	0	6	6	0	6	6	0	6	6	0	0	0	0	6	6	6	0	0	0	0
			भकूट	0	0	0	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	7	7	7	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0
			नाड़ी	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0
			गुणयोग	16॥	16॥	14॥	19॥	14॥	22॥	12	12॥	13॥	19	18	15॥	21॥	23॥	21॥	17	18	27	22॥	7	16	28	27	31॥	21॥	16॥	8॥	12	12	25	24	25॥	19॥	19	18	9॥
	अनुराधा	न, नी, नू, ने	वर्ण	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1
			वश्य	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	2	2	2	0	0	0	1	1	1	0	0	0	1	1	1
			तारा	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3
			योनि	3	3	3	3	2	2	2	0	3	3	3	3	2	2	3	3	3	1	1	3	1	1	4	4	0	2	2	2	2	1	1	3	1	1	3	3
			राशीश मैत्री	5	5	5	3	3	3	॥	॥	॥	4	4	4	5	5	5	॥	॥	॥	3	3	3	5	5	5	5	5	5	॥	॥	॥	॥	॥	॥	5	5	5
			गण	6	5	1	1	5	6	6	5	6	6	6	1	1	5	5	5	6	1	1	6	1	1	6	1	1	5	5	5	6	1	1	1	5	5	5	6
			भकूट	0	0	0	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	7	7	7	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0
			नाड़ी	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8
			गुणयोग	24॥	15॥	19॥	24॥	27॥	20॥	10	15	20॥	26	18	21	24॥	20॥	29॥	25	26	11	6॥	21॥	16	28	28	31	15॥	13॥	21॥	25	26	12	11	21	24॥	24	18	27
	ज्येष्ठा	नो, या, यी, यू	वर्ण	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1
			वश्य	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	2	2	2	0	0	0	1	1	1	0	0	0	1	1	1
			तारा	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3
			योनि	3	3	3	3	2	2	2	0	3	3	3	3	2	2	3	3	3	1	1	3	1	1	4	4	0	2	2	2	2	1	1	3	1	1	3	3
			राशीश मैत्री	5	5	5	3	3	3	॥	॥	॥	4	4	4	5	5	5	॥	॥	॥	3	3	3	5	5	5	5	5	5	॥	॥	॥	॥	॥	॥	5	5	5
			गण	0	0	6	6	0	0	0	0	0	0	0	6	6	0	0	0	0	6	6	0	6	6	0	6	6	0	0	0	0	6	6	6	0	0	0	0
			भकूट	0	0	0	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	7	7	7	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0
			नाड़ी	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8
			गुणयोग	12	18॥	24॥	29॥	22॥	22॥	12	2	5	10॥	20	26	31	23॥	16॥	12	12	24	19॥	15॥	19॥	31॥	30	28	14	16॥	16॥	20	20	25	24	18	10	9॥	21	21

सङ्केत :- ॥ का अर्थ है आधा (1/2) गुण

गणनागुणैक्य बोधक चक्र

सङ्केत :- 0 का अर्थ है दोष

वर की राशि				मेष			वृष			मिथुन			कर्क			सिंह			कन्या			तुला			वृश्चिक			धनु			मकर			कुम्भ			मीन		
कन्या की राशि	नक्षत्र	चरण	नक्षत्र	अश्वि	भर	कृ	कृ	रोहि	मृग	मृग	आ	पुन	पुन	पुष्य	अश	मघा	पूफा	उफा	उफा	हस्त	चित्रा	चित्रा	स्वा	वि	वि	अनु	ज्ये	मूल	पूषा	उषा	उषा	श्रव	धनि	धनि	शत	पूभा	पूभा	उभा	रेव
			चरण	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4
			वर्णाक्षर / अष्टकूट	चू चे चो ला	लि लू ले लो	अ	इ उ ए	ओ वा वि वू	वे वो	क कि	कू घ ङ छ	के को ह	ही	हु हे हो डा	डी डू डे डो	म मी मू मे	मो टा टी टू	टे	टो प पी	पू ष ण ठ	पे पो	र री	रू रे रो ता	ती तू ते	तो	न नी नू ने	नो या यी यू	ये यो भ भी	भू धा फा ढा	भे	भो ज जी	खि खू खे खो	ग गि	गु गे	गो सा सी सू	से सो द	दी	दू थ झ ञ	दे दो चा ची
धनु	मूल	ये, यो, भ, भी	वर्ण	1	1	1	0	0	0	0	0	0	1	1	1	1	1	1	0	0	0	0	0	0	1	1	1	1	1	1	0	0	0	0	0	0	1	1	1
			वश्य	1	1	1	1	1	1	2	2	2	॥	॥	॥	0	0	0	2	2	2	2	2	2	0	0	0	2	2	2	॥	॥	॥	2	2	2	॥	॥	॥
			तारा	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3
			योनि	2	2	2	2	2	2	2	4	1	1	2	1	2	2	2	2	2	1	1	2	1	1	0	0	4	2	2	2	2	1	1	2	1	1	2	2
			राशीश मैत्री	5	5	5	॥	॥	॥	॥	॥	॥	4	4	4	5	5	5	॥	॥	॥	॥	॥	॥	5	5	5	5	5	5	3	3	3	3	3	3	5	5	5
			गण	0	0	6	6	0	0	0	0	0	0	0	6	6	0	0	0	0	6	6	0	6	6	0	6	6	0	0	0	0	6	6	6	0	0	0	0
			भकूट	0	0	0	0	0	0	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	7	7	7	0	0	0	7	7	7	7	7	7
			नाड़ी	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8
			गुणयोग	12	20	24॥	19	13	13	21	15	12	8	17	23॥	25	19	9॥	13	13	26	26	21	26	22॥	15॥	15	28	28	26॥	15	15	20	28॥	21॥	14॥	16	25	26॥
	पूर्वाषाढ़ा	भू, धा, फा, ढा	वर्ण	1	1	1	0	0	0	0	0	0	1	1	1	1	1	1	0	0	0	0	0	0	1	1	1	1	1	1	0	0	0	0	0	0	1	1	1
			वश्य	1	1	1	1	1	1	2	2	2	॥	॥	॥	0	0	0	2	2	2	2	2	2	0	0	0	2	2	2	॥	॥	॥	2	2	2	॥	॥	॥
			तारा	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥
			योनि	2	2	0	0	1	1	1	2	2	2	0	2	2	2	2	2	2	2	2	2	2	2	2	2	2	4	2	2	4	1	1	2	1	1	2	2
			राशीश मैत्री	5	5	5	॥	॥	॥	॥	॥	॥	4	4	4	5	5	5	॥	॥	॥	॥	॥	॥	5	5	5	5	5	5	3	3	3	3	3	3	5	5	5
			गण	6	6	0	0	6	6	6	6	6	6	6	0	0	6	6	6	6	0	0	6	0	0	6	0	0	6	6	6	6	0	0	0	6	6	6	6
			भकूट	0	0	0	0	0	0	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	7	7	7	0	0	0	7	7	7	7	7	7
			नाड़ी	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8
			गुणयोग	26	18	18	12॥	18	10	18	27	27	23	13	17	19	17	25	28॥	27	13	13	27	21	17॥	15॥	17॥	28	28	34	22॥	23	6	14॥	23॥	28॥	30	23	31
	उत्तराषाढ़ा	भे	वर्ण	1	1	1	0	0	0	0	0	0	1	1	1	1	1	1	0	0	0	0	0	0	1	1	1	1	1	1	0	0	0	0	0	0	1	1	1
			वश्य	1	1	1	1	1	1	2	2	2	॥	॥	॥	0	0	0	2	2	2	2	2	2	0	0	0	2	2	2	॥	॥	॥	2	2	2	॥	॥	॥
			तारा	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥
			योनि	2	2	2	2	0	0	0	2	2	2	2	2	1	1	2	2	2	2	2	2	2	2	2	2	2	2	4	4	2	2	2	2	2	2	2	2
			राशीश मैत्री	5	5	5	॥	॥	॥	॥	॥	॥	4	4	4	5	5	5	॥	॥	॥	॥	॥	॥	5	5	5	5	5	5	3	3	3	3	3	3	5	5	5
			गण	6	6	0	0	6	6	6	6	6	6	6	0	0	6	6	6	6	0	0	6	0	0	6	0	0	6	6	6	6	0	0	0	6	6	6	6
			भकूट	0	0	0	0	0	0	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	7	7	7	0	0	0	7	7	7	7	7	7
			नाड़ी	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0
			गुणयोग	24॥	26	12	6॥	10॥	17	25	27	27	23	23	9	8॥	24	25	28॥	28॥	21	21	19	13	9॥	23॥	17॥	26॥	34	28	16॥	14॥	15	23॥	23॥	29॥	31	31	23

सङ्केत :- ॥ का अर्थ है आधा (1/2) गुण				गणनागुणैक्य बोधक चक्र																																	सङ्केत :- 0 का अर्थ है दोष		
वर की राशि				मेष			वृष			मिथुन			कर्क			सिंह			कन्या			तुला			वृश्चिक			धनु			मकर			कुम्भ			मीन		
कन्या की राशि	नक्षत्र	चरण	नक्षत्र	अश्वि	भर	कृ	कृ	रोहि	मृग	मृग	आ	पुन	पुन	पुष्य	अश	मघा	पूफा	उफा	उफा	हस्त	चित्रा	चित्रा	स्वा	वि	वि	अनु	ज्ये	मूल	पूषा	उषा	उषा	श्रव	धनि	धनि	शत	पूभा	पूभा	उभा	रेव
			चरण	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4
			वर्णाक्षर	चू चे चो	लि लू ले		इ उ	ओ वा वि	वे	क	कू घ ङ	के को		हु हे हो	डी डू डे	म मी मू	मो टा टी		टो प	पू ष ण	पे	र	रू रे रो	ती तू		न नी नू	नो या यी	ये यो भ	भू धा फा		भो ज	खि खू खे	ग	गु	गो सा सी	से सो		दू थ झ	दे दो चा
			अष्टकूट	ला	लो	अ	ए	वू	वो	कि	छ	ह	ही	डा	डो	मे	टू	टे	पी	ठ	पो	री	ता	ते	तो	ने	यू	भी	ढा	भे	जी	खो	गि	गे	सू	द	दी	ञ	ची
	उत्तराषाढ़ा	भो, ज, जी	वर्ण	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1
			वश्य	1	1	1	1	1	1	॥	॥	॥	2	2	2	1	1	1	॥	॥	॥	॥	॥	॥	1	1	1	॥	॥	॥	2	2	2	॥	॥	॥	2	2	2
			तारा	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥
			योनि	2	2	2	2	0	0	0	2	2	2	2	2	1	1	2	2	2	2	2	2	2	2	2	2	2	2	4	4	2	2	2	2	2	2	2	2
			राशीश मैत्री	॥	॥	॥	5	5	5	4	4	4	॥	॥	॥	0	0	0	4	4	4	5	5	5	॥	॥	॥	3	3	3	5	5	5	5	5	5	3	3	3
			गण	6	6	0	0	6	6	6	6	6	6	6	0	0	6	6	6	6	0	0	6	0	0	6	0	0	6	6	6	6	0	0	0	6	6	6	6
			भकूट	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	7	7	7	0	0	0	7	7	7
			नाड़ी	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0
			गुणयोग	27	28॥	14॥	12	16	22॥	20	22	22	28	28	14	4॥	20	21	24॥	24॥	17	24	22	16	13	27	21	16	23॥	17॥	28	26	26॥	17	17	23	30॥	30॥	22॥
मकर	श्रवण	खि, खू, खे, खो	वर्ण	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1
			वश्य	1	1	1	1	1	1	॥	॥	॥	2	2	2	1	1	1	॥	॥	॥	॥	॥	॥	1	1	1	॥	॥	॥	2	2	2	॥	॥	॥	2	2	2
			तारा	1॥	1॥	3	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥
			योनि	2	2	0	0	1	1	1	2	2	2	0	2	2	2	2	2	2	2	2	2	2	2	2	2	2	4	2	2	4	1	1	2	1	1	2	2
			राशीश मैत्री	॥	॥	॥	5	5	5	4	4	4	॥	॥	॥	0	0	0	4	4	4	5	5	5	॥	॥	॥	3	3	3	5	5	5	5	5	5	3	3	3
			गण	6	5	1	1	5	6	6	5	6	6	6	1	1	5	5	5	6	1	1	6	1	1	6	1	1	5	5	5	6	1	1	1	5	5	5	6
			भकूट	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	7	7	7	0	0	0	7	7	7
			नाड़ी	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0
			गुणयोग	27	26	13॥	11	16	25	22॥	21	22	28	26	15	6॥	18॥	20	23॥	24॥	19॥	26॥	22	17	14	27	22	17	23	14॥	25	28	28	18॥	18	21	28॥	29॥	22॥
	धनिष्ठा	ग, गि	वर्ण	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1	1	1	1	1	1	1	0	0	0	1	1	1
			वश्य	1	1	1	1	1	1	॥	॥	॥	2	2	2	1	1	1	॥	॥	॥	॥	॥	॥	1	1	1	॥	॥	॥	2	2	2	॥	॥	॥	2	2	2
			तारा	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥
			योनि	1	0	1	1	2	2	2	1	2	2	1	2	2	2	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	2	2	1	4	4	1	4	4	1	0
			राशीश मैत्री	॥	॥	॥	5	5	5	4	4	4	॥	॥	॥	0	0	0	4	4	4	5	5	5	॥	॥	॥	3	3	3	5	5	5	5	5	5	3	3	3
			गण	0	0	6	6	0	0	0	0	0	0	0	6	6	0	0	0	0	6	6	0	6	6	0	6	6	0	0	0	0	6	6	6	0	0	0	0
			भकूट	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	7	7	7	0	0	0	7	7	7
			नाड़ी	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8
			गुणयोग	20	11	26	23॥	20	12	9॥	16॥	16	22	13	28	19॥	5॥	12॥	16	17॥	15॥	22॥	24॥	29	26	12	26	21	7	16	26॥	27	28	18॥	23॥	19	26॥	15॥	22॥

सङ्केत :- ॥ का अर्थ है आधा (1/2) गुण

गणनागुणैक्य बोधक चक्र

सङ्केत :- 0 का अर्थ है दोष

वर की राशि				मेष			वृष			मिथुन			कर्क			सिंह			कन्या			तुला			वृश्चिक			धनु			मकर			कुम्भ			मीन		
कन्या की राशि	नक्षत्र	चरण	नक्षत्र	अश्वि	भर	कृ	कृ	रोहि	मृग	मृग	आ	पुन	पुन	पुष्य	अश	मघा	पूफा	उफा	उफा	हस्त	चित्रा	चित्रा	स्वा	वि	वि	अनु	ज्ये	मूल	पूषा	उषा	उषा	श्रव	धनि	धनि	शत	पूभा	पूभा	उभा	रेव
			चरण	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4
			वर्णाक्षर	चू चे चो ला	लि लू ले लो	अ	इ उ ए	ओ वा वि वू	वे वो	क कि	कू घ ङ छ	के को ह	ही	हु हे हो डा	डी डू डे डो	म मी मू मे	मो टा टी टू	टे	टो प पी	पू ष ण ठ	पे पो	र री	रू रे रो ता	ती तू ते	तो	न नी नू ने	नो या यी यू	ये यो भ भी	भू धा फा ढा	भे	भो ज जी	खि खू खे खो	ग गि	गु गे	गो सा सी सू	से सो द	दी	दू थ झ ञ	दे दो चा ची
			अष्टकूट																																				
	धनिष्ठा	गु, गे	वर्ण	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1
			वश्य	1	1	1	1	1	1	2	2	2	॥	॥	॥	0	0	0	2	2	2	2	2	2	0	0	0	2	2	2	॥	॥	॥	2	2	2	॥	॥	॥
			तारा	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥
			योनि	1	0	1	1	2	2	2	1	2	2	1	2	2	2	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	2	2	1	4	4	1	4	4	1	0
			राशीश मैत्री	॥	॥	॥	5	5	5	4	4	4	॥	॥	॥	0	0	0	4	4	4	5	5	5	॥	॥	॥	3	3	3	5	5	5	5	5	5	3	3	3
			गण	0	0	6	6	0	0	0	0	0	0	0	6	6	0	0	0	0	6	6	0	6	6	0	6	6	0	0	0	0	6	6	6	0	0	0	0
			भकूट	7	7	7	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	7	7	7	0	0	0
			नाड़ी	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8
			गुणयोग	20	11	26	30॥	27	19	12	19	18॥	13॥	4॥	19॥	25॥	11॥	18॥	17॥	19	17	18	20	24॥	25	11	25	29॥	15॥	24॥	18	18॥	19॥	28	33	28॥	18	7	14
कुम्भ	शतभिषा	गो, सा, सी, सू	वर्ण	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1
			वश्य	1	1	1	1	1	1	2	2	2	॥	॥	॥	0	0	0	2	2	2	2	2	2	0	0	0	2	2	2	॥	॥	॥	2	2	2	॥	॥	॥
			तारा	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	3	1॥	1॥
			योनि	4	2	3	3	2	2	2	2	3	3	3	3	3	3	3	3	0	1	1	0	1	1	3	3	2	2	2	2	2	1	1	4	1	1	3	2
			राशीश मैत्री	॥	॥	॥	5	5	5	4	4	4	॥	॥	॥	0	0	0	4	4	4	5	5	5	॥	॥	॥	3	3	3	5	5	5	5	5	5	3	3	3
			गण	0	0	6	6	0	0	0	0	0	0	0	6	6	0	0	0	0	6	6	0	6	6	0	6	6	0	0	0	0	6	6	6	0	0	0	0
			भकूट	7	7	7	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	7	7	7	0	0	0
			नाड़ी	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8
			गुणयोग	15	21	28	32॥	25॥	27	20	12	13	8	14॥	20॥	26॥	20॥	12॥	11॥	8॥	25	26	19	26	26॥	21	19	22॥	24॥	24॥	18	18	24॥	33	28	19	8॥	17	16
	पूर्वभाद्रपद	से, सो, द	वर्ण	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1
			वश्य	1	1	1	1	1	1	2	2	2	॥	॥	॥	0	0	0	2	2	2	2	2	2	0	0	0	2	2	2	॥	॥	॥	2	2	2	॥	॥	॥
			तारा	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥
			योनि	1	0	1	1	2	2	2	1	2	2	1	2	2	2	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	2	2	1	4	4	1	4	4	1	0
			राशीश मैत्री	॥	॥	॥	5	5	5	4	4	4	॥	॥	॥	0	0	0	4	4	4	5	5	5	॥	॥	॥	3	3	3	5	5	5	5	5	5	3	3	3
			गण	6	6	0	0	6	6	6	6	6	6	6	0	0	6	6	6	6	0	0	6	0	0	6	0	0	6	6	6	6	0	0	0	6	6	6	6
			भकूट	7	7	7	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	7	7	7	0	0	0
			नाड़ी	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8
			गुणयोग	18	25	20	24॥	31॥	31॥	24॥	17	18	13	20	13॥	19॥	25॥	16॥	15॥	15॥	17॥	18॥	26	20	20॥	26॥	11	15॥	29॥	30॥	24	23	20	28॥	19	28	17॥	22॥	20

सङ्केत :- ॥ का अर्थ है आधा (1/2) गुण

गणनागुणैक्य बोधक चक्र

सङ्केत :- 0 का अर्थ है दोष

कन्या की राशि	नक्षत्र	चरण																																					
			वर की राशि	मेष			वृष			मिथुन			कर्क			सिंह			कन्या			तुला			वृश्चिक			धनु			मकर			कुम्भ			मीन		
			नक्षत्र	अश्वि	भर	कृ	कृ	रोहि	मृग	मृग	आ	पुन	पुन	पुष्य	अश	मघा	पूफा	उफा	उफा	हस्त	चित्रा	चित्रा	स्वा	वि	वि	अनु	ज्ये	मूल	पूषा	उषा	उषा	श्रव	धनि	धनि	शत	पूभा	पूभा	उभा	रेव
			चरण	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4	4	4	1	3	4	2	2	4	3	1	4	4
			वर्णाक्षर / अष्टकूट	चू चे चो ला	लि लू ले लो	अ	इ उ ए	ओ वा वि वू	वे वो	क कि	कू घ ङ छ	के को ह	ही	हु हे हो डा	डी डू डे डो	म मी मू मे	मो टा टी टू	टे	टो प पी	पू ष ण ठ	पे पो	र री	रू रे रो ता	ती तू ते	तो	न नी नू ने	नो या यी यू	ये यो भ भी	भू धा फा ढा	भे	भो ज जी	खि खू खे खो	ग गि	गु गे	गो सा सी सू	से सो द	दी	दू थ झ ञ	दे दो चा ची
मीन	पूर्वाभाद्रपद	दी	वर्ण	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1
			वश्य	1	1	1	1	1	1	॥	॥	॥	2	2	2	1	1	1	॥	॥	॥	॥	॥	॥	1	1	1	॥	॥	॥	2	2	2	॥	॥	॥	2	2	2
			तारा	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥
			योनि	1	0	1	1	2	2	2	1	2	2	1	2	2	2	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	1	2	2	1	4	4	1	4	4	1	0
			राशीश मैत्री	5	5	5	॥	॥	॥	॥	॥	॥	4	4	4	5	5	5	॥	॥	॥	॥	॥	॥	5	5	5	5	5	5	3	3	3	3	3	3	5	5	5
			गण	6	6	0	0	6	6	6	6	6	6	6	0	0	6	6	6	6	0	0	6	0	0	6	0	0	6	6	6	6	0	0	0	6	6	6	6
			भकूट	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	7	7	7
			नाड़ी	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8
			गुणयोग	14॥	21॥	16॥	19	26	26	25॥	18	19	18	25	18॥	17॥	23॥	14॥	16॥	16॥	18॥	11॥	19	13	19	25	9॥	15	29	30	29॥	28॥	25॥	17	7॥	16॥	28	33	30॥
	उत्तराभाद्रपद	दु, थ, झ, ञ	वर्ण	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1
			वश्य	1	1	1	1	1	1	॥	॥	॥	2	2	2	1	1	1	॥	॥	॥	॥	॥	॥	1	1	1	॥	॥	॥	2	2	2	॥	॥	॥	2	2	2
			तारा	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	3
			योनि	3	3	3	3	2	2	2	2	3	3	3	3	3	3	4	4	3	0	0	3	0	0	3	3	2	2	2	2	2	1	1	3	1	1	4	3
			राशीश मैत्री	5	5	5	॥	॥	॥	॥	॥	॥	4	4	4	5	5	5	॥	॥	॥	॥	॥	॥	5	5	5	5	5	5	3	3	3	3	3	3	5	5	5
			गण	6	6	0	0	6	6	6	6	6	6	6	0	0	6	6	6	6	0	0	6	0	0	6	0	0	6	6	6	6	0	0	0	6	6	6	6
			भकूट	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	7	7	7
			नाड़ी	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8	8	0	8	8	8	0	0	8	8	8	0	8
			गुणयोग	24॥	16॥	18॥	21	26	18	17॥	25॥	28	27	19	21	18॥	16॥	25॥	27॥	26॥	9॥	2॥	19॥	12	18	19	21	24	22	30	29॥	29॥	14॥	6	16	21॥	33	28	35
	रेवती	दे, दो, चा, ची	वर्ण	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1	0	0	0	0	0	0	0	0	0	1	1	1
			वश्य	1	1	1	1	1	1	॥	॥	॥	2	2	2	1	1	1	॥	॥	॥	॥	॥	॥	1	1	1	॥	॥	॥	2	2	2	॥	॥	॥	2	2	2
			तारा	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3	3	1॥	1॥	॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	1॥	3	3
			योनि	2	4	3	3	2	2	2	2	3	3	3	3	3	3	3	3	3	1	1	3	1	1	3	3	2	2	2	2	2	0	0	2	0	0	3	4
			राशीश मैत्री	5	5	5	॥	॥	॥	॥	॥	॥	4	4	4	5	5	5	॥	॥	॥	॥	॥	॥	5	5	5	5	5	5	3	3	3	3	3	3	5	5	5
			गण	6	5	1	1	5	6	6	5	6	6	6	1	1	5	5	5	6	1	1	6	1	1	6	1	1	5	5	5	6	1	1	1	5	5	5	6
			भकूट	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	0	0	0	0	0	0	7	7	7	7	7	7	0	0	0	7	7	7
			नाड़ी	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	8	8	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	0	0	0	8	8	8	8	8	8	0
			गुणयोग	25	24॥	11॥	14	17	26	25॥	24॥	26॥	25॥	27	14	13	23॥	23॥	25॥	26॥	19॥	12॥	11॥	4॥	10॥	27	22	26॥	29	21	20॥	21॥	22॥	14	16	18	29॥	34	28

इकाई 10
विभिन्न योग – राजयोग, गजकेशरीयोग,सरस्वती योग, नीचभड़्ग योग, महालक्ष्मी योग

इकाई की रूपरेखा

10.0 प्रस्तावना
10.1 उद्देश्य
10.2 विषय प्रवेश
    10.2.1 योगों का बल एवं योगों में कमी
    10.2.2 पंच्च महापुरूष योग
    10.2.3 सूर्य से बनने वाले योग
    10.2.4 चन्द्र से बनने वाले कुछ योग
    10.2.5 अन्य राजयोग, सरस्वती योग एवं विभिन्न राजयोग
    10.2.6 विपरीत राजयोग, तथा राजभंग योग विचार
10.3 सारांश
10.4 बोध प्रश्न
10.5 शब्दावली
10.6 संदर्भ ग्रंथ सूची

10.0 प्रस्तावना

ज्योतिष शास्त्र से संबंधित यह 10 वीं इकाई है इस इकाई का चयन यहां पर विशेष रूप से किया गया है। इस संसार में जो भी प्राणी है वे सभी फल की इच्छा रखते हुए कोई भी कार्य करते है परन्तु यहां पर योगों के अनुसार बताया गया कि किस योग में उत्पन्न होने पर कोनसा फल प्राप्त होगा। ऋषि परासर ने योगों के संदर्भ में एक विशेष धारणा दी की केन्द्र एक 1, 4, 7, 10 त्रिकोण 1, 9, 5 का स्वामी एक ही ग्रह होने पर ग्रह योग कारक हो जाता है। इस प्रकार उन्होंने ग्रहों को ही नहीं अपितु भावों के युति संबंधों को भी मान्यता भी है। मानव जीवन के लाभार्थ और भी उच्च कोटि के योगों का वर्णन किया गया है। जैसे पंचमहापुरूष योग इस योग के अन्तर्गत ''सूचक'' नामक योग सर्वप्रथम बनता है जिसमें व्यक्ति 70 वर्ष की अवस्था तक सुख भोगता है। अन्य योग भी इसमें बनते जो मानव जीवन को काफी हद तक लाभ

पहुंचाते है ठीक इसी प्रकार इस इकाई में राजभण्ड योग का भी वर्णन किया गया। इसमें मानव जीवन भी काफी प्रभावित होता है। इसका निदान करने पर लाभ प्राप्त होता है।

10.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप निम्न लिखित विषयों के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे -

1 सर्वप्रथम आप योगों के बल के बारे में जानकारी पायेंगे

2 योगों में कमी एवं योगों के अधिक बल तथा योग और राहु, केतु के बारे में जानेगें

3 उदाहरण सहित पंचमहापुरूष योग की पुर्णतया रूप से ज्ञान प्राप्त करेंगे

4 सूर्य ग्रह से बनने वाले कुछ योग भी जानेगे

5 अन्य योगों की जानकारी भी प्राप्त करेंगे

6 शुभ वेसी, शुभवासी योग, उभयचारी यो की जानकारी प्राप्त करेंगे

7 चन्द्र ग्रह के अनुसार उत्पन्न योग अनफा, सुनफा, केमद्रूम, श्रीकंठ, श्रीनाथ तथा गजकेशरी योगों को उदाहरण सहित जान पायेंगे

8 राजयोग का शाब्दीक अर्थ तथा राजयोग के विभाग की जानकारी प्राप्त करेंगे

9 राजयोग को विभिन्न स्तर पर जानेगें

10 चार ग्रह उच्च होने पर एवं तीन ग्रह उच्च के इनमें से एक ग्रह लग्न में स्थित होने से उत्पन्न राजयोगों की जानकारी प्राप्त करेंगे

11 सरस्वती योग, लक्ष्मी योग, तथा कलानीधि योग जानेगें

12 साथ ही धन योग, महाभाग्य योग तथा नीच भंग राज योग की जानकारी प्राप्त करेंगे

13 विपरित राजयोग उदाहरण सहित जानेगे

14 साथ ही पूर्णतया रूप से राजभंग योग की जानकारी प्राप्त करेंगे।

10.2 विषय प्रवेश

जन्म-पत्रिका में किन्हीं दो या दो से अधिक ग्रहों के परस्पर संबंध को विशेष फल देने वाला माना गया है। ग्रहों के परस्पर संबंध से तात्पर्य चतुर्विध संबंध से है। यह चार प्रकार का संबंध ग्रहों की परस्पर युति, परिवर्तन, दृष्टि तथा विशिष्ट भावों में स्थिति से है। सामान्यतया योग का अर्थ युति से है परंतु ज्योतिष में युति से भिन्न अन्य संबंधों को भी योग की श्रेणी में रखा गया है। चतुर्विध संबंध केन्द्राधिपतियों अथवा त्रिकोणाधिपतियों में हो तो श्रेष्ठ फल देने वाला होता है, ऐसी मान्यता है।

जन्म-पत्रिका में योग होने पर ग्रह अपने सामान्य गुणों की अपेक्षा अतिरिक्त फल देते हैं, जो सामान्यतया नहीं देते।

उदाहरणार्थ - सूर्य यश के नैसर्गिक कारक हैं तथा बुध प्रतिभा के। सूर्य व बुध की युति बुधादित्य योग बनाती है। जिस व्यक्ति की जन्म-पत्रिका में बुधादित्य योग होता है उसकी कार्य प्रणाली भी विशेष होती

है तथा किसी विषय विशेष का विशेषज्ञ होता है। यह युति जितनी शुभ होगी उतनी अधिक विशेषज्ञता व्यक्ति को प्राप्त होगी। यह विशेषज्ञता किसी एक ग्रह विशेष के कारण नहीं होगी अपितु बुधादित्य योग के कारण होगी।

उपर्युक्त वर्णित योग केवल एक उदाहरण मात्र है ऐसे सैकड़ों, हजारों योग व शास्त्रों में वर्णित हैं।

योग के अन्तर्गत ग्रह अपने मौलिक गुणों को छोड़कर या उन गुणों की सीमा से बाहर जाकर विशेष परिणाम देते हैं।

इसे ऐसे समझ सकते हैं कि जिस प्रकार रसायन शास्त्र में तत्वों के युग्म से मिश्रण बनता है, वह विशिष्ट गुण रखता है जैसे- हाइड्रोजन व ऑक्सीजन के योग से जल बनता है।

ऋषि पाराशर ने योगों के संदर्भ में एक विशेष धारणा दी कि केन्द्र-त्रिकोण का स्वामी एक ही ग्रह होने पर ग्रह योगकारक हो जाता है, इस प्रकार उन्होंने ग्रहों को ही नहीं अपितु भावों के युति संबंधों को भी मान्यता दी।

योगों का बल

योग कब बली होते हैं इस संबंध में विभिन्न विद्वानों ने ऋषि पाराशर के दिए नियमों पर मतैक्य रखा है कि जब केन्द्र-त्रिकोण के स्वामी आपस में संबंध करें तो विशेष परिणाम देते हैं।

अपवाद-1 - इस संबंध में एक अपवाद पर ध्यान दिया जाना आवश्यक है। जब सूर्य की युति से कोई ग्रह योग बनाता है तो सूर्य की निकटता के आधार पर योग बली हो जाता है व ग्रह उत्कृष्ट परिणाम देते हैं। परन्तु निकटता ही ग्रह को अस्तगंत भी करती है तथा परिणाम की उत्कृष्टता में कमी ला देती है। ग्रह के अस्तगंत अंश हम पिछली इकाईयों में पढ़ चुके हैं।

अपवाद - 2 - जब दो ग्रहों की युति से योग तो बने परन्तु दोनों ही ग्रह समान अंशों पर स्थित हों तो ग्रहों की ऐसी अवस्था उनके परस्पर युद्ध की अवस्था होगी और उस युद्ध में किसी एक ग्रह को पराजित होना पड़ेगा। अत: पराजित ग्रह के मौलिक गुण में कमी आ जाती है, इसी कारण उस ग्रह के े प्रभावों में कमी आएगी परंतु योग के विशिष्ट फल भी प्राप्त होंगे।

योगों का अधिक बल

जब कुण्डली के योग कारक ग्रहों की उन भावों में स्थिति हो जो भाव श्रेष्ठ कहे गए हैं, तब वे अधिक बली हो जाते हैं। इस क्रम में पहली स्थिति ग्रहों का केन्द्र-त्रिकोण में स्थित होना है।

दूसरी स्थिति ग्रह का अपनी उच्चराशि में स्थित होना है। तीसरी स्थिति वह है जब किसी ग्रह को अन्य ग्रहों की अपेक्षा श्रेष्ठ षड्बल प्राप्त हो।

योगों में कमी -

1. जब किसी जन्म-पत्रिका में योगकारक ग्रह दु:स्थानों में स्थित हों तो ग्रह के फल में कमी आ जाती है।

2. जब ग्रह अपनी उच्चादि राशि में स्थित न हो।

3. जब योग कारक ग्रह अस्त हो।

4. जब योग कारक ग्रह का षड्बल कम हो।

5. जब ग्रह अपनी नीच राशि में स्थित हो।

6. यदि योगकारक ग्रह त्रिषडयपति अथवा दु:स्थान के स्वामी से संबंध स्थापित करें तो योग भंग हो जाता है।

योग और राहु-केतु

राहु तथा केतु छायाग्रह हैं, अत: इनका भौतिक अस्तित्व नहीं माना गया (यह तथ्य हम ग्रहों के विस्तृत विवेचन में पढ़ चुके हैं)। दोनों ही ग्रहों को किसी राशि विशेष का स्वतंत्र स्वामित्व प्राप्त नहीं है अत: ये जिस भी भाव में बैठते हैं या जिस भाव के स्वामी के साथ बैठते हैं उसी से संबंधित फल प्रदान करते हैं। यदि इनकी स्थिति केन्द्राधिपतियों के साथ हों तो सम परिणाम देते हैं।

यदि ये त्रिकोणाधिपतियों के साथ स्थित हों तो शुभ परिणाम देते हैं।

त्रिषडयपतियों के साथ स्थित हों तो उनके समान फल देते हैं।

पंच महापुरुष योग

ज्योतिष योगों के क्रम में पंचमहापुरुष योग क्रमश: मंगल, बुध, गुरु, शुक्र तथा शनि से बनते हैं। हम पढ़ चुके हैं कि जन्म-पत्रिका में ग्रहों की विशेष स्थिति योग बनाती है। इस क्रम में सर्वप्रथम पंचमहापुरुष योग का अध्ययन करेंगे।

मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र तथा शनि की जन्म-पत्रिका के केन्द्र स्थानों में स्वराशि अथवा अपनी उच्चराशि में स्थिति से क्रमश: रुचक, भद्र, हंस, मालव्य तथा शश योग बनता है।

उदाहरणार्थ -

रुचक योगफल - किसी जन्म-पत्रिका में मंगल जब केन्द्र में मेष, वृश्चिक अथवा मकर राशि में स्थित होते हैं तो रुचक योग बनता है। यह योग होने पर व्यक्ति अनुशासित, साहसी, प्रतिस्पर्धात्मक शक्ति रखने वाला, साहस से धनार्जन करने वाला, अपने गुणों के कारण प्रसिद्ध होने वाला होता है, एवं 70 वर्ष की अवस्था तक सुख भोगता है। ऐसा सामान्य नियम है।

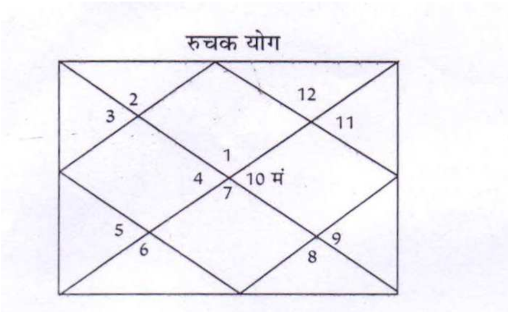

भद्र योग फल - किसी जन्म-पत्रिका में बुध जब केन्द्र में मिथुन अथवा कन्या राशि में स्थित होते हैं तो भद्र योग बनता है।

जन्म-पत्रिका में भद्र योग होने पर व्यक्ति अत्यधिक बुद्धिमान, विद्वान व्यक्तियों से प्रशंसा पाने वाला वैभवपूर्ण जीवन वाला, वाक व भाषण कला में निपुण होता है। शेर के समान मुख वाला गज के समान चलने वाला चौड़ी छोटी लम्बा कदवाला मोटा होता है। ऐसे व्यक्ति उच्चाधिकारी भी बनता है।

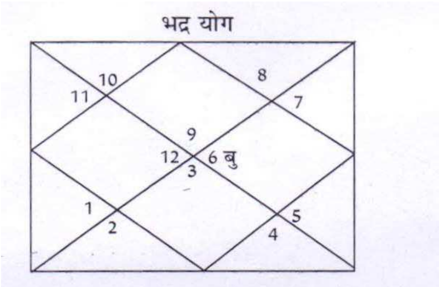

हंस योग फल - किसी जन्म-पत्रिका में बृहस्पति जब केन्द्र में धनु, मीन अथवा कर्क राशि में स्थित होते हैं तो हंस योग बनता है।

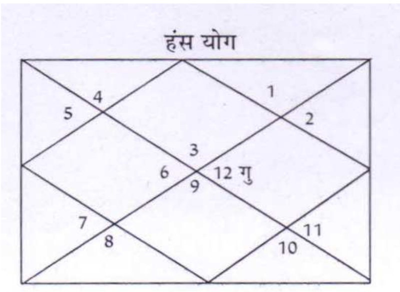

जन्म-पत्रिका में हंस योग होने पर व्यक्ति सौम्य व्यवहार से युक्त, सुंदर, सात्विक विचारों वाला तथा अच्छा भोजन खाने-पीने का शौकीन होता है। ऐसे व्यक्तियों के हाथ-पैरों में विशेष शुभ चिन्ह भी पाए जाते हैं।

मालव्य योग - किसी जन्म-पत्रिका में शुक्र जब केन्द्र में वृषभ, तुला अथवा मीन राशि में स्थित होते हैं तो मालव्य योग बनता है।

मालव्य योग

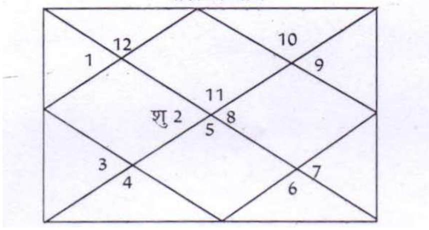

मालव्य योग होने पर व्यक्ति विद्वान, सदैव प्रसन्न रहने वाला, यशस्वी, निरन्तर वृद्धि को प्राप्त करने वाला तथा धैर्यवान होता है। ऐस व्यक्ति को वाहन सुख अधिक प्राप्त होता है तथा जीवन में स्त्री पक्ष से लाभ मिलता है।

शश योग - किसी जन्म-पत्रिका में शनि जब केन्द्र में तुला, मकर अथवा कुंभ राशि में स्थित होते हैं तो शश योग बनता है।

शश योग

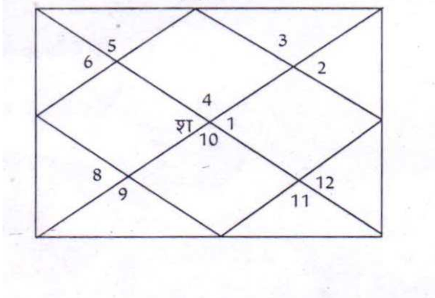

शश योग होने पर व्यक्ति प्रभावशाली अन्य व्यक्तियों से प्रशंसा पाने वाला, धनी व सुखी होता है। ऐसे व्यक्ति दूसरे व्यक्तियों की प्रशंसा भी खूब करते हैं एवं इसकी आयु 77 वर्ष की होती है एवं चुनाव में शीघ्र सफलता मिलती है।

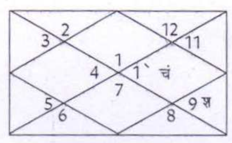

सूर्य से बनने वाले कुछ योग -

किसी भी जन्म-पत्रिका में सूर्य की स्थिति के आस-पास स्थित ग्रहों से बनने वाले कुछ योग निम्न हैं -

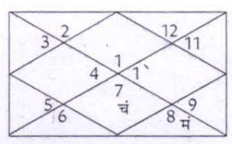

शुभवेसि योग - जन्म-पत्रिका में सूर्य जिस भाव में स्थित हैं उससे द्वितीय भाव में राहु-केतु के अतिरिक्त कोई ग्रह अर्थात् मंगल, बुध, गुरु, शुक्र अथवा शनि स्थित हों तो शुभवेसि योग बनता है। उदाहरण स्वरूप यदि वृषभ लग्न की जन्म-पत्रिका में सूर्य सिंह राशि में स्थित हों तथा कन्या राशि में बुध हों तो शुभवेसि योग बनेगा।

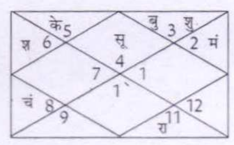

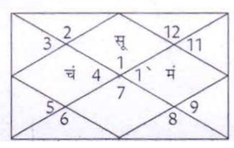

शुभवासि योग - जन्म-पत्रिका में सूर्य जिस भाव में स्थित हैं उससे द्वादश भाव में राहु/केतु के अतिरिक्त कोई अन्य ग्रह स्थित हो तो शुभवासि योग बनता है। उदाहरण स्वरूप कुंभ लग्न की कुण्डली में यदि सूर्य धनु राशि में हों तथा मंगल वृश्चिक राशि में हों तो यह योग बनेगा।

उभयचरी योग - जन्म-पत्रिका में सूर्य जिस भाव में स्थित हैं उसके दोनों ओर अर्थात् उससे द्वितीय व द्वादश भावों में कोई ग्रह हो तो उभयचरी योग बनता है। उदाहरण स्वरूप तुला लग्न की कुण्डली में यदि मकर राशि में सूर्य हैं तथा धनु राशि में बुध व कुंभ राशि में शुक्र हों तो उभयचरी योग बनता है।

चन्द्रमा से बनने वाले कुछ योग -

अनफा योग - जन्म-पत्रिका में चन्द्रमा जिस भाव में स्थित हों उससे द्वादश भाव में सूर्य के अतिरिक्त कोई ग्रह हो तथा उससे द्वितीय भाव में कोई ग्रह न हो तो अनफा योग होता है।

योगफल - यह योग होने पर व्यक्ति समाज में प्रतिष्ठित व शीलवान होता है।

सुनफा योग - जन्म-पत्रिका में चन्द्रमा जिस भाव में स्थित हों उससे द्वादश भाव में कोई ग्रह स्थित ना हो तथा द्वितीय भाव में कोई ग्रह हो तो सुनफा योग होता है।

योगफल - यह योग होने पर व्यक्ति बुद्धिमान व धनवान होता है। तथा उसकी बहुत ख्याति होती है।

केमद्रुम योग - जन्म-पत्रिका में चन्द्रमा जिस भाव में स्थित हों उससे द्वितीय तथा द्वादश भाव में यदि कोई ग्रह न हो तो केमद्रुम योग होता है।

केमद्रुम योग अशुभ योगों की श्रेणी में आता है। इसे दरिद्र योग भी कहा जाता है। दरिद्रता केवल धन की ही नहीं अपितु रिश्तों में कमी से भी मानी जा सकती है।

श्रीकंठ योग - किसी जन्म-पत्रिका में लग्नेश, सूर्य व चन्द्रमा स्वराशि, मित्र अथवा उच्च राशि में होकर केन्द्र अथवा त्रिकोण में स्थित हों तो श्री कण्ठ योग होता है।

उदाहरण - मेष लग्न की कुण्डली में सूर्य व मंगल दोनों अपनी उच्च राशि में स्थित हैं। मंगल लग्नेश भी हैं तथा चन्द्रमा स्वराशि कर्क में स्थित होकर श्रीकंठ योग बना रहे हैं।

श्रीनाथ योग - किसी जन्म-पत्रिका में भाग्येश, बुध व शुक्र मित्र की राशि, स्वराशि या उच्च राशि में होकर केन्द्र या त्रिकोण में स्थित हों तो श्रीनाथ योग बनता है।

गजकेशरी योग - किसी जन्म-पत्रिका में बृहस्पति यदि चन्द्रमा से केन्द्र में स्थित हों तथा शुभ ग्रह से दृष्ट या युत हों अर्थात् कोई पाप या अशुभ दृष्टि बृहस्पति व चन्द्रमा पर न हो तो गजकेसरी योग होता है। इस योग में बृहस्पति यदि अपनी शत्रु या नीच राशि में नहीं होने चाहिएं।

गजकेशरी योग होने पर व्यक्ति अच्छा पद प्राप्त करता है। अनुभव के आधार पर यदि देखें तो यह धनदायी भी होता है।

राजयोग - राजयोग का शाब्दिक अर्थ है राजा से योग। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में राजा से तात्पर्य सरकार तथा सरकार से जुड़े उच्चाधिकारी जो स्वतंत्र रूप से निर्णय लेने में सक्षम होते हैं जैसे कि किसी जिले का कलेक्टर या समकक्ष अन्य अधिकारी।

राजयोग को मुख्यत: दो प्रकार से देखा जाता है।

प्रथम - जिनमें राजा की शक्ति का प्रयोग किया जाए।

द्वितीय - वह जिनमें दण्ड का अधिकार शामिल हो।

प्रथम श्रेणी के राजयोगों में इनकम टैक्स व सेल्स टैक्स अधिकारियों की गणना की जा सकती है।

तथा द्वितीय श्रेणी के राजयोग में न्यायाधीश आदि की गणना की जाती है।

वास्तव में राजयोग वही श्रेष्ठ है जिसमें व्यक्ति को क्षेत्राधिकार व दण्डाधिकार दोनों ही मिलें तथा वह निर्बाध तथा स्वतन्त्र रूप से अधिकारों के क्रियान्वयन कर सकें।

विशेष - जिस व्यक्ति की जन्म-पत्रिका में राजयोग होता है, वह स्वयं पद का उपभोग करता है तथा जिसकी जन्म-पत्रिका में राजयोग बाधित होता है वह दूसरों के माध्यम से शासन करता है तथा सत्ता का अधिकार नहीं भोग पाता।

इस श्रेणी में निम्न व्यक्तियों को रखा जा सकता है।

1. मुख्यमंत्री, प्रधानमंत्री तथा बलाबल के आधार पर एस.पी.आदि।
2. अमात्य/ महामात्य - डी.सी.पी., एस.डी.एम आदि।
3. राज भवनगामी - प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री, राज्यपाल आदि के परिवार के सदस्य जो उन पर आश्रित हों।

4. राजा के अधिकारी - अर्थात् सरकारी विभाग से जुड़े व्यक्ति- कलेक्टर से लेकर चपरासी तक इस श्रेणी में आते हैं जो राजकोष से वेतन पाते हैं।

5. राजकृपा पाने वाले व्यक्ति - अपने उद्योगों के लिए ऋण प्राप्त करने वाले व्यक्ति या बैंकों तथा सरकारी वित्तीय संस्थाओं से वित्तीय सहायता प्राप्त करने वाले व्यक्ति।

राजयोग को हम भिन्न-भिन्न स्तर पर समझने का प्रयास करेंगे।

1. सर्वप्रथम केन्द्र तथा त्रिकोण का संबंध होने पर राजयोग बनता है। यह संबंध चतुर्विध संबंधों में से किसी भी प्रकार से बन सकता है।

2. स्वराशि में स्थित ग्रह बलवान हो जाते हैं।

3. यदि जन्म-पत्रिका में तीन या अधिक ग्रह अपनी उच्च राशि में स्थित हों तो राजयोग की स्थिति बनती है।

4. जन्म-पत्रिका के योगकारक ग्रह यदि नवांश में भी अच्छी स्थिति में हों तो फल में बढ़ोत्तरी करते हैं।

5. वर्गोत्तम लग्न - जिस जन्म-पत्रिका में जन्म लग्न व नवांश लग्न एक ही हो तो वह वर्गोत्तम लग्न कहीं जाती है।

6. वर्गोत्तम ग्रह - कोई भी ग्रह जन्म-पत्रिका में जिस राशि में है यदि नवांश में भी उसी राशि में स्थित हो तो वह ग्रह वर्गोत्तम कहलाता है।

वर्गोत्तम लग्न तथा वर्गोत्तम ग्रह को अत्यधिक बली माना गया है, राजयोग के संदर्भ में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका इन दोनों की भी होती है।

अन्य राजयोग - राजयोग में चन्द्रमा की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है।

1. जन्म-पत्रिका में यदि पक्षबली चन्द्रमा हों तथा स्वराशि या उच्चराशि में स्थित कोई अन्य ग्रह उन्हें पूर्ण दृष्टि से देखें तो व्यक्ति निम्न परिवार में जन्म लेने के बाद भी राजा के समान सुख भोगता है।

2. जन्म-पत्रिका में पूर्णिमा के चन्द्रमा लग्न के अतिरिक्त किसी केन्द्र में हों तो उच्च कोटि का राजयोग बनता है।

3. यदि केन्द्र में शुभ ग्रह हों अर्थात् पापग्रह न हों तथा पूर्ण चन्द्रमा सिंह नवांश में हों तो राजयोग बनता है।

विशेष - राजयोगकारी ग्रह यदि अस्त हों तो परिणामों में कमी आ जाती है अर्थात् योग पूर्णत: फलित नहीं होता। प्रत्येक लग्न के लिए केन्द्र व त्रिकोण के स्वामी होने के कारण अलग-अलग ग्रह राजयोगकारी होते हैं।

1 मेष लग्न - मेष लग्न की कुण्डली में चन्द्रमा व सूर्य चतुर्थ व पंचम भाव के स्वामी होने के कारण योगकारक होते हैं।

2 वृषभ लग्न - सूर्य व शनि योगकारक हैं। सूर्य चतुर्थेश हैं तथा शनि नवमेश-दशमेश। जन्म-पत्रिका में इनकी केन्द्र -त्रिकोण में स्थिति तथा शुभ ग्रहों से सम्बन्ध होने पर राजयोग की पुष्टि करता है।

3 मिथुन लग्न - मिथुन लग्न की जन्म-पत्रिका में बुध लग्न व चतुर्थ भाव के स्वामी होने के कारण योगकारक है।

4 कर्क लग्न - कर्क लग्न के लिए चंद्रमा व मंगल विशेष योगकारक होते हैं। चंद्रमा लग्नेश हैं तथा मंगल पंचमेश व दशमेश हैं।

5 सिंह लग्न - सिंह लग्न के लिए सूर्य व मंगल योगकारक ग्रह हैं। सूर्य लग्नेश हैं तथा मंगल चतुर्थेश व नवमेश हैं।

6 कन्या लग्न - कन्या लग्न में बुध लग्नेश व दशमेश हैं अत: योगकारी हैं।

7 तुला लग्न - तुला लग्न में शनि व चन्द्रमा योगकारक हैं। शनि चतुर्थेश व पंचमेश हैं तथा चन्द्रमा दशमेश हैं।

8 वृश्चिक लग्न - वृश्चिक लग्न के लिए चन्द्रमा व सूर्य योगकारक होते हैं। चन्द्रमा नवमेश हैं तथा सूर्य दशमेश होने के कारण योगकारक होते हैं।

9 धनु लग्न - धनु लग्न में बृहस्पति लग्नेश तथा चतुर्थेश होने के कारण योगकारक हैं।

10 मकर लग्न - मकर लग्न में शुक्र योगकारक होते हैं। शुक्र पंचमेश व दशमेश हैं।

11 मीन लग्न - मीन लग्न के लिए बृहस्पति लग्नेश व दशमेश हैं अत: योगकारक हैं।

नोट –

1. योगकारक ग्रह जब जन्म-पत्रिका में बली हों, शुभ युत व दृष्ट हों, शुभ भावों में हों तभी फल देते हैं।

2. योगकारक ग्रह उनकी दशा अन्तर्दशा आने पर ही फल देते हैं।

ग्रहों की उच्च या स्वराशि में स्थिति के आधार पर बनने वाले राजयोगों का वर्णन निम्न है।

1. चार ग्रह उच्च और उनमें से एक ग्रह लग्न में हो तो

निम्न राजयोग बनेंगे।

× सूर्य मेष राशि के लग्न में , गुरु कर्क में, शनि तुला में और मंगल मकर राशि में हों।

× गुरु कर्क राशि के लग्न में, शनि तुला में, मंगल मकर में और सूर्य मेष राशि में हों।

× शनि तुला राशि के लग्न में, मंगल मकर में, सूर्य मेष में और गुरु कर्क राशि में हों।

× मंगल मकर के लग्न में, सूर्य मेष में, गुरु कर्क में और शनि तुला राशि में हों।

2. तीन ग्रह उच्च में और उनमें से एक लग्न में हो तो निम्नलिखित राजयोग बनेंगे।

× सूर्य मेष राशि के लग्न में, गुरु कर्क में, शनि तुला में हों।

× सूर्य मेष राशि के लग्न में, गुरु कर्क में, मंगल मकर में हों।

× सूर्य मेष राशि के लग्न में, शनि तुला में, मंगल मकर राशि में हों।

× गुरु कर्क राशि के लग्न में , शनि तुला में और मंगल मकर राशि में हों।

× गुरु कर्क राशि के लग्न में, शनि तुला में, सूर्य मेष राशि में हों।

× गुरु कर्क राशि के लग्न में, मंगल मकर राशि के, सूर्य मेष राशि में हों।

× शनि तुला राशि के लग्न में, मंगल मकर राशि में, सूर्य मेष राशि में हों।

× शनि तुला राशि के लग्न में, मंगल मकर राशि में, गुरु कर्क में हों।

× शनि तुला राशि के लग्न में, गुरु कर्क में, सूर्य मेष में हों।

× मंगल मकर राशि के लग्न में, सूर्य मेष में, गुरु कर्क में हों।

× मंगल मकर राशि के लग्न में, सूर्य मेष राशि में, शनि तुला में हों।

× मंगल मकर राशि के लग्न में, शनि तुला में, गुरु कर्क में हों।

3. चन्द्र कर्क में, दो ग्रह उच्च के और ग्रह लग्न में हो तो निम्न राजयोग बनेंगे।

× सूर्य मेष राशि के लग्न में, गुरु कर्क में, चन्द्र कर्क राशि में हों।

× गुरु व चन्द्र कर्क राशि में लग्न में और सूर्य मेष में हों।

× सूर्य मेष राशि के लग्न में, चन्द्र कर्क में शनि तुला राशि में हों।

× शनि तुला राशि के लग्न में, चन्द्र कर्क में, सूर्य मेष में हों।

× सूर्य मेष राशि के लग्न में, चन्द्र कर्क में, मंगल मकर राशि में हों।

1मंगल मकर राशि के लग्न में, चन्द्र कर्क में, सूर्य मे राशि में हों।

× गुरु कर्क राशि के लग्न में, चन्द्र कर्क राशि में, शनि तुला राशि में हों।

× शनि तुला राशि के लग्न में, चन्द्र कर्क में, गुरु कर्क राशि में हों।

× गुरु कर्क राशि के लग्न में, चन्द्र कर्क में, मंगल मकर राशि में हों।

× मंगल मकर राशि के लग्न में, चन्द्र कर्क में, गुरु कर्क में हों।

× मंगल मकर राशि के लग्न में,चन्द्र कर्क में, शनि तुला राशि में हों।

× शनि तुला राशि के लग्न में,चन्द्र कर्क में, मंगल मकर राशि में हों।

4. चन्द्र कर्क में, एक ग्रह उच्च के लग्न में हो तो निम्न राजयोग बनेंगे।

× सूर्य मेष राशि के लग्न में और चन्द्र कर्क राशि में हों।

× गुरु कर्क राशि के लग्न में और चंद्र कर्क में हों।

× शनि तुला राशि के लग्न में और चन्द्र कर्क में हों।

× मंगल मकर राशि के लग्न में और चंद्रमा कर्क राशि में हों।

सरस्वती योग

यदि बुध, बृहस्पति एवं शुक्र लग्न से केन्द्र-त्रिकोण या द्वितीय स्थान में हों और बृहस्पति स्वराशि, मित्र राशि या उच्च राशि में बलवान हों तो सरस्वती योग होता है।

इस योग में जन्मे व्यक्ति विद्वान, नाटककार, अच्छे साहित्यकार एवं कला में प्रवीणहोते हैं।

लक्ष्मी योग

यदि भाग्येश अपनी मूल त्रिकोण या उच्च राशि में परमोच्च होकर केन्द्र में हो और लग्नेश बली हो तो लक्ष्मी योग होता है। ऐसा व्यक्ति विद्वान, यशस्वी, राजा से सम्मानित, अनेक प्रकार के सुखों को भोगने वाला तथा संतान सुख को प्राप्त करने वाला होता है।

भाग्येश और लग्नेश की महादशा, विशेष फलदायक होती है।

कलानिधि योग

लग्न से द्वितीय में बुध तथा शुक्र से युक्त या दृष्ट बृहस्पति हों या बृहस्पति, बुध या शुक्र की राशि में हों तो कलानिधि योग होता है, इस योग में जन्मा व्यक्ति, सदगुण सम्पन्न, राजाओं से सम्मानित एवं अनेक सुखों को प्राप्त करने वाला होता है तथा वह प्राय: निरोग व निर्भय रहता है।

धन योग

1. लग्न का द्वितीय एवं एकादश से सम्बन्ध धन योग कारक माना जाता है।
2. यदि धनेश-धन भाव में, लाभेश, लाभ भाव में एवं लग्नेश-लग्न में स्थित हों।
3. धनेश और लाभेश स्वराशि, उच्चराशि या मित्रराशि या लाभ में स्थित हों।
4. लाभेश और धनेश मित्र हों और लग्न में एक साथ स्थित हों।
5. लाभेश, धनेश और लग्नेश लग्न में स्थित हों।
6. चन्द्रमा द्वितीय भाव में शुक्र से दृष्ट हों तो व्यक्ति धनाढ्य होता है।

7. बुध द्वितीय भाव में शुभ ग्रह से दृष्टः हों तो व्यक्ति सदा धनवान रहता है। यदि धनेश वक्री हो तो सब दिशाओं से लाभ कराते हैं।

8. बुध पंचम भाव में स्वराशि के हों, चंद्र-मंगल एकादश में हों तो धन योग होता है।

9. सूर्य लग्न में, स्वराशि के मंगल और बृहस्पति से युत या दृष्ट हों तो धन योग होता है।

10. चंद्र स्वराशि के लग्न में, बृहस्पति-मंगल से युत या दृष्ट हों तो धन योग होता है।

महाभाग्य योग

पुरुष की कुण्डली में दिन का जन्म हो, सूर्य, चंद्र एवं लग्न विषम राशि के हों। स्त्री की कुण्डली में रात्रि का जन्म हो और सूर्य, चंद्र एवं लग्न सम राशियों में हों तो महाभाग्य योग होता है। इस योग में जन्मे व्यक्ति सर्व सुख संपन्न एवं महा भाग्यशाली होते हैं।

नीच भंग राजयोग - पिछले अध्यायों में हमने पढ़ा था कि नीच ग्रह शुभफल नहीं देते परंतु यदि नीच ग्रह का नीच भंग हो जाता है तो वही ग्रह राजयोग कारक हो जाता है।

वही नीचग्रह शुभफल दाता हो जाता है। ग्रह का नीचभंग होने की स्थित्तियाँ निम्न हैं -

1. नीचे राशि का स्वामी चंद्रमा से केन्द्र में हो।

2. नीच ग्रह का उच्चनाथ, चंद्रमा से केन्द्र में हो।

यदि जन्म-पत्रिका में उपरोक्त दोनों ही स्थितियाँ हो तभी ग्रह का नीच भंग होता है। इसको एक उदाहरण से समझते हैं-

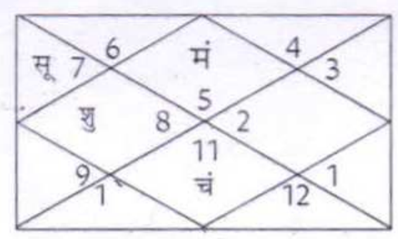

इस उदाहरण में सूर्य, अपनी नीच राशि तुला में स्थित हैं। तुला के स्वामी शुक्र, चन्द्रमा से दशम अर्थात् केन्द्र में हैं अत: शर्त की पूर्ति हुई। नीच भंग के लिए दूसरी शर्त यह है कि नीच ग्रह का उच्च नाथ भी चन्द्रमा से केन्द्र में होना चाहिए। उच्चनाथ का तात्पर्य है कि वह ग्रह जिस राशि में उच्च का होता है उस राशि का स्वामी । हमारे उदाहरण में नीच ग्रह सूर्य हैं तथा सूर्य, मेष राशि में उच्च के होते हैं, जिसके स्वामी मंगल हैं अत: सूर्य के उच्चनाथ मंगल होंगे। यहाँ मंगल, चन्द्रमा से सप्तम में अर्थात्ं केन्द्र मे स्थित हैं, अत: दोनों शर्तों की पूर्ति के कारण नीच भंग राजयोग की स्थिति बनती है। उच्चनाथ को समझने के

लिए हम एक और ग्रह का उदाहरण लेते हैं। मंगल, मकर राशि में उच्च के होते हैं अत: मकर के स्वामी शनि, मंगल के उच्चनाथ होंगे।

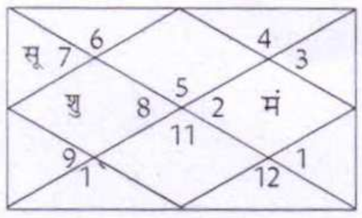

नीच भंग की दूसरी स्थान प्रथम स्थिति से मिलती जुलती है। इस के अनुसार नीच ग्रह का स्वामी एवं नीच ग्रह का उच्चनाथ एक दूसरे से परस्पर केन्द्र में हों।

इस उदाहरण में सूर्य अपनी नीच राशि, तुला में स्थित हैं। नीच राशि के स्वामी हैं शुक्र तथा नीच ग्रह सूर्य के उच्चनाथ हैं मंगल अत: शुक्र एवं मंगल के एक दूसरे से केन्द्र में स्थित होने से नीच भंग राजयोग बनेगा। यहाँ मंगल एवं शुक्र परस्पर सप्तम हैं अत: दोनों के परस्पर केन्द्र में होने के कारण नीच भंग राजयोग बन रहा है।

नीच भंग की तीसरी स्थिति यह है कि जिस राशि में नीच ग्रह स्थित हैं, उस राशि का स्वामी पूर्ण दृष्टि से नीच ग्रह को देखता हो तो नीच भंग राजयोग बनता है। यदि नीच ग्रह 6,8,12 में स्थित हैं तो नीच भंग राजयोग कम बली होगा परन्तु यदि इन दु:स्थानों के अतिरिक्त स्थानों पर होगा तो श्रेष्ठ नीच भंग राजयोग बनेगा।

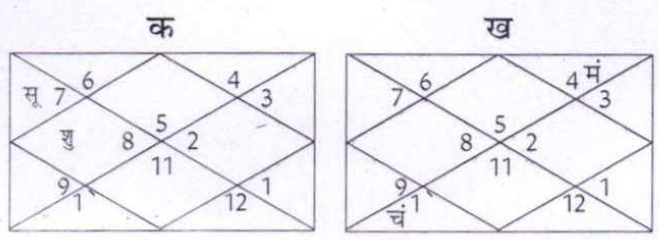

उदाहरण क में नीच राशि तुला के स्वामी शुक्र, सूर्य से 480 ही दूर रह सकते हैं अत:सूर्य का नीच भंग इस प्रकार संभव नहीं है। उदाहरण ख में मंगल नीच राशि कर्क में स्थित हैं। कर्क के स्वामी चन्द्रमा, पूर्ण दृष्टि से नीच ग्रह मंगल पर दृष्टिपात कर रहे हैं अत: मंगल का नीच भंग हो रहा है।

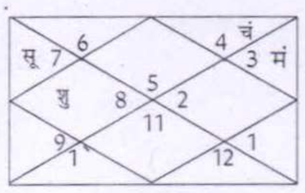

चतुर्थ नियम यह है कि नीच राशि का स्वामी अथवा नीच ग्रह का उच्चनाथ, जन्म लग्न या चन्द्र लग्न से केन्द्र में हो तो नीच भंग राजयोग बनता है। प्रथम स्थिति में हमने पढ़ा था कि यदि दोनों चंद्रमा से केन्द्र में होंगे, तभी नीच भंग राजयोग बनेगा जबकि इस स्थिति में दोनों में से एक के भी जन्म लग्न या चन्द्र लग्न से केन्द्र में होने पर नीच भंग बताया गया है। विभिन्न जन्मपत्रिकाओं के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि इससे राजयोग की श्रेष्ठता का निर्धारण होता है।

इस उदाहरण में सूर्य के उच्चनाथ मंगल न तो लग्न, न ही चन्द्र लग्न से केन्द्र में हैं परन्तु राशिनाथ शुक्र, जन्म लग्न से केन्द्र में स्थित हैं अत: नियमानुसार ग्रह का नीच भंग हो रहा है।

ऐसा माना जाता है कि नीचभंग राजयोग साधारण श्रेणी के नहीं होते। इस राजयोग वाले व्यक्ति विशेष पराक्रम से अपना स्थान बना पाते हैं। यह योग स्थायी प्रकृति के नहीं होते तथा योग प्राप्त होने के बाद कुछ वर्षों में उनका भ्रम भी हो सकता है परंतु एक कुण्डली में कई तरह के राजयोग हैं तो राजयोग के काल की वृद्धि हो सकती है।

प्राय: करके जो ग्रह नीच राशि में स्थित हैं, नीचभंग राजयोग होने पर उस ग्रह के महादशाकाल में विशेष फलों की प्राप्ति होती है। यदि नीच का ग्रह अस्त भी हो तब फलों की प्राप्ति में अवश्य कठिनाई आती है परंतु नीच के ग्रह को यदि अन्य ग्रह देखें तो उसके फलों में वृद्धि हो जाती है।

विपरीत राजयोग -

विपरीत राजयोग के संबंध में उत्तर कालामृत एवं फलदीपिका में कुछ भिन्नता है। हम यहाँ दोनों ग्रंथों में वर्णित विपरीत राजयोगों की चर्चा करेंगे।

उत्तर कालामृत के रचनाकार के अनुसार जन्मपत्रिका के अष्टाम भाव का स्वामी यदि छठे या बारहवें भाव में हों, छठे भाव का स्वामी यदि आठवें या बारहवें में हो, बारहवें भाव का स्वामी यदि छठे या आठवें भाव में हो और इन अरिष्टा भाव के स्वामियों का आपस में युति या दृष्टिा संबंध हो तथा अन्य भाव के स्वामियों से युति या दृष्टिा संबंध नहीं हो तो यश, प्रतिष्ठा, धन एवं राजसुख की प्राप्ति होती है। फलदीपिका में इस विषय में कुछ भिन्नता है। फलदीपिका के अनुसार षष्ठा, अष्टम व द्वादश भावों के

स्वामी आपस में स्थान परिवर्तन करें तो यह योग बनता है जैसे षष्ठेश, अष्टम भाव में तथा अष्टमेश, षष्ठ भाव में हो। इसी बात को मंत्रेश्वर महाराज ने फलदीपिका में योगों के माध्यम से व्यक्त किया है-

1. जन्मपत्रिका का छठा भाव अशुभ ग्रहों से युत या दृष्टा हो तथा छठे भाव का स्वामी दु: स्थान (6, 8, 12) में स्थित हो तो हर्ष योग होता है, जिससे जातक शत्रुजयी, यशस्वी, सुखी व सम्पन्न होता है।

2. अष्टम भाव का स्वामी 6, 8 या 12वें भाव में स्थित हो तो सरल योग बनाता है जो जातक को विख्यात, धनवान, आयुवान, निर्भय, विद्या एवं अन्य सुख सम्पदा से युक्त बनाता है।

3. जन्मपत्रिका में द्वादश भाव का स्वामी 6, 8 या 12वें भाव में स्थित होकर विमल योग का निर्माण करता है जो कि जातक को उत्तम कार्य करने वाला, यशस्वी, लक्ष्मीवान, लोकप्रिय एवं स्वतंत्र विचारधारा वाला बनाता है। उपरोक्त रचनाकारों के मतानुसार यह स्पष्ट है कि-

ज्योतिष में 6, 8 व 12वें को दु:स्थान माना गया है तथा ज्योतिष के सिद्धांत के अनुसार इन भावों के स्वामी जिस भाव में बैठें, उन भावों के फलों में कमी करते हैं अर्थात् अशुभ भावों के स्वामी ग्रह अशुभ भाव में बैठेंगे तो उस भाव के अशुभ फलों की कमी करते हैं अत: विपरीत राजयोग के पीछे यह तथ्य है कि एक अरिष्ट भाव का स्वामी यदि दूसरे अरिष्टा भाव में जाएगा या उसके भावेश से सम्बन्ध स्थापित करेगा तो उस भाव के फलों की हानि करेगा और जिसके कारण भाव की अरिष्टता में कमी आ जाएगी। जब कुण्डली में अशुभ भाव एवं भावेश के अशुभ फलों में कमी आती है तो कुण्डली के योगों का स्तर बढ़ जाता है, जिसके फलस्वरूप जातक जीवन में यश, ख्याति, राज्यपद एवं सुख, धन इत्यादि प्राप्त करता है।

उदाहरण - विपरीत राजयोग कुण्डली ज्योतिष के नियमानुसार अरिष्ट भाव के स्वामी की अरिष्ट भाव में स्थिति तथा भावेश से सम्बन्ध हो तो अशुभ फलों में कमी आ जाती है, जिसके फलस्वरूप जन्मपत्रिका के सामान्य शुभ योग भी अच्छे फल प्रदान करते हैं।

विपरीत राजयोग के अन्य उदाहरण

इस कुण्डली में बारहवें भाव के स्वामी आठवे भाव में बैठे हैं।

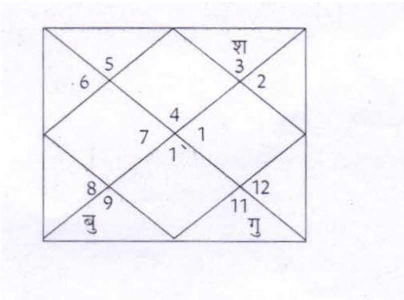

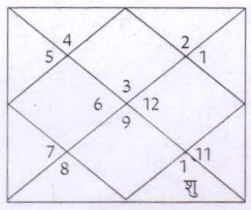

इस कुण्डली में आठवें भाव के स्वामी छठे भाव में बैठे हैं।

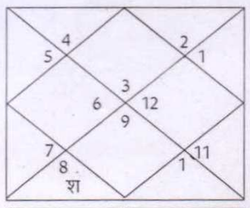

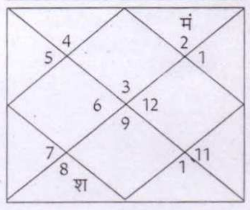

इस कुण्डली में छठे भाव के स्वामी बारहवें भाव में बैठे हैं। तथा आठवें भाव के स्वामी छठे भाव में बैठे हैं।

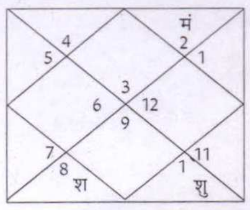

इस कुण्डली में बारहवें भाव के स्वामी आठवें में, आठवें के स्वामी छठे में एवं छठे के स्वामी बारहवें में बैठकर तीनों प्रकार के विपरीत राजयोग बना रहे हैं।

राजभंग -

ग्रहों की कृपा से एक ओर जहां व्यक्ति राजसुख भोगता है वहीं दूसरी ओर दूसरा व्यक्ति महान कष्ट में जीवन व्यतीत करता है।

कई बार जन्मपत्रिका में प्रथम दृष्टया ग्रह स्थिति ऐसी दिखाई देती है कि व्यक्ति राजा, सुखी एवं संपन्न होगा परन्तु होता इसके विपरीत है। ऐसी कौन सी ग्रह स्थितियां या योग हैं जो दूसरी स्थिति को जन्म देते हैं, उनका विश्लेषण करते हैं।

संस्कृत के आदिकवि कालिदास जी ने उत्तर कालामृत में राजयोग भंग होने के कुछ योगों का वर्णन किया है।

नीचस्थाश्च पराजितस्त्वरिगता: पापेक्षिताक्रान्तयुङ्

मध्यस्थानगताश्च वक्रविकलस्वर्भानुसंसर्गगा:।

भाकन्तस्थितखेचराश्च विबला: षष्ठाष्टरि: फाधिपा:

केन्द्रा धीश्वरकोणपेश्वरयुतास्तद योग भंगप्रदा:।

अर्थात् नीच ग्रह, ग्रह युद्ध में परास्त, शत्रु राशि में, पापग्रह से युत, दृष्ट, पापग्रह मध्य स्थित, वक्री ग्रह से युत, अस्त हुआ ग्रह, राहु से युक्त, भाव संधि में स्थित, सभी ग्रह निर्बल होते हैं। छठे, आठवें एवं बारहवें भाव के स्वामी ग्रह, केन्द्र तथा त्रिकोण के स्वामियों की युति से उत्पन्न शुभता को उनके साथ स्थित होकर भंग करने वाले होते हैं। यदि ग्रह षड्ाबल में कमजोर है तो वह राजयोग के पूर्ण परिणाम देने में असक्षम है।

जातक पारिजात के जातक भंगाध्याय में भी ऐसे कुछ योग कहे गए हैं जो राजयोग का भंग करते हैं।

मेषे जूकनवांशके दिनकरे पापेक्षिते निर्धन:

कन्याराशिगते यदा भृगुसुते कन्यांशके भिक्षुक:।

नीचक्र्षे त्वतिनीच भाग सहिते जातो दिवानायके

राजश्रेष्ठ कुला ग्रजो पि विगतश्रीपुत्रदाराशन:॥

अर्थात् यदि सूर्य, मेष राशि में हों किन्तु तुला नवांश में हो और पापग्रह से दृष्टा हों तो जातक निर्धन होता है।

शुक्र यदि कन्या राशि एवं कन्या नवांश में ही हों तो जातक के धन की निरन्तर हानि होती है। यद्यपि शुक्र वर्गोत्तम होंगे परन्तु अपनी नीच राशि में होने से ऐसा फल देने वाले होते हैं।

यदि तुला राशि में सूर्य, अपने परम नीच भाग में, तुला में 10 अंश पर हों तो जातक राजकुल में सबसे बड़ा होने पर भी राज्य या शासन प्राप्त नहीं कर पाता।

राजयोग के संदर्भ में लगभग सभी ज्योतिष गं्रथों में नवमेश-दशमेश के संबंध को विशेष राजयोगकारी माना है परन्तु उत्तर कालामृत्त में इस योग पर एक महत्त्वपूर्ण टिप्पणी दी है कि नवमेश व दशमेश की दूसरी राशि यदि आठवें अथवा ग्यारहवें भाव में पड़ जाए तो राजयोग का भंग होता है।

यहां संबंध को परिभाषित करना भी आवश्यक है।

लघु पाराशरी में चार प्रकार के संबंध वर्णित हैं।

क्षेत्र संबंध, दृष्टि संबंध, राशीश दृष्टि संबंध, युति संबंध।

यह संबंध क्रमानुसार कमजोर फलदायी होते हैं।

धर्मकर्माधिनेतारौ रन्ध्रलाभाधिपौ यदि तयो: संबंध मात्रेण न योगं लभते नर:।

इनमें सर्वोत्तम संबंध क्षेत्र संबंध है अर्थात्ा नवमेश एवं दशमेश का आपसी परिवर्तन। उससे कम फलदायी दृष्टिा संबंध माना है अर्थात्ा नवमेश-दशमेश को परस्पर पूर्ण दृष्टिा से देखे। तृतीय प्रकार के संबंध में नवमेश व दशमेश ग्रह जिस राशि में स्थित हैं, उनका स्वामी उनको पूर्ण दृष्टिा से देखे व चतुर्थ संबंध युति अर्थात्ा नवमेश-दशमेश जन्मपत्रिका में एक साथ किसी भाव में स्थित हों तो सबसे कम फलदायी होता है।

ज्योतिष ग्रंथों में लग्न के ही सबसे शक्तिशाली होने की पुष्टिा होती है। लग्न के पश्चात् चंद्रमा को माना गया है। यदि किसी जन्मपत्रिका में लग्न एवं चंद्रमा दोनों खराब स्थिति में हों तो राजयोग नष्टा हो जाता है अर्थात्ा लग्न व लग्नेश तथा चंद्रमा यदि अच्छी स्थिति में ना हों तो राजयोग भंग हो जाता है।

जन्मपत्रिका में मंगल, बुध, गुरु, शुक्र एवं शनि के केन्द्राधीष्ठित, स्वराशि अथवा उच्च राशि में होकर बनने वाले योग राजयोगकारी माने गए हैं परन्तु 'मानसागरी' के लेखकानुसार-

केन्द्रोच्चगा यद्यपि भूसुताद्या मार्तण्डशीतांशुयुता भवन्ति।

शार्वेतिनोर्वीपत्तिमात्मपाके यच्छन्ति ते केवलसफलानि॥

अर्थात्ा जो ग्रह पंच महापुरुष योग बना रहा है वह यदि सूर्य या चन्द्रमा के साथ हो तो यह योग भंग हो जाता है। उस ग्रह की महादशा अथवा अंतर्दशा में केवल सत्फल प्राप्त होता है, राजयोग नहीं।

सारावली में भी राजयोग के भंग होने में चंद्रमा की स्थिति पर ही सर्वाधिक जोर दिया गया है।

(क) यदि जन्मकुण्डली में सूर्य, मंगल, गुरु व शनि यदि एक साथ लग्न में हों व चद्रमा नीच के हों या उक्त चारों ग्रहों में से एक ग्रह भी नीच का होकर लग्न में हो व चंद्रमा नीच राशि में हों तो राजयोग भंग हो जाता है।

(ख) क्षीण चंद्रमा, यदि चर राशि के अंतिम नवांश में हों, स्थिर राशि के अष्टम नवांश में हों तथा द्विस्वभाव राशि के प्रथम नवांश में हों और किसी भी ग्रह से दृष्टा न हों तो राजयोग भंग हो जाता है।

(ग) घटोदये नीचगतैस्त्रिभिग्र्रहैबृहस्पतौ सूर्ययुते च नीचगे एकोऽपि नोच्चे त्वशुभे च सङ्गते प्रशस्ति नाशं शतशो नृपोद्भवाः।

अर्थात् यदि जन्म के समय में कुम्भ लग्न हो व तीन ग्रह नीच राशि में और नीचस्थ गुरु, सूर्य के साथ हों एवं एक भी ग्रह उच्चस्थ न हो तथा पापग्रह से युक्त लग्न हो तो सैकड़ों राजयोग भी नष्ट हो जाते हैं।

(घ) यदि जन्म के समय अपने नवांश में सूर्य हों व चंद्रमा अस्त हों तथा पापग्रहों से दृष्टी व शुभग्रहों से अदृष्ट हों तो जातक कुछ समय तक राज्य सुख प्राप्त करके भी आशाओं का त्याग करके, पीछे वन में जाकर दुःख प्राप्त करता है।

(ङ) परनीचं गते चन्द्रे क्षीणो योगो महीपतेः।

नाशमायाति राजेव दैवज्ञप्रतिलोमग:॥

अर्थात् यदि जन्म के समय में क्षीण चंद्रमा अपने परम नीचांश में हों तो राजयोग नष्टा हो जाता है, जैसे ज्योतिषी के विरुद्ध राजा नष्टा हो जाता है।

(च) यदि जन्म के समय में शुक्र, नीच नवांश में हों तो जातक को असीमित राज्य सुख प्राप्त होने पर भी राजयोग नष्टा हो जाता है।

विपरीत राजयोग भी श्रेष्ठा राजयोगदायी है परन्तु फलदीपिकाकार मंत्रेश्वर के अनुसार वह भंग भी होता है, उनके अनुसार षष्ठ, अष्टाम व द्वादश भावों के स्वामी यदि परस्पर स्थान परिवर्तन कर क्षेत्र संबंधी हों तो राजयोग न होकर 'दैन्य योग' बनेगा। जैसे-

(क) षष्ठेश-द्वादश में व द्वादशेश षष्ठ में हो।

(ख) अष्टमेश षष्ठ में व षष्ठेश अष्टम में हो।

(ग) द्वादशेश अष्टम में व अष्टमेश द्वादश में हो।

अत: जन्मपत्रिका का विश्लेषण करते समय केवल राजयोगों को देखकर भविष्य कथन उचित नहीं है, अपितु राजभंग की पुष्टि भी अनिवार्य रूप से कर लेनी चाहिए। जिस प्रकार बादल का एक टुकड़ा सूर्य के तेज को ढककर अंधकार कर देता है उसी प्रकार जन्मपत्रिका में उपस्थित राजभंग योग समस्त ऐश्वर्यों को पाने के बाद भी उनके भोग से वंचित कर देता है।

10.3 सारांश

अब तो आप लोग स्पष्टतया जान गये होंगे कि राजयोग में जन्म लेने वाले अत्यधिक सुख पातेहै साथ ही उसी प्रकार या तत्समान कष्ट की आ जाता है। लेकिन फिर भी योग के प्रभाव से उसको बहुत ही आसानी पूर्वक सामना करते हुए पुन: सफलता को प्राप्त कर लेते हैं।

इस प्रकार विवेचना के आधार पर हम यह कह सकते है कि विपरीत राजयोग भी श्रेष्ठ राजयोदायी है परन्तु फलदीकाकार मन्त्रेश्वर के अनुसार वह भंग भी होता है। उनके अनुसार पष्ठ, अष्टम, व द्वादश भावों के स्वामी यदि परस्पर स्थान परिवर्तन करके क्षेत्र संबंधी हो तो राजयोग न बनकर निर्धन योग प्राप्त होगा।

जैसे -

क पष्ठेश – द्वादश मे द्वादशेश पष्ठ में हो।

ख अष्टमेश ष्ठ में व ष्ठेश अष्टम में हो।

ग द्वादशेश अष्टम में च अष्टमेश द्वादश में हो।

अत: जन्मपत्रिका देखते समय केवल राजयोगों को देखकर भविष्य कथन नहीं कना चाहिए, राजभंग योग का भी विचार कर लेना चाहिए। नहीं तो समुचित फल को प्राप्त नहीं कर पायेगें।

10.5 शब्दावली

- केन्दाधिपति - 1, 4, 7, 10 भावों के स्वामी
- त्रिकोणाधिपति – 1, 9 , 5 स्थानों के स्वामी
- ग्रहयुद्ध – जब दो ग्रहों के युति से योग तो बनें, परन्तु दोनों ही ग्रह

  समान अंशों पर स्थित हो तो ग्रहों के ऐसी अवस्था उनके परस्पर युद्ध की अवस्था होती है। और उस युद्ध में किसी ग्रह में किसी एक ग्रह को पराजित होना पड़ता है।
- अस्तगत ग्रह – सूर्य के अंश से चन्द्र 2^0 , मंगल 17^0 , बुद्ध 13^0 , गुरू 11^0 , शुक्र 9^0 , शनि 15^0 , अंशान्तर कालांश से अस्तगत

  समझना चाहिए।
- विफलत्व – सूर्य के साथ चन्द्र, लग्न से चतुर्थ बुध, पच्जम भाव में गुरू,

  दूसरे में मंगल, छठे में शुक्र, सातवें में शनि हो तो विफल अर्थात् मौलिक फल के नाशक होते है।

10.6 संदर्भ ग्रंथ सूची

1 भारतीय ज्योतिष
लेखक नेमीचन्द्र शास्त्री
पैतीसवां संस्करण, 2002
प्रकाशन – भारतीय ज्ञानपीठ, 18 इन्स्टीट्यूशनल एरिया,
लोदी रोड, नई दिल्ली

2 लघुपाराशरी
टीकाकार – संपादक – रामयत्न ओझा संस्करण 2007

3 वहज्जातकम

4 फलदीपिका
लेखक मन्त्रेश्वर

इकाई - 11

ज्योतिष शास्त्र और जटिल रोगों का सम्बन्ध

इकाई संरचना

11.1. प्रस्तावना
11.2. उद्देश्य
11.3. विषय प्रवेश
11.4. रोगों का वर्गीकरण
11.5. रोग निर्णय के आवश्यक तथ्य
11.6. रोग विचार की पृष्ठभूमि
    11.6.1. भाव द्वारा रोग विचार
    11.6.2. राशि द्वारा अंगों का विचार
    11.6.3. ग्रहों द्वारा रोग-विचार
11.7. रोग-परिज्ञान के सिद्धान्त
11.8. असाध्य रोगों के योग
    11.8.1. अपस्मार (मिर्गी) रोग
11.8.2. दोषपूर्ण वाणी
    11.8.3. कर्णरोग
11.8.4. मानसिक रोग
    11.8.5. हृदयरोग
11.8.6. मधुमेह रोग
11..9. रोग-निवृति के उपाय
11.10. सारांश
11.11. शब्दावली
11.12. प्रश्नावलि
11.13. बोध प्रश्न
11.14. सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

11.1. प्रस्तावना

ज्योतिष् शास्त्र से संबंधित 11वीं इकाई है। इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि ज्योतिष शास्त्र और जटिल रोगों का संबंध क्या है इसके विषय में सम्यग रूप से वर्णन किया गया है।

ज्योतिष की दृष्टि से हम केवल नौ ग्रहों का प्रभाव मानते है। हमारे सौरमण्डल के ये नौ ग्रह विभिन्न जातकों की जन्म-पत्रिकाओं में विभिन्न प्रकार के प्रभाव प्रदर्शित करते है। इस इकाई में हम इन ग्रहों से उत्पन्न होने वाले रोगों के बारे में जानकारी प्राप्त करेगें एवं जान पायेगें कई रोग तो ऐसे है जो सूर्य और चन्द्रमा के विशेष प्रभाव के कारण ही होते है। इसके अतिरिक्त हम इसके द्वारा यह ज्ञान भी प्राप्त कर पायेगें कि इन रोगों का उपचार ज्योतिष विद्या से कैसे किया जाए।

11.2. उद्देश्य

इस ईकाई का अध्ययन करते हुए हम ज्योतिष शास्त्र और रोगों के सम्बन्ध के बारे में जान पायेंगे तथा यह बताने में सक्षम होंगे कि:-

1. ज्योतिष और चिकित्सा का क्या सम्बन्ध है ?

2. रोग निर्णय के तथ्य एवं उनका वर्गीकरण।

3. रोग विचार की पृष्ठभूमि कैसे बनी?

4. भावों के रोगो के अनुसार कारक तत्त्व एवं ग्रह के कारक तत्त्व क्या होंगे।

5. ग्रहों द्वारा उत्पन्न रोगों का उपचार कैसे किया जाए?

11.3. विषय प्रवेश

ज्योतिष जैसे विशिष्ट विषय के प्रति व्यापक जनसमुदाय की जागरूकता पिछले कई दशकों से लगातार बढ़ती जा रही है। अनेक लोग अध्ययन व प्रारम्भिक स्तर से काफी आगे बढ़कर इसे व्यवसाय के तौर पर भी अंगीकार कर रहे है। इसका क्षेत्र मनुष्य के जीवन में होने वाली हर गतिविधियों में अग्रसर हो रहा है। इन्हीं में से एक विषय मनुष्य के होने वाले रोगों से सम्बन्धित है। अन्य विषयों के भॉंति, रोगों के सम्बन्ध में भी जन्म कुण्डली के आधार पर पूर्व जानकारी प्राप्त की जा सकती है। चिकित्सा ज्योतिष सर्वत्र ही ज्योतिष पाठ्यक्रम का अभिन्न अंग है।

रोगों के सम्बन्ध में कुछ लोगों की धारणा है, कि वे आहार-विहार की अनियमितता के कारण उत्पन्न होते है। मनुष्य यदि इस पर समुचित नियन्त्रण रखे, तो वह स्वस्थ एवं दीर्घजीवी बना रहता है, किन्तु ज्योतिष शास्त्र की मान्यता इससे भिन्न है। वह रोगोत्पति का कारण केवल आहार विहार में अनियमितता को नहीं मानता क्योंकि यह बात अनेक बार प्रत्यक्ष रूप से सामने आई है कि नियमित जीवन जीने वाला व्यक्ति भी रोगों का षिकार बन जाता है। अन्य तथ्य यह भी है कि अनियमितता का रोग को कारण मान

लिया जाए तो आनुवांशिक रोग, महामारीजन्य रोग एवं दुर्घटनाजन्य रोगों की व्याख्या भली भॉति नही की जा सकती। यही कारण है कि आयुर्वेद शास्त्र ने भी रोग उत्पत्ति के कारणों का विचार करते हुए हमें ज्ञात कराया है कि कभी पूर्वाजित कर्मों के प्रभाव से, दोषों के प्रकोप से मानसिक एवं शारीरिक (वात, पित्त एवं कफ) रोग होते है।

आयुर्वेद और ज्योतिष का तो वैसे भी बड़ा गहरा सम्बन्ध है, कई औषधियाँ ऐसी है जिनको एक विशिष्ट समय में ही तैयार किया जाता है। सौरमण्ड़ल के सभी ग्रहों की विशेषताएँ है, वैसा ही लाभ कराने वाली औषधि तैयार की जानी है तो उस ग्रह विशेष की अनुकूल स्थिति में तैयार करना उसे और प्रभावोत्पादक बना देता है।

ज्योतिष शास्त्र के अनुसार जन्मकाल, प्रश्नकाल एवं गोचर में प्रतिकूल ग्रहों द्वारा रोग की जानकारी की जा सकती है। इसी मान्यता के अनुसार ज्योतिष जन्मकुण्डली के आधार पर यह घोषित करने में सक्षम है कि जातक को अमुक समय में अमुक रोग होगा और उसका परिणाम क्या निकलेगा।

11.4. रोगों का वर्गीकरण

ज्योतिष शास्त्र के ग्रन्थों में रोग विचार करने से पहले उनेक भेदों का विचार किया गया है। इस शास्त्र के अनुसार रोगों के दो प्रकार माने गये है - सहज एवं आगन्तुक।

1. सहज रोग:

मनुष्य के जो रोग जन्म से ही होते है उन्हें सहज रोग कहा गया है। ज्योतिष के अनुसार सहज रोग का कारण जातक के पूर्वजन्म के कर्म एवं माता-पिता द्वारा कर्म को माना गया है। जन्म से हुए रोगों का विचार गर्भाधान कुण्डली एवं जन्मकुण्डली से किया जाता है। उक्त कुण्ड़लियों में अष्टम को देखने वाले ग्रह एवं अन्य रोगों के द्वारा विचार किया जाता है। सहज रोग को दो भेदों में किया गया है -

अ. शारीरिक रोग: उदाहरण - लूलापन, लगंडापन, नपुंसक, बधिर, मूक आदि।

ब. मानसिक रोगः उदाहरण - जडता, उन्माद, पागलपन आदि।

2 आगन्तुक:

जन्म के बाद होने वाले रोगों को आगन्तुक रोग कहा गया है। इन रोगों का विचार कुण्डली में षष्ठ शव,षष्ठेश भाव में स्थित ग्रह तथा षष्ठ को देखने वाले ग्रहों द्वारा किया जाना चाहिए। आगन्तुक रोग भी दो प्रकार के होते है।

1. दृष्टिनिमित्तजन्य: पाप, अभिचार, घात, संसर्ग, महामारी आदि प्रत्यक्ष घटनाओं द्वारा उत्पन्न रोगों के दृष्टिनिमित्तजन्य रोग कहा जाता है।

2. अदृष्टिनिमित्तजन्य: बाधकग्रह योगों के द्वारा उत्पन्न रोग पूर्व जन्म में किए कृत्य के कारण उत्पन्न हुए हों उन्हें अदृष्टिनिमित्तजन्य रोग कहते है। ज्वर, अतिसार, आदि रोग इसी प्रकार के है।

11.5. रोग निर्णय के आवश्यक तथ्य

कुण्डली का अध्ययन करते समय चिकित्सा ज्योतिष को निम्नलिखित तथ्यों में विचार कर लेना चाहिए:

1. रोग उत्पत्ति का समय
2. निदान
3. तीव्रता
4. उपचार

उपर्युक्त तथ्यों का वर्णन तथा ज्योतिष एवं चिकित्सक की भूमिका निम्न प्रकार है -

1. रोग उत्पत्ति का समय: एक निपुण ज्योतिष जन्मपत्री का परीक्षण कर किसी व्यक्ति के रोग ग्रस्त होने के समय को सूचित कर सकता है, जिससे उनके बचाव के उपाय कर होने वाली व्याधि को टाला जा सके।
2. रोग का निदान: यह क्षेत्र चिकित्सकों का है। इस क्षेत्र में ज्योतिष सक्षम प्रतीत नहीं होते। इस क्षेत्र में दक्ष होने के लिए ऐसे चिकित्सों द्वारा शोध की आवष्यकता है जो ज्योतिष में प्रवीण हो।
3. रोग की तीव्रता: आधुनिक काल में एक परिपक्व चिकित्सक किसी रोगी के रोग की अवधि को आसानी से बता सकते है। इसी प्रकार एक दक्ष ज्योतिष भी सम्भवतः चिकित्सक से भी बेहतर रोग की तीव्रता तथा परिणाम बता सकने में सक्षम है।
4. उपचार: निःसन्देह आज चिकित्सक उपचार किसी भी ज्योतिषीय उपचार से अधिक श्रेष्ठ एवं विश्वसनीय है, परन्तु प्रतिकूल ग्रह-योग की अवस्था में जब चिकित्सीय विज्ञान मार्गदर्शन न कर पाए तब सहायता के लिए ज्योतिषीय उपचार के रूप में शान्ति की जानी चाहिए।

11.6. रोग विचार की पृष्ठभूमि

ज्योतिष शास्त्र में रोग का विचार करने के लिए तीन तत्त्व प्रधान है - (1) भाव (2) राशियाँ एवं (3) ग्रह। अतः ज्योतिष शास्त्र के अनुसार रोंगों का विस्तार से विवेचन करने के पूर्व उक्त ग्रह, राशि एवं भाव का विचार कर लेना आवष्यक है।

11.6.1. भाव द्वारा रोग विचार:

कुण्डली में लग्न आदि भावों के द्वारा मनुष्य के जीवन में घटित होने वाली प्रत्येक घटना का पूर्वानुमान किया जाता है। यह ध्यान देना चाहिए कि शरीर का दायां भाग कुण्डली के प्रथम से सप्तम् भाव तक तथा बायां भाग सप्तम् से प्रथम भाव तक के भावों से प्रदर्षित होता है। किस भाव से कौन से रोग का विचार किया जाए वे निम्न है: -

(1) प्रथम: इस भाव से सिर दर्द, मानसिक रोग, नजला एवं दिमागी कमजोरी, शरीर, बाल, रूप, त्वचा, निद्रा रोग से छुटकारा, आयु, बुढ़ापा तथा कार्य करने की योग्यता का इस भाव से मूल्याकन किया जाता है।

(2) द्वितीय: इस भाव से मृत्यु का विचार होता है। यह भाव नेत्र (दायीं), जिह्वा, मुखरोग, नाक, वाणी, नाखुन, गले की खराबी का प्रतिनिधित्व करता है।

(3) तृतीय: इस भाव से कण्ठ, गर्दन, गला, भुजाएं, श्वसन प्रणाली, भोजन नलिका, अंगुष्ठ से पृथक अंगुली तक का भाग, स्वप्न, मानसिक अस्थिरता, फेफडें के रोग आदि का विचार किया जाता है।

(4) चतुर्थ: छाती (वक्षस्थल) हृदय एवं पसलियों में होने वाले रोग, पागलपन, एवं अन्य मानसिक विकारों का विचार इसी भाव से किया जाता है।

(5) पंचम: इस भाव से मन्दाग्नि, अरूचि, पित्तरोग, पित्त की थैली, तिल्ली, अग्न्याशय, मन, विचार, गर्भावस्था नाभि एवं गुर्दे के रोगों का विचार किया जाता है। यह भाव पेट के सभी रोगों का प्रतिनिधित्व करता है।

(6) षष्ठ: इस भाव से छोटी आंत, अपेन्डिक्स, गुर्दा, घाव, क्षयरोग, कफजनित रोग, छाले वाले रोग (छोटी माता), विष, हर्निया, अमाशयी नासूर (व्रण) का विचार किया जाता है।

(7) सप्तम: इस भाव से प्रमेह, मधुमेह, प्रदर, पथरी, बडी आत, गर्भाषय, अण्डाषय, वीर्य थैली, मूत्रनली, तथा वस्ति में होने वाले रोगों का विचार किया जाता है।

(8) अष्टम भाव: इस भाव से गुप्त रोग, वीर्य विकार, भगंदर, बाहरी जननांग, अंग-हानि, चेहरे के कष्ट दीर्घकालिक या असाध्य रोग, तीव्र मानसिक वेदना का विचार किया जाता है।

(9) नवम: इस भाव से स्त्रियों के मासिक धर्म सम्बन्धी रोग, रक्त विकार, वायु विकार, कूल्हे का दर्द, जांघ की रक्त वाहिनियां एवं मज्जा रोगो का विचार होता है।

(10) दशम: इस भाव से गठिया, चर्मरोग, घुटने का दर्द, एवं अन्य वायु रोगों का विचार किया जाता है।

(11) एकादश:इस भाव से पैर में चोट, पैर की हड्डी टूटना, पिंडलियो में दर्द, शीत विकार एवं रक्त विकार का विचार किया जाता है।

(12) द्वादश: इस भाव से पैर, बांयी आंख, निद्रा में बाधा, एलर्जी, मानसिक असंतुलन, अस्पताल में भर्ती होना दोषपूर्ण पोलियों एवं शरीर में रोगों के प्रतिरोध की क्षमता की विचार किया जाता है।

द्रेष्काण के आधार पर अंगों के प्रतिनिधि भाव:

रोग के विषय में द्रेष्कारण की भूमिका महत्त्व मानी गई है। मनुष्य के शरीर के किस अंग में घाव, चोट या गांठ होगी। इसका विचार करने के लिए प्राचीन आचार्यो ने द्रेष्काण के आधार पर शरीर के तीन भागों की कल्पना कर लग्न आदि भावों को शरीर के विभिन्न का प्रतिनिधि माना है। तीन द्रेष्कोण शरीर के तीन भागों का प्रतिनिधित्व करते है। पहला भाग सिर से मुँह तक, दूसरा गर्दन से नाभि, तीसरा वस्ति से पैर तक। वराहमिहिर तथा अन्य ग्रन्थकारों के अनुसार कुण्डली में पहला, दूसरा व तीसरा द्रेष्काण उदित होने पर कुण्डली के विभिन्न भावों द्वारा निरूपित शरीर के अंग, प्रस्तुत उदाहरण कुंडली में दर्षाये गये है -

प्रथम द्रेष्काण

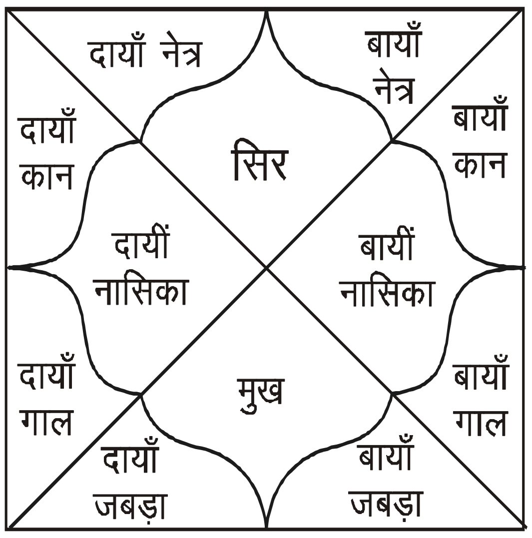

द्वितीय द्रेष्काण

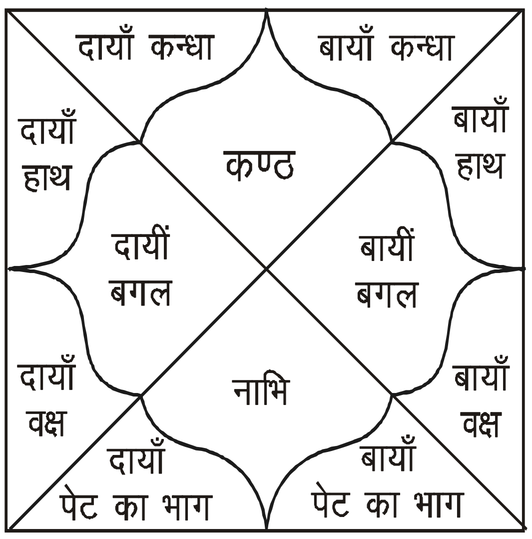

तृतीय द्रेष्काण

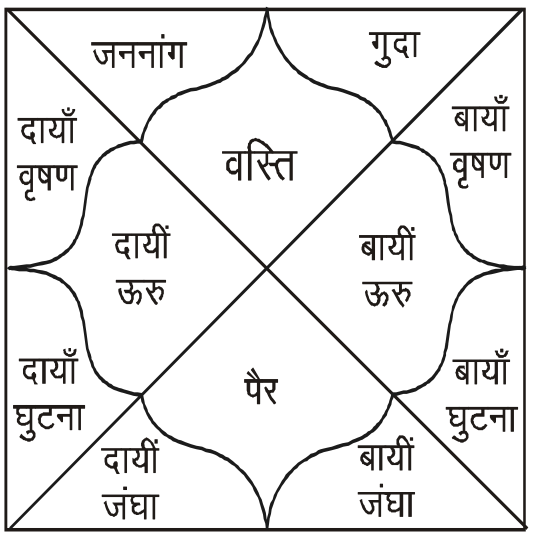

11.6.2. राशि द्वारा अंगों का विचार

ज्योतिष शास्त्र के ग्रन्थों में कालपुरूष शब्द का प्रयोग किया गया है। समस्त भचक्र को आवृत्त करते हुए एक अलौकिक मानव की कल्पना की गई है। भचक्र की विभिन्न राशियां उस कालपुरूष के शरीर पर स्थित है जिसके आधार पर उसके अंग रोग ग्रस्त या स्वस्थ है, यह जाना जा सकता है।

इस अंग विभाजन का यदि विस्तारपूर्वक अवलोकन किया जाए, तो यह कहा जा सकता है कि मेष आदि 12 राशियाँ मनुष्य के शरीर के निम्नलिखित अंगो का प्रतिनिधत्व करती है।

कालपुरूष के शारीरिक अंग:

क्र. सं.	राशि	शारीरिक अंग
1	मेष	मस्तिष्क, सिर के बाल, सिर
2	वृष	चेहरा (आंख, नाक, कान, दांत)
3	मिथुन	कंठ, कोहनी, भुजा, कंधा, वक्ष स्थल
4	कर्क	हृदय, फेफडे, एवं श्वासनली
5	सिंह	पेट, आंते, जिगर, नाभि
6	कन्या	कमर एवं आंते
7	तुला	बस्ति, मूत्राषय, गर्भाषय का ऊपरी भाग
8	वृश्चिक	गुप्तांग, गर्भाषय, गुदा
9	धनु	ऊरू
10	मकर	जानु एवं घुटना
11	कुम्भ	जंघा, पिडली
12	मीन	टखना, पैर, पादतल एवं पैर की अंगुलियां

रोग विचार के प्रसंग में नक्षत्रों का परिचय:

भगवान विष्णु का नक्षत्र शरीर

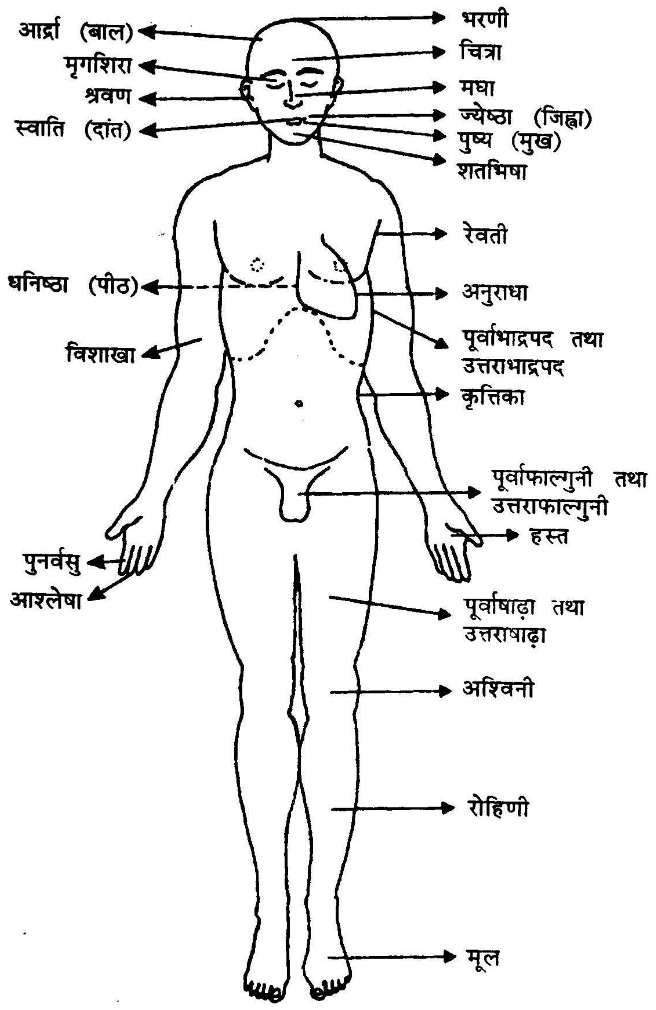

जिस प्रकार शरीर के विभिन्न अंग भचक्र की 12 राशियों से प्रदर्षित होते है, उसी प्रकार वे 27 नक्षत्रों से भी प्रदर्शित होते है। इस विषय पर सर्वोत्तम वर्णन पुनः वामनपुराण में संवाद के रूप में भगवान विष्णु के शरीर को लेकर है। शरीर के अंगों के प्रतिनिधित्व करने वाले नक्षत्र उनसे सम्बन्धित रोग उत्पन्न करते है। भगवान विष्णु के नक्षत्र शरीर का वर्णन उपर दिया गया है।

11.6.3. ग्रहो द्वारा रोग विचार

जैसे भचक्र की भिन्न-भिन्न राशियों तथा नक्षत्रों का अधिकार क्षेत्र शरीर के अंगों पर है, ठीक उसी प्रकार ग्रह भी शरीर के विभिन्न अंगों से सम्बन्धित है। कौन सा ग्रह किस तत्त्व का प्रतिनिधित्व करता है? शरीर

के किन अंगों को प्रभावित कर कौनसा रोग उत्पन्न कर सकता है इन बातों का विचार यहां पर संक्षिप्त रूप से देने का प्रयास किया गया है:-

ग्रह	तत्त्व	सप्त धातु	अंग	शरीर के उपच्व	शारीरिक शक्ति
सूर्य	अग्नि	अस्थि	ह्रदय	सिर	प्राणादार
चंद्रमा	जल	रक्त	मन	मुख	पागलपन
मंगल	अग्नि	मज्जा	दृष्टि	कान	जलन, सूजन
बुध	पृथ्वी	चर्म	नाम	पेट	नसें
गुरू	आकाष	चर्बी	शरीर	गुर्दा	स्थूलता
शुक्र	जल	शुक्राणु	जिह्वा	नेत्र	अंर्तरस
शनि	वायु	स्नायु	कान	पैर	जोड

ग्रहो के कारक तत्त्व एवं संबंधित रोग:

सूर्यः

इसकी पित्त प्रकृति है। इनका अधिकार क्षेत्र ह्रदय, पेट, अस्थि तथा दाहिनी आंख है। सूर्य के अधिकार क्षेत्र में सिरदर्द, गंजापन, अतिचिड़चिड़ापन, ज्वर, दर्द, जलना, पित्त की सूजन से होने वाले रोग, ह्रदय रोग, नेत्र रोग, पेट की बीमारियां, अस्थि रोग, कुछ त्वचा रोग, गिरने से तथा शस्त्र से चोट, विषपान, रक्त संचार में गड़बड़ी, मिरगी, कुष्ठ रोग आदि हैं।

चन्द्रः

वात तत्त्व सहित इसकी प्रकृति कफ है। यह व्यक्ति के मनकी स्थिरता तथा पुष्टता को प्रतिबिम्बित करता हैं, यह मानसिक रोग अशान्ति, घबड़ाना, अतिनिद्रा तथा सामान्य जड़ता का प्रतिनिधित्व करता है।

कफ सम्बधी रोग, क्षय रोग, जलोदर रोग, अजीर्ण, अतिसार, रक्ताल्पता, शारीरिक तरल बहाव, रक्त विषाक्तता, कम्प ज्वर, ज्वर पूर्व कंपकंपी, कुछ त्वचा रोग, कामला (पीलिया), जल तथा जलीय जन्तुओं से भय, पशुओं के सींगों से होने वाले घाव, इत्यादि का प्रतिनिधित्व चन्द्र करते हैं। चन्द्र तथा मंगल मिलकर स्त्रियों की प्रजनन प्रणाली के रोग चन्द्र के कारण होते है।

मंगल:

मंगल की पित्त प्रकृति है। यह आक्रामक तथा ऊर्जावान हैं। कुण्डली में मंगल की स्थिति जातक के स्वास्थ्य, तेज एवं चेतना की प्रबलता को प्रतिबिम्बित रकती है। इनका अधिकार क्षेत्र है सिर, अस्थि मज्जा, पित्त, हीमोग्लोबिन कोषिकाएं, एण्डोमीट्रियम (जहाँ ''बीज'' प्रत्यारोपण से शिशु बनता है) है। मंगल दुर्घटना, चोट, शल्य क्रियाएँ, जल सम्बन्धी, रक्त विकार, उच्च-नीच रक्तचाप, पित्तचाप, पित्तजन्य सूजन तथा उसके कारण होने वाला ज्वरपित्ताशय की पथरी, शस्त्र से चोट, विषाक्तता, अत्यधिक प्यास,

फफोले सहित बुखार, मानसिक विचलन, नेत्र, त्वचा पर खुजली, अर्ष (बवासीर), गर्भाषय के रोग, प्रसव तथा गर्भपात का कारण है।

बुधः

बुध के स्वभाव में तीनों प्रकार की प्रवृत्ति है जैसे वात, पित्त कफ। बुध का सम्बन्ध जातक की बुद्धि से है। प्रतिकूल बुध, पापी चन्द्र के साथ मिलकर मानसिक विचलन का कारण भी बन सकता है। इसका अधिकार क्षेत्र त्वचा, गला, नाक, फेफड़ा तथा अग्रमस्तिष्क है। यह धैर्यहीनता, अभद्र भाषा, दोषपूर्ण वाणी, कटु प्रकृति (स्वाभाव) चक्कर आना, श्वेत कुष्ठ, नपुंसकता, नेत्र रोग, नाक-कान-गले का रोग, बहरापन, तथा दुःस्वप्न को इंगित करता है।

गुरूः

गुरू की कफ प्रकृति है। अत्यधिक शुभ ग्रह होने के कारण यह जातक को रोग से बचाता है तथा कुण्डली में अनेक पाप को नष्ट करता है। इसका अधिकार क्षेत्र यकृत, पित्त की थैली, तिल्ली, अग्नाशय का कुछ भाग, कान तथा शरीर में चर्बी पर है। गुरू, मोटापा, कर्ण रोग, मधुमेह इत्यादि को इंगित करता है। मन्दगामी ग्रह होने के कारण इसके द्वारा होने वाले रोग दीर्घकालीक होते है। गुरू आलस्य का भी कारक है।

शुक्रः

शुक्र में वात तथा कफ की अधिकता होती है। यह व्यक्ति की यौन क्रियाओं का प्रतिनिधित्व करता है। इसका अधिकार क्षेत्र चेहरा, दृष्टि, वीर्य, जननांग इत्यादि पर है। यह आन्त्र, आन्त्रपुच्छ तथा अग्नाषय के कुछ भाग का भी कारक है।

यह एक जलीय ग्रह है और इसका सम्बन्ध शरीर की हारमोनल प्रणाली से है। चेहरे के रोग, नेत्र रोग, मोतियाबिन्द, वेतकुष्ठ रोग, मैथुनजनित रोग, मधुमेह, गुर्दे एवं हार्मोन सम्बन्धी विकारों को इंगित करता है।

शनिः

शनि की मुख्यतः वात तथा कफ प्रकृति है। यह मन्दचारी ग्रह होने के कारण इससे होने वाले रोग असाध्य या अतिदीर्घकालिक होते है। शनि का अधिकार क्षेत्र पैर, नाड़ी, बड़ी आत का अंतिम भाग, लसिकावाहिनी तथा गुदा है। यह दीर्घकालिकता, असाध्ययता, उन्माद, पक्षपात, पागलपन, उल्टी संबंधी रोग, कैंसर आदि को इंगित करता है।

राहुः

राहु कार्य मन्दगति से करना, फूहड़ता, हिचकी, उन्माद, अदृष्य भय, कुष्ठ, शक्तिहीनता, अर्शरोग, दीर्घकालिक व्रण तथा छाले, असाध्य रोग, विषाक्ता, सर्पदंश, तथा पैरो के रोग को राहु इंगित करता है। चन्द्र के साथ मिलकर राहु विभिन्न प्रकार के भय देता है। शनि के सदृश होने के कारण यह रोगों की दीर्घकालिकता तथा असाध्यता को भी इंगित करता है।

केतुः

राहु के द्वारा इंगित सभी रोग केतु भी पैदा करता है। इसके अतिरिक्त इससे होने वाले रोग अनिश्चित कारण वाले, महामारी, छाले युक्त ज्वर, जहरीले संक्रमण से होने वाले संक्रामक रोग, आन्त्रकृमि, बहरापन, दोषपूर्ण वाणी, रोग निदान में त्रुटि है। मंगल के सदृष होने के कारण केतु शल्यक्रिया को इंगित करता है।

11.7. रोग-परिज्ञान के सिद्धान्त

मनुष्य अपने स्वाभावानुसार कोई भी ग्रह रोगकारक नहीं हुआ करता। किन्तु जब वह कुछ विशेष परिस्थितियों में मनुष्य के शारीरिक या मानसिक स्वास्थ्य में विकार उत्पन्न होने की सूचना देता है, तब वह रोगकारक कहलाता है। फलित ज्योतिष में षष्ठभाव रोगभाव कहलाया गया है। अतः षष्ठभाव में स्थित ग्रह या षष्ठभाव से सम्बन्धित ग्रह रोगोत्व का कारण बनता है, परन्तु इसके अतिरिक्त भी निम्नलिखित हेतु ज्योतिष शास्त्र में महत्त्वपूर्ण माने गये है -

1. रोग (षष्ठ) भाव का प्रतिनिधित्व।
2. अष्टम या व्यय भाव का प्रतिनिधित्व।
3. रोग भाव में स्थिति।
4. लग्न में स्थिति या लग्न का प्रतिनिधित्व।
5. नीचराशि, शत्रु राशि में स्थिति या निर्बलता।
6. अवरोहीपन (उच्च राशि से आगे बढ़कर नीचभिमुख होना)
7. क्रूर षष्ठ्यंष में स्थिति।
8. पाप ग्रह का प्रभाव।
9. कारक तत्त्व या मारकतत्त्व।

11.8. असाध्य रोगों के योग

11.8.1. अपस्मार रोग (मिर्गी):

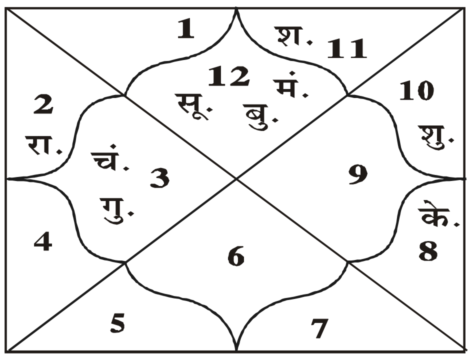

कुण्डली में निम्नलिखित योग हों तो अपस्मार बीमारी होने का डर होता है:-

1. शनि, मंगल, सूर्य, आठवें घर में हो।
2. शनि, बुध, मंगल लग्न में हो तो।
3. छठे घर में शनि, राहु अथवा केतु से युक्त हों तो।
4. चन्द्रमा से राहु छठें, आठवें अथवा बारहवे भाव में हो तो।
5. शनि वृश्चिक में हो और मंगल मिथुन राशि में हो।
6. बुध शनि से युक्त हो तो।
7. चन्द्रमा पर शनि और राहु अथवा केतु की दृष्टि हो तो।
8. लग्न एवं सूर्य पर शनि तथा राहु की दृष्टि हो तो जातक अपस्मार रोग से पीडित होता है।

उदाहरण - यह कुण्डली एक लडके की है जो अपस्मार रोग का षिकार हुआ। लग्न में सूर्य, मंगल, बुध स्थित हैं तथा लग्न को केतु देख रहा है। चन्द्रमा से राहु बारहवें घर में स्थित है और वाणीकारक बुध, सूर्य व मंगल से पीड़ित है।

11.8.2. दोषपूर्ण वाणी (हकलाना):

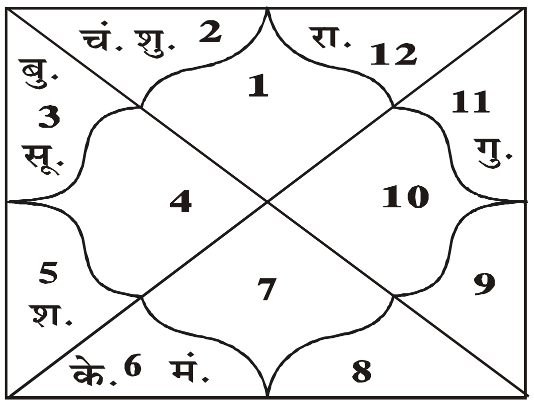

जब द्वितीय स्थान तथा वाणी का कारक बुध पाप ग्रहों से युक्त हो अथवा इन पर पापी ग्रहों की दृष्टि हो तो व्यक्ति बोलने में लडखडाता है अर्थात् उसकी वाणी में कोई त्रुटि होगी।

उदाहरण:

यह कुण्डली एक डॉक्टर की है जो हकलाकर बोलता है। द्वितीय भाव तथा द्वितीयेष शुक्र पर शनि की पूर्ण दृष्टि है। द्वितीय भाव पर मंगल युक्त केतु की भी नवम पूर्ण दृष्टि है। वाणी का कारक बुध अस्त है।

(1) जब द्वितीयेश षष्ठेष के साथ युक्त हो और उस पर शनि की दृष्टि हो तो व्यक्ति मूक (गूंगा) होगा।

(2) अगर बुध और षष्ठेष लग्न में हो तो व्यक्ति मूक होगा।

(3) अगर बुध मकर अथवा कुम्भ मे हो और उस पर शनि की दृष्टि हो तो जातक हकलाकर बोलेगा।

11.8.3. कर्ण रोग:

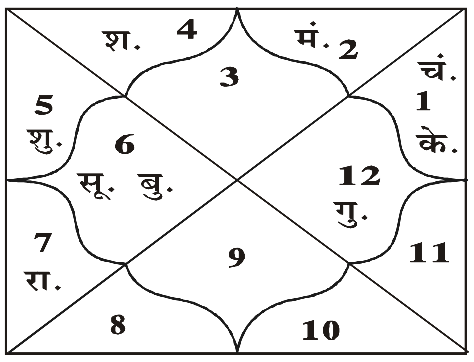

कान की बीमारी का निर्णय इस प्रकार से लेना चाहिए:

1. बुध शनि से चौथे भाव में हो तथा षष्ठेष किसी त्रिक भाव में हो।
2. बुध तथा शुक्र की युति बारहवें भाव में, बायें कान की दोषपूर्ण श्रवणक्रिया को दर्षाती है।
3. तीसरे, गयारहवे, पांचवे या नवें भाव में पाप ग्रह शुभग्रहों से दृष्ट न हों।

नोट: 3/9 भाव युग्म पर पाप ग्रह दांए कान को तथा 5/11 भाव युग्म पर बांए कान को क्षति पहुंचाते है।

4. नीच राशि में शुक्र, राहु के साथ हो।
5. बुध तथा षष्ठेष चतुर्थ किसी त्रिकस्थान में शनि के द्वारा दृष्ट हो।
6. बुध तथा षष्ठेष चतुर्थ भाव में हों और शनि लग्न में हो।
7. सूर्य तथा बुध की युति तीसरे, छठे या ग्यारहवें भाव में हो।

1. बुध: सुनने तथा किसी भी प्रकार का संचार का कार्य बुध करता है। बली बुध शुभ ग्रहों के प्रभाव में अच्छी श्रवण शक्ति देता है। पीड़ित हो तो विपरीत फल होते है।
2. तीसरा भाव: कुण्डली में तीसरे भाव का सम्बन्ध कान से हैं। तीसरे भाव तथा तृतीयेष पर शुभ प्रभाव हों तो अच्छी श्रवण शक्ति देते है।
3. ग्यारहवां भाव: तीसरा भाव तथा तृतीयेश दायें कान को (श्रवण प्रणाली के अतिरिक्त) एवं एकादश भाव तथा एकादशेश बाएं कान को इंगित करते है।

बुध, तीसरा भाव, तृतीयेश, एकादष भाव तथा एकादशेश पर शुभ तथा अशुभ प्रभावों के अनुसार ही कान की श्रवण शक्ति होती है।

उदाहरण: यह कुण्डली एक लडकी की है जो बचपन में ही बहरी हो गई थी। बायें कान में बहुत कम श्रवण शक्ति तथा दायें कान से बिल्कुल बहरी हो गई थी बुध की सूर्य के साथ युति है तथा वह अष्टमेश शनि एवं वक्री गुरू के द्वारा दृष्ट है।

11.8.4. मानसिक रोग:

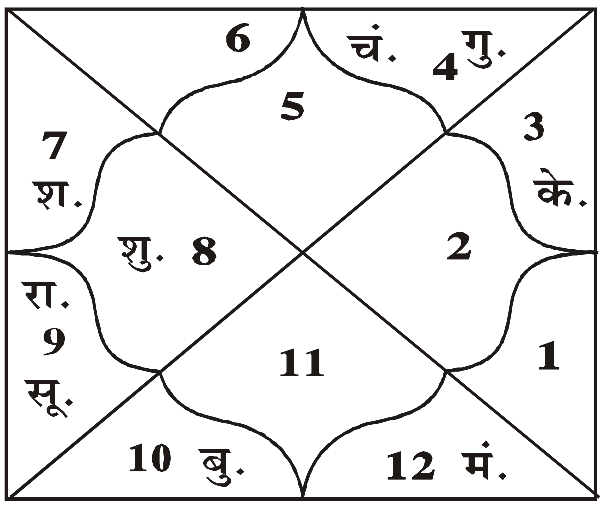

अधिकतर मानसिक असन्तुलन तभी होता है जब चन्द्र पीड़ित हो, चन्द्र तभी पीडित होता है जब वह दुर्बल हो, छठे, आठवें या बारहवें भाव में स्थित हो तथा पाप ग्रहों से युक्त या दृष्ट हो। विभिन्न ग्रहों से पीडित चन्द्रमा का फल इस प्रकार बताया गया है -

(1) सूर्य: तीक्ष्ण स्वभाव झगडालू प्रवृत्ति।

(2) मंगल: तीक्ष्ण स्वभाव आक्रमक, हिंसक।

(3) शनि: तीव्र अवसाद, सनद उदासी युक्त पागलपन

(4) राहु: चालाक, व्यवहार में विसंगति, अकारण भय, आत्मघाती प्रवृत्ति।

(5) केतु: सनक/आत्मघाती प्रवृत्ति, भय, दूसरों पर अकारण संदेह करना।

उदाहरण:

यह कुण्डली एक स्त्री की है जो झगडालू प्रवृत्ति है तथा कभी-कभी अवसाद तथा आत्मघाती दौरे पड़ते है। चन्द्र बारहवें स्थान में, वक्री अष्टमेश के साथ है तथा षष्ठेष शनि के द्वारा दृष्ट है। बुध छठे स्थान में द्वादशेश तथा वक्री अष्टमेश के द्वारा दृष्ट है। गुरू स्वयं वक्री अष्टमेश तथा पंचमेश है जो शनि के द्वारा दृष्ट है। बुद्धि तथा चिंतन का पांचवाँ भाव है जिसमें सूर्य तथा राहु के बैठने से तथा शनि की दृष्टि से पंचम भाव काफी पीडित है।

11.8.5. हृदय रोग:

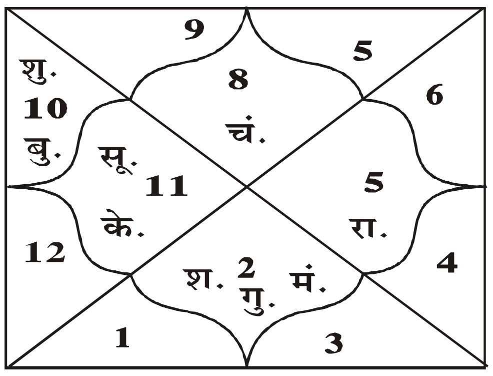

जन्मपत्रिका में हृदय रोग को निष्चित करने के लिए निम्नलिखित बिन्दुओं को निरीक्षण करना चाहिए। सूर्य पर पाप प्रभाव, हृदय रोग के लिए सबसे महत्त्वपूण कारण है।

सूर्य पर पाप प्रभाव निम्न प्रकार से हो सकता है।

(1) मंगल तथा शनि के साथ युति या दृष्टि द्वारा और राहु-केतु अक्ष द्वारा।

(2) नीच राशि में होना।

(3) पापकर्तरी अर्थात् दोनों ओर पाप ग्रह का होना।

(4) छठे, आठवें या बारहवें भाव/भावेषों से सम्बन्ध होना।

(5) सिंह राशिश पर पाप प्रभाव: पाप युति अथवा दृष्टि द्वारा।

(6) पंचम भाव पर पाप प्रभाव: नैसर्गिक पाप ग्रहों की अथवा त्रिक भावेषों से युति अथवा दृष्टि।

(7) पंचमेश पर पाप प्रभाव: नैसर्गिक पाप ग्रहो से, त्रिक भावेषों से, या वक्री ग्रहों से।

(8) चतुर्थ भाव: लग्न अथवा सूर्य से चतुर्थ भाव पर पाप प्रभाव वक्ष में जटिलताएं या हृदय रोग की शल्य चिकित्सा का सूचक है।

पंचम भाव, पंचमेश तथा सूर्य पर शुभ प्रभावों की बहुलता सुरक्षित चिकित्सा तथा रोग मुक्त होने का सूचक है। पर्याप्त पाप प्रभाव के रहते, उन ग्रहों की दषाएं जो सूर्य, पंचम भाव या पंचमेश से युक्त हों, हृदय रोग देती है। पाप ग्रह की महादषा में पंचम भाव में बैठे वक्री ग्रह की अन्तर्दषा विशेष रूप में महत्त्वपूर्ण है।

उदाहरण: यह कुण्डली एक ऐसे व्यक्ति की है जिसकी हृदयगति रूक जाने के कारण मृत्यु हो गई। कुण्डली में चतुर्थ भाव तथा सूर्य पापी केतु से युक्त है तथा राहु एवं शनि की पूर्ण दृष्टि से पीड़ित है। सप्तम स्थान में शनि, मंगल और गुरू का योग है। इन्ही कारणों से जातक का हृदयाघात (हार्ट फेल) हुआ और मृत्यु हो गई। मृत्यु के समय अष्टमेश बुध की महादषा में केतु की अन्तर्दषा चल रही थी।

11.8.6. मधुमेह या प्रमेह:

यह षरीर में शर्करा के चयापचय का रोग है। रक्त तथा शारीरिक तन्तुओं में अधिक शर्करा होती है परन्तु इसका उपयोग नहीं हो पाता। इन्सुलिन नामक हार्मोन की कमी के कारण शरीर में शर्करा का स्तर बढ़ता है तथा जटिलतायें उत्पन्न होती है जो वास्तव में शरीर के सभी अंगों पर प्रभाव डालती है।

मधुमेह के योग:

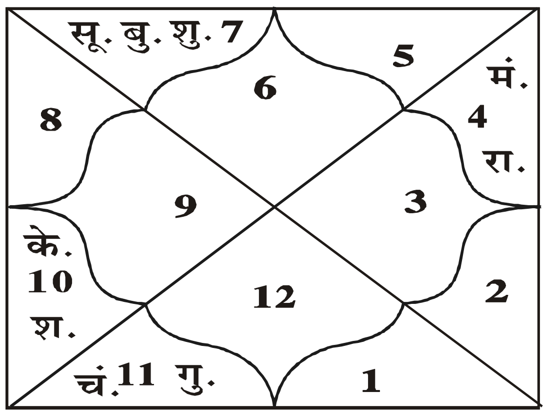

मधुमेह के लिए निम्नलिखित योग बताए गये है -

1. गुरू नीच राशि, या छठे, आठवें या बारहवें भाव में हो।
2. शनि तथा राहु, गुरू को युति या दृष्टि द्वारा पीड़ित करते हो।
3. अस्त गुरू राहु-केतु अक्ष पर हो।
4. शुक्र छठे भाव में गुरू के द्वारा द्वादष भाव से दृष्ट हो।
5. पंचमेश 6, 8 तथा 12 भावेषों से युक्त हो।
6. वक्री गुरू त्रिकभाव में पीड़ित हो।

यकृत और अग्नाशय इन्सुलिन का उत्पादन करता है। यह दोनों उदर के ऊपरी भाग में स्थित है और यह पंचम भाव के अधिकार क्षेत्र में आते है। यकृत तथा अग्नाशय के एक भाग का कारक गुरू है। शेष अग्नाशय का कारक शुक्र है। शुक्र शरीर की हार्मोन प्रणाली का भी कारक है। अतः इस प्रकार मधुमेह के मामले में गुरू, शुक्र तथा पंचम भाव की भूमिका रहती है।

उदाहरण कुण्डली :

इस स्त्री को मधुमेह रोग हुआ, जिसका गुरू षष्ठ भाव में अष्टमेश नीच मंगल से दृष्ट है। शुक्र, द्वादशेश नीच सूर्य से युक्त तथा षष्ठेष शनि व अष्टमेश मंगल से दृष्ट है। पंचम भाव तथा पंचमेश राहु-केतु और मंगल से पीड़ित है।

11..9. रोग-निवृति के उपाय

जिस प्रकार गर्मी, सर्दी, बरसात-तूफान, बाढ़, ज्वारभाटा आदि प्राकृतिक नियमानुसार इस संसार में आते है, उसी प्रकार यह प्राकृतिक नियम है कि ग्रह आपने शुभ या अशुभ फल को परिस्थितियों के अनुसार प्राणियों को अवष्य देंगे। प्राकृतिक विपदाओं से बचने के लिए मानव सदा से ही उसके निवृत्ति के उपायों को खोजने में सक्षम रहा है तथा नित्य निरन्तर नये उपायों की भी खोज जारी है।

इसी दृष्टिकोण से विद्वान् आचार्यो ने शास्त्रों में ग्रहों के अशुभ प्रभाव से छुटकारा पाने के लिए अरिष्ट शान्ति या ग्रह शान्ति का विधान प्रकट किया है। जो ग्रह आपके लिए किसी समय विशेष में कष्ट कारक हो रहें हों, तब उनकी निवृत्ति के हेतु उनके लिए कुछ दान, मन्त्र, जप, स्नान, औषधि एवं मणि (रत्न) आदि धारण करने से उनके कुप्रभावों को काफी हद तक कम किया जा सकता है। अतः यहाँ हम सभी ग्रहों के लिए दान की वस्तुएँ, मणि, जप का मन्त्र, स्नान, औषधि आदि की जानकारी निम्न प्रकार दे रहे है-

सूर्य सम्बन्धित रोग निवृत्ति का उपचार

1. सूर्य ग्रह-शान्ति हेतु विधि:

दान - गेहूं, तांबा, घी, मसूर, गुड, कुंकुम, लाल कपड़ा, कनेर के फूल, लाल कमल, बछडे सहित गौ तथा सोना। इन सबका अथवा यथाशक्ति उपलब्ध हों, उनका यथोचित दान करें।

जप मन्त्रः -

ऊँ घृणिः सूर्याय नमः।

इस मन्त्र का - 7000 जप करके आक की लकडी से दशांश मंत्रों से हवन करना चाहिए।

रत्न: माणिक (लाल) सोने में दाएं हाथ की अनामिका में धारण करे।

2. चन्द्रमा ग्रह-शान्ति हेतु विधि:

दान योग्य वस्तुएँ - श्वेत (सफेद) कपड़ा, मोती, चाँदी, चावल, खाण्ड, चीनी, दही, शंख, सफेद फूल, सफेद वृषभ आदि।

जप मन्त्रः - ऊँ सों सोमाय नमः।’’

इसका जप - 11000 जप करने चाहिए तथा ढ़ाक की लकडी से दशांयश मन्त्र से हवन करना चाहिए।

रत्न: सफेद शुद्ध मोती चाँदी में बनवाकर दायें हाथ की अनामिका में पहनें।

3. मंगल ग्रह-शान्ति विधि:

दान वस्तु - मसूर, गुड़, घी, लाल कपडा, गेहूं, लाल फूल, तांबा, केसर।

जप मन्त्र: - ऊँ अंगारकाय नमः।

इसका जप 10000 करके खैर (खदिर) की लकडी से हवन करना चाहिए।

रत्न: मूंगा सोने या तांबे में पहनना चाहिए।

4. बुध ग्रह-शान्ति हेतु विधि:

दान वस्तुः मूंग, खाण्ड़, घी, हरा वस्त्र, चांदी फूल, हाथी दांत, कर्पूर।

जाप मन्त्र- ऊँ बुं बुधाय नमः।

इस मन्त्र का 19000 जप करके चिरचीरी की लकडी से हवन करना चाहिए।

रत्न: पन्ना चाँदी या सोने में बनवाकर छोटी अंगुली में पहनना चाहिए।

5. गुरू ग्रह-शान्ति हेतु विधि:

दान वस्तु - चने की दाल, कच्ची शक्कर हल्दी, पीला कपड़ा, पीला फूल, घी और सोना।

जाप मन्त्र - ऊँ बृंष्बृहस्पतये नमः।

इस मन्त्र का 19000 जप करना चाहिए तथा पीपल की लकडी में हवन करना चाहिए।

रत्न: पुखराज को सोने में बनावाकर अंगूठे के पास वाली अंगुली (तर्जनी) में अथवा अनामिका में पहनना चाहिए।

6. शुक्र ग्रह-शान्ति हेतु विधि:

दान वस्तु - चाँदी, चावल, दूध, सफेद कपडा घी, सफेद फूल, खुषबूदार धूप या अगरबत्ती, सफेद चन्दन।

जाप मंत्र - ऊँ शुं शुक्राय नमः।

इस मंत्र का जप 6000 करके गूलर की लकडी से हवन करना चाहिए।

रत्न: हीरा किसी सफेद धातु में पहने।

7. शनि ग्रह-शान्ति हेतु विधि:

दान वस्तुएँ - काला कपडा, साबुत उडद, लोहा, अलसी, तेल, जूट (सन) काला पुष्प, काला तिल, कस्तूरी और काला कम्बल।

जाप मन्त्र - ऊँ शं शनैष्चराय नमः’’।

इसका जप 23000 करके शमी की लकडी से हवन करना चाहिए।

रत्न: नीलम चाँदी या सप्तधातु में बनवाकर बाएं हाथ की बड़ी अंगुली में पहनना चाहिए।

8. राहु ग्रह-शान्ति हेतु विधि:

दान वस्तुएँ- काला तिल, तेल, उडद, कुल्थी, सरसों दाना, राई, नीला कपडा, काला फूल, काला नीला कम्बल या ऊनी कपडा।

जाप मंत्र - ऊँ रां राहवे नमः''

इस मंत्र का जप 18000 करे तथा दूध सहित आम की लकडी पर हवन करें।

रत्न: गोमेद को चांदी या अष्टधातु में बनवाकर बांए हाथ की लम्बी अंगुली में पहने।

9. केतु ग्रह-शान्ति हेतु विधि:

दान वस्तुएं - सात अनाज, कागज, झण्डी ऊनी कपडा, तिल और बकरा।

जाप मंत्र - ऊँ कें केतवे नमः।''

इस मंत्र का 17000 जप कर कुषामिश्रित आम की लकड़ी से हवन करे।

रत्न: लहसुनियां चांदी, तांबे या अष्टधातु में बनवाकर बायें हाथ की तर्जनी अंगुली अथवा अनामिका में पहनो।

नोट: ग्रहों की प्रसन्नता के लिए दान योग्य वस्तुओं में से कुछ वस्तुएँ उपलब्ध न हो अथवा सामर्थ्य न हो तो यथाषक्ति वस्तुओं का दान करना चाहिए।

हवन के लिए जो लकड़ी बताई गई है यदि वे उपलब्ध न हो सकें तो आम, पीपल या गूलर की लकडी से हवन किया जा सकता है तथा सम्बन्धित ग्रह की समिधा की कुछ आहुतियाँ अवश्य देनी चाहिए।

यदि तुरन्त प्रबन्ध न हो सके तो अथवा सामर्थ्य न हो तो ग्रहों की सम्बन्धित धातु की अंगुठी या छल्ला ही बनवाकर निर्दिष्ट अंगुलियों में पहन लेना चाहिए। यदि कोई इन तन्त्रोक्त मन्त्रो के स्थान पर वैदिक मन्त्रों का प्रयोग करना चाहे तो कोई हानि नहीं है। मन्त्र की जप संख्या उस स्थिति में भी पूर्ववत् रहेगी। यद्यपि जप, हवन, दान व मणि धारण कर सबके करने से पूर्ण फल मिलता है, लेकिन आज कल के व्यस्त जीवन में यदि व्यक्ति एक ही कार्य करना चाहे तो उसे मणि या धातु धारण कर लेनी चाहिए। मणि शीघ्र व सबसे अधिक प्रभावकारी होती है। इसकी विकरण क्षमता शरीर की तंरगों के साथ मिलकर तुरन्त फल देने में समर्थ होती है।

रोग निवृत्ति के लिए स्नान:

ग्रह चिकित्सा में रोग से निवृत्ति के लिए स्नान भी प्रमुख उपाय माना गया है। फलित ज्योतिष के ग्रन्थों में कहा गया है कि - लाजवन्ति, हल्दी, देवदास, लोंग, मोथा, कूट को तीर्थोदक में मिला स्नान करने से ग्रहपीड़ा तथा रोगपीड़ा नष्ट हो जाती है। कुछ आचार्यो का मत है कि जिस व्यक्ति की कुण्डली में जो ग्रह रोगकारक हो, उस व्यक्ति को उस ग्रह की औषधि के जल से स्नान करने से पीडा को कुछ कम किया जा सकता है।

सूर्य आदि ग्रहों की औषधियाँ

ग्रह	स्नानार्थ औषधियाँ
सूर्य	इलायची, देवदारू, खस, केसर, मुलेठी, कनेर

चन्द्रमा	पंचगंध, शंख, सीप, श्वेत चंदन, स्फ
मंगल	विल्वछाल, रक्तचंदन, रक्तपुबप, धमनी
बुध	गोमय, मधु, अक्षत, फल, स्वर्ण, मोती
शुक्र	इलायची, केसर
शनि	सुरमा, लोगन, धमनी, सौफ
राहु	लोबन, विलपत्र, हाथी, दांत, एवं कस्तुरी
केतु	लोबान, विलपत्र, हाथी दांत एवं कस्तुरी

11.10. सारांश

उपरोक्त वर्णित इकाई में आपने अध्ययन किया कि ज्योतिष तथा चिकित्सा दोनों प्राचीन है तथा भारतीय जीवनशैली को निर्देशित करते है। प्राचीन भारत में ज्योतिष तथा औषधि का विकास धर्म के अंग के रूप में हुआ। आरोग्य के सिद्धान्त तथा रोगों की रोकथाम भी उसी तरह जीवन के दैनिक संस्कारों का एक हिस्सा थे जैसे सांसारिक कार्यो में ज्योतिष का उपयोग। इस इकाई के अंतर्गत हमने रोगों के वर्गीकरण एवं रोग का निर्णय करने के लिए आवश्यक तथ्य को समझाने का प्रयास किया है। यहाँ हमने रोग की पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए उसका राशि, भाव, ग्रहों से सम्बन्ध का उल्लेख करते हुए तीनों द्रेष्कोणो (प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय) से कुण्डली में भूमिका का वर्णन किया है। इसी प्रकार हमने वामन पुराण से ऋषि पुलस्त्य तथा ऋषि नारद के बीच संवाद पर आधारित एक चित्र में भचक्र के विभिन्न नक्षत्रों से सम्बन्धित शरीर के अंगों को प्रदर्षित किया है।

ग्रहों से सम्बन्धित रोग के अन्तर्गत हमने सूर्य आदि नौ ग्रहों के कारकतत्वों, रोग परिज्ञान के सिद्धान्त एवं रोग निवृत्ति के उपचार को समझाया है। इस प्रकार आप इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त ज्योतिष एवं उनसे सम्बन्धित जटिल रोग एवं उनके उपचारों का दक्षता पूर्वक ज्ञान हासिल कर पायेंगे।

11.11. शब्दावली

- अपस्मार = मिर्गी रोग
- सहज रोग = जन्म से होने वाले
- आगन्तुक रोग = जन्म के बाद स्थितिवश होने वाले रोग
- द्रेष्काण = राशि का तृतीय भाग अर्थात् 10 अंश
- भावयुग्म = परस्पर आमने-सामने के भाव अर्थात् सप्तम भाव

- आनुवांशिक रोग = एक पीढ़ि से दूसरी पीढ़ि में आने वाले रोग

11.12. प्रश्नावलि

1 ज्योतिष शास्त्र के अनुसार रोग की जानकारी किस प्रकार की जा सकती है?

उत्तर: ज्योतिष शास्त्र के अनुसार जन्मकाल, प्रश्नकाल एवं कुंडली मे प्रतिकूल ग्रहों द्वारा रोग की जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

2 रोगों का किन दो प्रकार से वर्गीकरण किया गया है ?

उत्तर: रोग का वर्गीकरण सहज एवं आगुन्तक रोग में किया गया है।

3 दृष्टिनिमित्तजन्य एवं अदृष्टिनिमित्तजन्य रोग में क्या अंतर है ?

उत्तर: जो रोग प्रत्यक्ष घटनाओं द्वारा उत्पन्न हुए हो - जैसे अभिशाप, महामारी, दुर्घटना आदि उन्हें दृष्टिनिमित्तजन्य रोग कहते है। इसके विपरीत पूर्व जन्म में किए कृत से उत्पन्न रोग अदृष्टिनिमित्तजन्य रोग कहलाये गये है। जैसे - ज्वर, अतिसार आदि।

4 रोग निर्णय के चार आवष्य तथ्य बताइये ?

उत्तर: रोग निर्णय के चार आवष्य तथ्य निम्न प्रकार है।

(1) रोगोत्पत्ति का समय (2) निदान (3) तीव्रता (4) उपचार

5 2, 3, 4 तथा 11 भाव जन्मांग में किन-किन अंगों को दर्शाता है?

उत्तर: दूसरा भाव - दायां नेत्र, मुख, नाक, नाखुन।

तीसरा भाव - कंठ, गला, गर्दन, भुजाएं।

चतुर्थ भाव - हृदय, वक्ष स्थल, ऊरू, पसलियां।

एकादष भाव - पैर, पिण्डलिया, बायां कान।

6 कुण्डली में कर्क राशि किन शारीरिक अंगों का प्रतिनिधित्व करती है।

उत्तर: कर्क राशि हृदय, फेफडे एवं श्वासनली का प्रतिनिधित्व करती है।

7 निम्न लिखित पंक्ति सत्य है या असत्य बताएँ ?

क कुंडली का छठा भाव रोग का प्रतिनिधित्व करता है।

- उपर्युक्त पंक्ति सत्य है।

ख द्रेष्कोण शरीर के गर्दन से नाभि तक का भाग दर्शाता है।

- यह असत्य है। प्रथम द्रेष्काण सिर से मुख तक का भाग दर्शाता है।

ग ज्योतिष के अनुसार रोगनिवृत्ति का उपचार नहीं है।

- उपयुक्त कथन असत्य है। ज्योतिष में रोग निवारण हेतु दान-पुण्य, मंत्र जाप, रत्न धारण विधि का उल्लेख है।

घ गुरू की कफ प्रकृति है।

- यह कथन सत्य है

8 ऋषि पुलस्त्य तथा नारद जी के बीच का संवाद किस पुराण में है?

उत्तर: उपर्युक्त वर्णन वामन पुराण में है।

9 जडता, उन्माद, पागलपन किस रोग को दर्शाते है?

उत्तर: निम्न रोग मानसिकता रोग के उदाहरण है।

10 छठा भाव किन रोगों को दर्शाता है?

उत्तर: छठे भाव से क्षय रोग, कफजनित रोग, अपेन्डिक्स, छाले वाले रोग, आदि का ज्ञान होना है।

11 शुक्र ग्रह किस प्रकृति के रोग का कारक है?

उत्तर: शुक्र ग्रह वात तथा कफ प्रकृति का कारक है।

11.13. बोध प्रश्न

1. नर आकार चित्र बनाकर उनमें नक्षत्रों की सस्थापना करें तथा किस अंग पर किस नक्षत्र का अधिकार है यह स्पष्ट करे?
2. वर्तमान परिस्थतियों में चिकित्सा ज्योतिष के महत्त्व पर प्रकाश डाले।
3. चिकित्सा ज्योतिष में दंष्ठकाण के महत्त्व पर चर्चा करे।।
4. सूर्य आदि नौ ग्रहों के रोग निवृत्ति के उपचार लिखे।

   (1) मानसिक रोग (2) हृदय रोग (3) मधुमेह

11.14. सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. चिकित्सा ज्योतिष के मौलिक तत्त्व

   सम्पादक: डॉ. के. एस. चरक

   प्रकाशक:

2. सारावली

   सम्पादक: डॉ. मुरलीधर चतुर्वेदी

प्रकाशक: मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

3. भारतीय ज्योतिष

व्याख्याकार: डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री

प्रकाशक: भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली।

इकाई - 12

गर्भाधान

इकाई संरचना

12.1. प्रस्तावना
12.2. उद्देश्य
12.3. विषय प्रवेश
12.3.1. मासिक धर्म की विवेचना
12.3.2. शास्त्रों के अनुसार रजोदर्शनकाल
12.3.3. रजोदर्शन काल (मासिक धर्म)
12.3.4. प्रथम रजोदर्शन में शुभाशुभ विचार
12.3.5. शुभफलदायी मास
12.3.6. शुभफलदायी नक्षत्र
12.3.7. गण्ड़ नक्षत्रों में प्रथम रजोदर्शन का फल
12.3.8. रजस्वला होने के बाद स्नान मुहूर्त्त
12.4. गर्भाधान की प्रक्रिया
12.4.1. गर्भाधान का अर्थ
12.4.2. गर्भाधान में त्याज्य
12.4.3. गण्ड-मूलादि जन्म विचार
12.5. गर्भ सम्भव योग
12.5.1. गर्भस्थिति का स्वरूप
12.5.2. गर्भपुष्टि ज्ञान
12.5.3. गर्भ वृद्धि योगज्ञान
12.6. गर्भाधान से प्रसव तक दश मासों का चक्र एवं स्वामी
12.6.1. गर्भसहित गर्भहानि योग
12.6.2. गर्भपात योग
12.7. गर्भपात निवारण
12.7.1. प्रसव दिनाङ्क बोधक चक्र एवं उसके उपयोग की उपयोग की विधि
12.7.2. गर्भवती के लिए वर्जित कार्य
12.7.3. गर्भ सहित गर्भवती मरण-ज्ञान
12.8. सन्तान योग

12.8.1. गर्भ में पुत्र और कन्या का ज्ञान
12.8.2. पुत्र योग
12.8.3. कन्या योग
12.8.4. गर्भ में यमल योग
12.8.5. नपुंसक सन्तान उत्पन्न होने के योग
12.8.6. जारज योग
12.8.7. पादजात सर्पवेष्टित जन्म
12.8.8. पिता की अनुपस्थिति में सन्तान का जन्म
12.9. प्रसव
12.9.1. प्रसव का ज्ञान
12.9.2. मस्तकादि से प्रसव
12.9.3. प्रसव का कष्ट एवं सुख ज्ञान
12.9.4. प्रसव स्थान का ज्ञान
12.9.5. शल्य चिकित्सा से प्रसव के योग
12.9.6. अनगर्भा योग
12.10. सुप्रसव हेतु उपाय
12.11. सारांश
12.12. शब्दावली
12.13. अति लघुत्तरात्मक प्रश्न
12.14. लघुत्तरात्मक प्रश्न
12.15. सन्दर्भ ग्रन्थ

12.1. प्रस्तावना

संस्कारों वह विधि है जिसके द्वारा श्रौत व स्मार्त कर्मों से शरीर में अधिष्ठित आत्मा को संस्कृत अथवा शुद्ध किया जाता है। षोड़श संस्कारों में प्रथम संस्कार है "गर्भाधान संस्कार''।

रुस के प्रसिद्ध जीव विज्ञानी प्रो. जार्जिस लाखोवस्की ऐसे सम्भवत: प्रथम आधुनिक वैज्ञानिक थे, जिन्होंने यह स्पष्ट किया था कि तारों एवं ग्रहों से आने वाली रश्मियों का प्रभाव गर्भाधान एवं जन्म के समय व्यक्ति के भाग्य पर परिलक्षित होता है। इन तारों से आने वाली रश्मियाँ न केवल भाग्य को प्रभावित करती है, अपितु पृथ्वी पर समस्त जीव की संरचना गर्भाधान के समय उनके अण्डे या पिण्ड़ के ऊपर भी इनका प्रभाव पड़ता है।

परन्तु प्राचीनकाल के भारतीय ऋषि-मुनियों द्वारा गर्भाधान काल के महत्त्व को दृष्टिसङ्गत रखते हुए कई वर्षों पूर्व उसका उल्लेख कर दिया गया था।

12.2. उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से हम निम्न विषयों पर ज्ञान प्राप्त करेंगे :-

1. गर्भ क्या है ? गर्भाधान क्या है?

2. गर्भाधानकाल के शुभ गुण कौन-कौन से है?

3. स्त्रियों का ऋतु-चक्र।

4. गर्भधारण एवं गभपात का विवेचन।

12.3. विषय प्रवेश

गर्भाधान के विषय में विचार करने से पूर्व यह ज्ञान आवश्यक है कि गर्भ क्या है ? "गर्भ''गर्भ शब्द से मन, चेतना, पञ्चमहाभूतों के विकारों का बोध होता है। गर्भाशय में स्थित पुरुष का शुक्र और स्त्री का शोणित जब एक दूसरे से युक्त हो जाते है और उनमें आत्मा का अधिष्ठान हो जाता है, तो वह अष्ट प्रकृति और षोड़श विकृतियों से युक्त सजीवपिण्ड "गर्भ''कहलाता है। आधान = स्थापित से , पुरुष द्वारा जीव का स्त्री के गर्भाशय में स्थापित होना।

12.3.1. मासिक धर्म की विवेचना :- युवा अवस्था प्राप्त होने पर स्त्री के शरीर में ही गर्भाशय (बच्चादानी) फूटने लगती है और उसमें रक्तस्राव होने लगता है। थैली का मुख खुल जाने से रक्तपूर्ण थैली खाली हो जाने पर उसे पुन: पूर्णता की स्वभाविक इच्छा प्राप्त होती है तो स्त्रीरूप उस जीव को उस थैली की पुन: पूर्णता करने की स्त्री की कामना होती है। प्राकृतिक यह कामना जो स्त्री को हो जाती है। प्राप्त यौवन अवस्था की स्त्री की राशि से प्रत्येक मास में मङ्गल और चन्द्रमा की आकाशीय स्थितियों वश जो प्रभाव पड़ता है, उसी से गर्भाशय (बच्चादानी) फूट जाती है और उससे विकृत रक्तस्राव होने लगता है इसलिए प्रतिमास के मासिक धर्म के लिए मङ्गल और चन्द्रमा ये दो ग्रह ही करण हो जाते है। प्रत्येक चान्द्रमास में प्रथम अमावस्या से द्वितीय अमावस्या तक के किसी भी दिन के किसी क्षण में उक्त स्थिति सम्भव होती है।

12.3.2. शास्त्रों के अनुसार रजोदर्शनकाल :- आठ वर्ष की 'गौरी', नौ वर्ष की 'रोहिणी', दस वर्ष की 'कन्यासंज्ञक', तथा तदनन्तर द्वादशादि वर्षों की कन्या 'वृषली' अर्थात् रजस्वला संज्ञक होती है। यथा -

अष्टवर्षा भवेद्गौरी नवमे रोहिणी भवेत्।

दशमे कन्यका प्रोक्ता द्वादशे वृषली मता।।:- ज्योतिर्निबन्ध

रजोदर्शन से कन्या प्राप्ति हेतु निर्दिष्ट दिवस - 5, 7, 9, 11, 13, 15

रजोदर्शन से पुत्र प्राप्ति हेतु निर्दिष्ट दिवस - 4, 6, 8, 10, 12, 14, 16

रजोदर्शन के चार के पश्चात् गण्डान्त आदि व्यतिपात, वैधृति, श्राद्ध, दूषित नक्षत्र को त्यागकर उपरोक्त दिवसों में व्यक्ति को गणेश-मातृका-पुण्याहवाचनादि कर्म करके शुभरात्रि में रतिक्रिया करनी चाहिए।

12.3.3. रजोदर्शन काल (मासिक धर्म) :- स्त्री की जन्म कुण्ड़ली से चन्द्रमा जब अनुपचय (1, 2, 4, 5, 7, 8, 9, 12) राशि हो और गोचर में स्थित मङ्गल की चन्द्रमा पर पूर्णदृष्टि हो तो प्रतिमास स्त्री को मासिक धर्म होता है, यही मासिक धर्म गर्भ का कारण बनता है। यदि स्त्री की राशि से तृतीय-षष्ठ-दशम-एकादश राशि में चन्द्रमा हो तो वह मासिक धर्म निष्फल हो जाता है, अर्थात् गर्भधारण की क्षमता उस रजोदर्शन में नहीं होती है।

रजोदर्शन काल में स्त्री-समागम नहीं करना चाहिए, इस समय स्त्री गर्भधारण की अवस्था में नहीं होती है। रजोदर्शन से तीन दिन तक स्त्री का शरीर अस्पृश्य होता है, अत: पुरुष को त्याज्य दिवसों में समागम नहीं करना चाहिए।

12.3.4. प्रथम रजोदर्शन में शुभाशुभ विचार :- प्रथम बार कन्या को जब रजोदर्शन हो, वह समय भी आधान व जन्य समयवत बहुत सी बातों के लिए शुभदायक होता है। उससे भाग्य निर्माण भी भविष्य में हो सकता है।

भद्रायुक्त वेला में, सुप्तावस्था में, संक्रान्ति में, अमावस्या, रिक्तातिथि (4-9-14), सन्ध्याकाल, षष्ठी, अष्टमी या द्वादशी तिथि में, रुग्णावस्था में, चन्द्र व सूर्य के ग्रहणकाल में, पातयोग (वैधृति व व्यतिपात महापात) में यदि कन्या को प्रथम रजोदर्शन हो तो वह उसके भाग्य के लिए अशुभ सूचक है।

12.3.5. शुभफलदायी मास :- माघ, मार्गशीर्ष, वैशाख, आश्विन, फाल्गुन, ज्येष्ठ, श्रावण मासों में यदि प्रथम रजोदर्शन हो तो वह कन्या के भविष्य हेतु शुभफलदायी होता है।

12.3.6. शुभफलदायी नक्षत्र :- श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, चित्रा, अनुराधा, रेवती, मृगशिरा, अश्विनी, पुष्य, हस्त, रोहिणी, उत्तरात्रय, एवं स्वाती में यदि प्रथम रजोदर्शन हो तो वह कन्या के भविष्य हेतु शुभफलदायी होता है।

शुभ ग्रह के वार में, शुभ लग्न में यदि प्रथम रजोदर्शन हो तो वह कन्या के भविष्य हेतु शुभफलदायी होता है।

12.3.7. गण्ड़ नक्षत्रों में प्रथम रजोदर्शन का फल :- गण्ड़ान्त में यदि कन्या को रजोदर्शन तो वह शीघ्र ही वैधव्य को प्राप्त करती है। ऐसी कन्या सन्तान, धन, सुख एवं वस्त्रादि से रहित, कुल का नाश करने वाली होती है। शास्त्रोक्त विधि से जप, होमादि से यदि देवताओं, ब्राह्मणों का पूजन किया जाये तो विपत्तियों की शान्ति होकर सुख-सौभाग्य की प्राप्ति होती है।

12.3.8. रजस्वला होने के बाद स्नान मुहूर्त्त :- हस्त, स्वाती, अश्विनी, मृगशिरा, अनुराधा, धनिष्ठा, धुरव संज्ञक (उ.फा. उ.षा., उ.भा., रोहिणी नक्षत्र), ज्येष्ठा - इन नक्षत्रों में शुभ तिथि और शुभ वारों में प्रथम रजस्वला स्त्री का स्नान करना शुभफलदायी होता है। मृगशिरा, रेवती, स्वाती, हस्त, अश्विनी, रोहिणी - तो रजोनिवृत्ति के पश्चात्् कन्या शीघ्र ही गर्भधारण करती है।

12.4. गर्भाधान की प्रक्रिया

12.4.1. गर्भाधान का अर्थ :- गर्भावक्रान्ति का अर्थ पुरुष और स्त्री बीजों का आपस में मिलकर गर्भोत्पत्ति की क्रिया करना है। अवक्रान्ति से अवक्रमण, अवतरण, उपगमन आदि का बोध होता है। शुक्र और आत्तव के सम्मिश्रण से गर्भ के उत्पन्न होने तक की विधि गर्भावक्रान्ति कहते है।

विवाह का गर्भाधान पारस्परिक निकटतम सम्बन्ध है इसलिए गर्भाधान हेतु दोनों (स्त्री-पुरुष) का व्यस्क होना अत्यावश्यक है। इससे पहिले यदि गर्भाधान होता है तो सन्तान अल्पजीवी, नष्ट या दुर्बल जायेगी। जब माता-पिता का शारीरिक-मानसिक दृष्टि से सम्पूर्ण विकास होगा तभी स्वस्थ्य सन्तान हो सकती है। "गर्भस्य आधानं गर्भाधानम''अर्थात् जिस कर्म के द्वारा गर्भ में बीज का स्थापन पुरुष द्वारा स्त्री में किया जाता है, उसे गर्भाधान कहा जाता है। इस संस्कार से वीर्य सम्बन्धि अथवा गर्भ सम्बन्धित पापों का नाश हो जाता है। सर्वप्रथम ऋतु स्नान के पश्चात् भार्या के स्त्रीधर्म में होने से या रजोदर्शन से 16 दिन तक गर्भाधान के योग्य होती है।

गर्भाधान की प्रक्रिया अर्थात् यथार्थ में गर्भाधान कब सम्भव हाता है, इस प्रक्रिया को वैज्ञानिक आधार पर समझ लेना आवश्यक है। प्रतिमास स्त्री के गर्भाशय में एक अण्ड़ आता है, जिसे आङ्गलभषा में "ओवम''कहते है। गर्भाशय के आन्तरिक भाग में दो नलिकायें होती है, जिन्हें फैलोपियन ट्यूब कहते है। एक मास में एक नलिका से गर्भाशय ओवम आता है तथा दूसरे मास में दूसरी नलिका से स्त्री-पुरुष समागम के पुरुष के जननाङ्ग से निसृत असंख्य शुक्राणु (स्पर्म) स्त्री के गर्भाशय में पहुँचते है। असंख्य शुक्राणुओं में कोई एक शुक्राणु ही जीवित रह पाता है, और वही गर्भ में जाकर स्त्री के रज से सम्मिश्रित होकर नूतन जीव का रूप धारण करता है। यदि एक से अधिक शुक्राणु गर्भाशय में स्त्री के रज से सम्मिश्रित हो जाते है, तभी स्त्री के एक से अधिक सन्तानें उत्पन्न होती है, पर ऐसा लाखों मे एक बार होता है।

वर्तमान में गर्भाधान की प्रक्रिया को वैज्ञानिकों ने सरोगेट मदर एवं स्पर्म डोनेट की प्रक्रिया से अति सरल बना दिया है, अब वे दम्पत्ति भी सन्तासुख प्राप्त कर सकते है, जिनमें स्त्री (गर्भाशय के विकार) अथवा पुरुष (शुक्राणुओं के विकार, समागत के समय शारीरिक अक्षमता) या दोनों ही समस्याग्रस्त है। कभी-कभी गर्भाशय में तीव्र गति से भ्रमण कर सकने की अक्षमता के कारण रज (ओवम) से संयोग नहीं कर सकता, इस संचार-प्रक्रिया को मोबिलिटी कहते है। यह स्पर्म 4-5 घण्टे तक गर्भाशय में गतिशील रहते है। कभी-कभी स्त्री पुरुष के समागम के समय स्पर्म और ओवम का तत्काल ही सम्मिश्रण हो जाता है और गर्भधारण हो जाता है तथा कभी-कभी तीन-चार घण्टे बार सम्मिश्रण होता है। प्राय: जो समागम के समय गर्भाधान का समय निर्धारित किया जाता है, वह स्थूलमान ही है क्योंकि समागम के समय और गर्भाधान के समय में कभी-कभी शून्यकाल का अन्तर होता है तो कभी-कभी कुछ घण्टों का अन्तर हो जाता है।

12.4.2. गर्भाधान में त्याज्य :- रजोनिवृत्ति के पश्चात् स्त्री-समागम करने के पूर्व गण्ड़ान्तत्रय (नक्षत्र-गण्ड़ान्त, तिथि-गण्ड़ान्त व लग्न गण्ड़ान्त), जन्म नक्षत्र से सातवाँ नक्षत्र, मूल, भरणी, अश्विनी, रेवती, मघा, माता के श्राद्ध दिवस, लग्न से आठवी राशि, पापग्रह के नक्षत्र को त्याग देना चाहिए, यह दाम्पत्य जीवन के सुखमयी नहीं होता है।

12.4.3. गण्ड-मूलादि जन्म विचार :- अश्विनी, आश्लषा, मघा, ज्येष्ठा, मूल एवम् रेवती- ये 6 नक्षत्र गण्डमूल कहलाते हैं। इन नक्षत्रों में उत्पन्न बालक-माता, पिता, कुल या स्वयं को अरिष्टादायक होता है। यदि यह अरिष्टं से बच जाए तो अपने बल-बुद्धि से संसार में सुख पूर्वक दीर्घ आयु प्राप्त करता है। इसलिए गण्ड मूल में उत्पन्न बालक के पिता को 27 दिन तक उसका मुख नहीं देखना चाहिये और फिर प्रसूति-स्नान के बाद गण्ड मूल नक्षत्र की शान्ति आदि कराकर ही बालक का मुख देखना चाहिये।

12.5. गर्भ सम्भव योग

यदि गर्भाधान के समय पुरुष की राशि से उपचय (3, 6, 10, 11) राशि में अपने-अपने नवमाशं में स्थित बलवान सूर्य व शुक्र हो अथवा अथवा स्त्री की राशि से उपचय राशि में मङ्गल व चन्द्रमा स्वनवमांश में हो तो गर्भधारण की सम्भावना रहती है।

लघुजातक के अनुसार स्वराशि या स्वनवमांश में बलवान सूर्य और शुक्र पुरुष के उपचय राशि में हो या स्त्री के उपचय राशियों में बलवानं चन्द्रमा और मङ्गल अपने स्वराशि या स्वनवमांश में हो तो गर्भ रहता है।

12.5.1. गर्भस्थिति का स्वरूप :- आधान काल में स्त्री की जैसी मन की भावना, इच्छा, कफवातादि दोष की स्थिति होती है, उसी के अनुरूप गुण-दोष से युक्त गर्भस्थ बालक की प्रवृत्ति होती है।

12.5.2. गर्भपुष्टि ज्ञान :- लग्न में शुभग्रह हो या चन्द्रमा शुभ युत हो अथवा लग्न चन्द्र से केन्द्र एवं त्रिकोण में ग्रह स्थित हो तथा तृतीय, एकादश भाव में पापग्रह हो तो प्रसवकाल सुखमय व्यतीत होकर सुखमयी प्रसव होता है।

12.5.3. गर्भ वृद्धि योगज्ञान :- सारावली के अनुसार गर्भाधान-कालिक लग्न पर यदि बलवान बुध , गुरु और सूर्य की दृष्टि हो तो गर्भ निरन्तर बढ़ता है। प्रत्येक मास में स्वामी के बलानुसार स्वभाव व गुणों के गर्भ होता है।

12.6. गर्भाधान से प्रसव तक दश मासों का चक्र एवं स्वामी

गर्भकाल में जिस मास का स्वामी दूषित (अस्तादि) हो तो उस मास में गर्भ-पीड़ा तथा जिस मास के स्वामी निपीड़ित हो तो उस मास में गर्भ का पतन तथा जिन मासों में स्वामी निर्मल हो तो उन मासों में गर्भ पुष्ट समझना चाहिए। चक्र से स्थिति स्पष्ट है :-

मास **स्थिति** **स्वामी**

प्रथम कलल (रज-वीर्य का सम्मिश्रण) शुक्र

स्थिति :- इस महीने में केवल वीर्य रहता है और वीर्य के कारक शुक्र है। शुक्र जलतत्त्व ग्रह है इसलिए प्रथम महीने में स्थित वीर्य स्थित शुक्राणु स्त्री के डिम्बाणु में अवस्थित रज से मिलकर एक अण्ड़े का रूप धारण कर लेता है, इसलिए प्रथम मास में गर्भ की स्थिति स्पष्ट नहीं हो पाती है।

द्वितीय पिण्ड़रूप मङ्गल

स्थिति :- मङ्गल अग्नितत्त्व है इसलिए मङ्गल उस रज-वीर्य रूपी अण्ड़े में सघनता लाते है और यह माँस का लौथड़ा सा बन जाता है, जिससे माता के शरीर में पित्त बढने लगता है और प्रसूता को उल्टी, चक्कर व बेचैनी होने लगती है।

तृतीय हाथ-पैर आदि अङ्गों के अवयव गुरु

स्थिति :- गुरु आकाशप्रधान देव है। उस माँस के लोथड़े में जीव का संचार कर लड़का या लड़की के रूप में परिवर्तित कर देते है। शरीर के भीतर सबसे पहले गुप्ताङ्ग का निर्माण होता है, जिसके कारण गर्भस्थ लिङ्ग की पुष्टि हो जाती है। गर्भस्थ शिशु की वृद्धि से गर्भाशय से गर्भाशय की ग्रन्थियाँ सक्रिय हो जाती है और माता के शरीर के पित्ताधिक्य पर नियन्त्रण होता है और गर्भवती महिला अदभुत प्रसन्नता का अनुभव करती है।

चतुर्थ हड्डी सूर्य

स्थिति :- सूर्य हड्डी के कारक है, इनकी पुष्टता व दुर्बला जातक की हड्डियों का विकार निर्धारित करती है।

पञ्चम चर्म (चमड़ी) चन्द्र

स्थिति :- चन्द्रमा जलतत्त्व है, इसलिए इस मास में गर्भस्थ शिशु के शरीर में रक्त संचरण होने लगता है और रक्तवाहिनियाँ विकसित होने लगती है और पाँचवे महीने में शरीर नसों, मांसपेशियों व नाडियों से युक्त हो जाता है।

षष्ठ रोम शनि

स्थिति :- शनि केश और स्वरूप के कारक है इसलिए षष्ठमास में मानव की सुन्दरता, कुरूपता, गौर अथवा कृष्णवर्ण का निर्धारण हो जाता है अर्थात् त्वचा का निर्माण हो जाता है।

सप्तम चैतन्य (चेतना) बुध

स्थिति :- बुध बुद्धि का कारक है। इस मास में गर्भस्थ शिशु का उदय होता है, वह स्वत: क्रियायें करने लगती है। माँ के द्वारा ग्रहण किये गये भोजन आदि और माँ के स्वभाव पर वह शिशु प्रतिक्रिया करने लगता है। इस मास में स्त्रियों को सभी वर्जित कियायें अनिवार्य रूप से बन्द कर देनी चाहिए क्योंकि इसी

मास में शिशु माता के आचार-विचार, कियाकलाप से प्रभावित होता है। उदाहरणतया हम प्रह्लाद, सुभद्रा और अभिमन्यु का विचार कर सकते है।

अष्टम माता-पिता द्वारा खाये गये अन्न का रसास्वादन लग्नेश

स्थिति :- इस मास के स्वामी कोई भी ग्रह हो सकते है, अत: विशेष सावधानी की जरूरत होती है। इस मास के स्वामी पीड़ित हो जाये समय पूर्व प्रसव अथवा अन्य विकार उत्पन्न हो सकते है। सभी जानते है कि आठवें मास में उत्पन्न शिशु के जीवित रहने की सम्भावनायें नगण्य ही होती है। कष्ट तो शिशु व माता दोनों के लिए ही होता है।

नवम गर्भ से बाहर निकलने का उद्वेग चन्द्रमा

स्थिति :- चन्द्रमा जलकारक है, चन्द्रमा पेट के भीतर इतना जल उत्पन्न कर देते है कि शिशु बिना किसी तकलीफ के पेट के भीतर हिल-डुल सकता है, यदि शिशु आराम से रहेगा तो प्रसव भी सुखमय होगा।

दशम प्रसव सूर्य

स्थिति :- सूर्य अग्निग्रह है, अत: पेट के भीतर गर्भी पैदा करके शिशु को माता के शरीर से अलग कर देते है, वह जिन मांसपेशियों में जकड़ा होता है, उनसे छूट जाता है और आराम से जन्म ले लेता है।

12.6.1. गर्भसहित गर्भहानि योग :-

1. यदि आधान समय में सूर्य या चन्द्रमा पापग्रह के मध्य हो और उन पर शुभ ग्रह की दृष्टि का अभाव हो तो गर्भ सहित गर्भवती का मरण अथवा मृत्युतुल्य कष्ट होता है।

2. आचार्यवराहमिहिर के अनुसार लग्न व चन्द्रमा को पापग्रह के मध्य में रहने पर सगर्भा स्त्री का मरण होता है।

3. आधान समय में लग्न व सप्तम भाव में पापग्रह शुभग्रहों से अदृष्ट हो तो सगर्भा का मरण अथवा लग्न में शनि और उस पर क्षीण चन्द्रमा व मङ्गल की दृष्टि हो तो गर्भ सहित गर्भवती का मरण अथवा मृत्युतुल्य कष्ट होता है।

4. चतुर्थ भाव में मङ्गल हो तथा बाहरवें भाव में सूर्य व क्षीण चन्द्रमा हो, उन पर पापग्रहों की दृष्टि हो तो गर्भ सहित गर्भवती का मरण अथवा मृत्युतुल्य कष्ट होता है।

12.6.2. गर्भपात योग :- निम्न योग में गर्भपात होने की स्थिति उत्पन्न होती है :-

1. शनि व मङ्गल षष्ठ या चतुर्थ में स्थित हो तो गर्भपात-योग बनता है।
2. लग्न में सूर्य हो, सप्तम में शनि हो अथवा सप्तम में सूर्य व शनि साथ हो और दशम स्थान पर गुरु की दृष्टि हो तो गर्भपात-योग बनता है।
3. पञ्चम स्थान में राहु-शनि इत्यादि पापग्रह स्थित हो अथवा पापग्रहों की दृष्टि हो तो गर्भपात-योग बनता है।

4. पञ्चम स्थान में जो नवमांश हो, उस राशि को पापग्रह देखते हो तो यह गर्भपात-योग बनता है।

5. षष्ठेश के साथ शनि षष्ठ स्थान में हो और चन्द्रमा सप्तम स्थान में हो तो गर्भपात-योग बनता है।

6. अष्टमेश अष्टमभाव में स्थित हो तो गर्भपात-योग बनता है।

12.7. गर्भपात निवारण

1. कुशा की जड़, कांस की जड़, एरण्ड़ की जड़ तथा गौखरू मिलाकर 2 तोला, दूध 16 तोला, पानी 64 तोला यथाविधि पकाएँ। इस दूध में मिश्री डालकर कई दिनों तक सेवन करने से गर्भपात सूचक रक्तस्राव बन्द हो जाता है।

2. कसेरू, सिंघाड़ा, जीवक, ऋषभक्, काकोली, क्षीरकाकोली, मेदा, महामेदा, शालपर्णी, पृश्निपर्णी, जीवन्ती तथा मुलहठी, कमल, नीला कमल, एरण्डमूल तथा शतावरी मिलित 2 तोले, दूध 16 तोले, जल 64 तोले तथा शेष 16 तोला यथाविधि दुग्धपाक करके मिश्री मिलाकर सेवन करे। इससे तीव्र वेदना तथा गर्भस्राव बन्द हो जाता है।

3. कसेरू, सिंघाड़ा, पद्माख, नीला कमल, मुद्गपर्णी तथा मुलहठी को मिलाकर 2 तोला, दूध 16 तोला, पानी 64 तोला तथा शेष 16 तोला यथाविधि दुग्धपाक करे। इस दूध में खाण्ड डालकर पीने से गर्भिणी स्त्रियों का तीव्र शूल संयुक्त गर्भस्राव बन्द हो जाता है।

4. गर्भावस्था की पूर्वावस्था में पद्मकाष्ठ, कमल, कशेरूक, बला, सिंघाड़ा, बरगद की जटा का शीत क्वाथ मिलाकर पीने से गर्भपात रूक जाता है। जिनको प्राय: गर्भपात होता हो उन्हें गर्भधारण से लेकर लाभ होने तक यह औषधि निरन्तर पिलाये। दुर्बल गर्भाशय के यह सुन्दर, बलप्रद तथा गर्भस्थापक है।

12.7.1. प्रसव दिनाङ्क बोधक चक्र एवं उसके उपयोग की उपयोग की विधि मासिक स्राव बन्द होने की दिनाङ्कमें उसी महीने की संख्या जो गोले के अन्दर दी हुई है, उसे जोड़ देवे। उस महीने के दक्षिण में जो महीना लिखा है उसी महीने में योगफल के दिनाङ्क में प्रसव होगा।

1	8	9	14
11	12	3	6
7	2	15	8
13	10	5	4

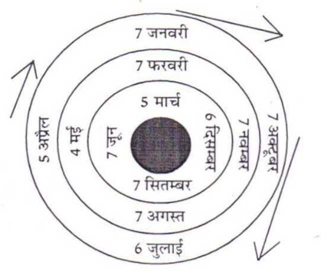

उदाहरण 1 :- मासिक स्राव बन्द होने का दिनाङ्क 17 दिसम्बर + दिसम्बर की दी हुई संख्या 6 = 23 सितम्बर प्रसव दिनाङ्क।

उदाहरण 2 :- मासिक स्राव बन्द होने का दिनाङ्क 6 अप्रैल + अप्रैल की दी हुई संख्या 5 = 11 जनवरी प्रसव दिनाङ्क।

12.7.2. गर्भवती के लिए वर्जित कार्य :- दिन में सोना, काजल लगाना, रोना, अधिक स्नान करना, अनुलेपन तथा तेल मालिश, नाखून काटना, तेज दौडऩा, जोर से हँसना, अधिक बोलना, शोर में रहना, कंघी का अधिक उपयोग, अधिक वायु का सेवन तथा व्यर्थ परिश्रम करना, अधिक आभूषण पहनना, अधिक ठण्डी या अधिक गर्म वस्तु का उपयोग, अधिक नमकीन या खटाई की ची+जो का सेवन करना।

12.7.3. गर्भ सहित गर्भवती मरण-ज्ञान :-

1. यदि आधानसमय में सूर्य या चन्द्रमा पापग्रह के मध्य में हो और उनपर शुभग्रह की दृष्टि का अभाव हो तो गर्भसहित गर्भवती का मरण होता है।
2. आचार्य वराहमिहिर ने लग्न व चन्द्रमा को पापग्रह के मध्य में रहने पर सगर्भा स्त्री का मरणयोग बताया है।
3. आधानसमय में लग्न व सप्तम में पापग्रह शुभग्रहों से अदृष्ट हो तो सगर्भा का मरण अथवा लग्न में शनि हो एवं उस पर क्षीण चन्द्र व मंगल की दृष्टि हो तो गर्भवती स्त्री का मरण होता है।
4. चतुर्थभाव में मंगल हो, द्वादश में सूर्य व क्षीण चन्द्रमा हो व उन पर पापग्रहों की दृष्टि हो तो सगर्भा का मरण होता है।

12.8. सन्तान योग

12.8.1. गर्भ में पुत्र और कन्या का ज्ञान :- यदि आधानकाल में अथवा प्रश्नकुण्ड़ली में बलवान लग्न, चन्द्रमा, गुरु, सूर्य, विषम राशि में व विषम राशि के नवमांश में हो तो पुत्र का जन्म होता है। यदि पूर्वोक्त लग्न, चन्द्रादि समराशि व समराशि के नवमांश में हो तो कन्या का जन्म होता है।

यदि बलवान गुरु, सूर्य, विषम राशि में हो तो पुरुष का जन्म, यदि समराशिस्थ बलवान शुक्र, चन्द्रमा, मङ्गल हो तो कन्या का जन्म होता है। रजोदर्शन से तीन रात्रि तक स्त्री अस्पृश्य रहती है, चतुर्थ दिन वह सांसारिक धर्म में प्रवृत्त होने योग्य होती है, परन्तु शास्त्रों में विधान है कि स्त्री 16वें दिन तक गर्भाधान हेतु शारीरिक दृष्टि से स्वस्थ रहती है। चतुर्थ दिन से सोलहवें दिन तक यदि समागम किया जाये तो निम्नलिखत फल मिलते है :-

समागम दिवस	फल
चतुर्थ	अल्पायु पुत्र
पञ्चम	कन्याजन्म

षष्ठ	वंशविस्तार करने वाला पुत्र
सप्तम	कन्या (वन्ध्या)
अष्टम	पुत्रप्राप्ति
नवम	चन्द्र के समान रूपवती कन्या
दशम	प्रभावशाली पुत्र जो अनेक व्यक्तियों पर स्वामित्तव स्थापित करे
एकादश	विरुपा कन्या
द्वादश	पुत्र (धनवान)
त्रयोदश	पाप आचरण वाली कन्या
चतुर्दश	धर्मशील पुत्र
पञ्चदश	लक्ष्मीवती कन्या
षोड़श	सर्वज्ञ पुत्र

12.8.2. पुत्र योग

1. पञ्चमेश लग्न में हो एवं गुरु से युत या दृष्ट हो तो प्रथम सन्तान पुत्र होता है।
2. आधान लग्ल में पञ्चमेश पुरुषग्रह हो और वह पुरुषराशि अथवा पुरुषराशि के नवमांश में हो तो जातक को प्रथम सन्तति पुत्ररूप में प्राप्त होती है।
3. पञ्चमभाव में सूर्य हो और उसे शुक्र देखता हो तो गर्भिणी स्त्री के तीन पुत्र होते है।
4. पञ्चमभाव में सूर्य और मङ्गल हो तो चार पुत्र होते है।
5. सिंह व वृश्चिक लग्न में हो, पञ्चम भाव का स्वामी गुरु पञ्चम में स्थित हो तथा शुभग्रहों से दृष्ट हो तो पाँच पुत्रों की प्राप्ति होती है।
6. पञ्चमेश पञ्चमभाव में हो स्वगृही हो और पञ्चमभाव से पाँचवे स्थान पर शनि हो तो इस योग में सात पुत्रों की प्राप्ति होती है। उनमें से दो यमल सन्तानें भी होती है।
7. गुरु पञ्चम या नवम में स्थित हो, पञ्चमेश पूर्णबली हो, धनेश दशमभाव में हो तो गर्भवती के आठ सन्तानें (पुत्र) उत्पन्न होती है, यदि शल्य चिकित्सा एवं अन्य कोई बाधा न हो तो।

12.8.3. कन्या योग

1. लग्नेश बलवान होकर पञ्चम, सप्तम, नवम या एकादश स्थान में हो तो प्रथम सन्तति कन्या के रूप में प्राप्त होती है।
2. पञ्चमेश यदि स्त्रीग्रह, स्त्रीराशि अथवा स्त्री नवमांश में हो तो प्रथम कन्या का जन्म होता है।

3. पञ्चमेश चन्द्रमा हो या पञ्चमभाव में चन्द्रमा हो तो द्विकन्या योग बनता है।

4. पञ्चमेश शनि से युत हो तथा चतुर्थ स्थान में राहू हो तो दो या तीन कन्याएँ होती है।

5. लग्न से तृतीय भाव में बली बुध बैठा हो एवं पञ्चमभाव में चन्द्रमा हो ता पाँच कन्याएँ होती है।

6. कन्या लग्न हो, पञ्चमभाव में शनि हो अथवा पञ्चमभाव शनि, चन्द्र, बुध या शुक्र द्वारा दृष्ट हो तो आठ कन्याओं की प्राप्ति होती है।

7. समराशि (वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर, मीन) का बुध पञ्चम या सप्तम भाव में हो तो बहुकन्या योग बनता है।

8. पञ्चमभाव में समराशि हो, लाभस्थान में बुध, शुक्र या चन्द्र हो तो कन्या सन्तति की बाहुल्यता रहती है।

12.8.4. गर्भ में यमल योग

जुड़वा बच्चे दो प्रकार के होते है। माता के गर्भ से दो या अधिक सन्ताने एक साथ उत्पन्न(एक ही दिन में कुछ समय के अन्तराल में एक ही माता से उत्पन्न बच्चे) होने वाले बच्चे या यमल कहलाते है। गर्भाधान या प्रश्नलग्न से यमलयोग का विचार किया जाता है :-

1. यदि प्रश्नकाल में अथवा गर्भाधान काल में मिथुन राशि में या धनुराशि में गुरु-सूर्य हो और और बुध से दृष्ट हो तो एक ही गर्भ से दो पुत्रों का जन्म होता है।

2. यदि शुक्र, चन्द्र, मङ्गल कन्या या मीन राशि में बुध से दृष्ट हो तो कन्या का जन्म होता है।

3. चन्द्रमा और शुक्र समराशि में हो तथा लग्न, मङ्गल, बुध, गुरु विषम राशि में हो एक ही गर्भ से युगल (एक लड़का व एक लड़की) उत्पन्न होते है।

4. लग्न और चन्द्रमा समराशि में हो और उन दोनों को पुरुष ग्रह से देखे तो यमल सन्ताने उत्पन्न होती है।

5. लग्न, मङ्गल, बुध और गुरु - ये चारों बलवान होकर सम राशिस्थ होने पर यमल सन्ताने उत्पन्न होती है।

6. मिथुन, कन्या, धनु और मीन को द्वि अंग राशि कहते है। सभी ग्रह और लग्न द्वि अंग नवमांश में हो और उनको अपने नवमांश में स्थित बुध देखे तो एक ही गर्भ एक साथ तीन सन्तानें उत्पन्न होती है।

7. उपर्युक्त योग में यदि मिथुन नवमांश स्थित बुध देखे तो दो लड़के व एक लड़की का जन्म होता है। यदि कन्या नवमांश स्थित बुध देखे तो दो कन्या व एक पुत्र का जन्म एक ही गर्भ से होता है।

8. यदि गर्भाधान के समय लग्नेश और तृतीयेश दोनों का योग लग्न में हो तो एक ही गर्भ से यमल सन्तान उत्पन्न होती है।

9. गर्भाधान के समय लग्नेश और तृतीयेश का योग हो, लग्नेश तृतीय भाव में हो या अपने उच्च स्थान में हो तो एक ही गर्भ से यमल सन्तान उत्पन्न होती है।

12.8.5. नपुंसक सन्तान उत्पन्न होने के योग

इसे क्लीब योग कहते है, किस प्रकार की ग्रह-स्थिति में नुपंसक का जन्म होता है, वह अधोलिखित योगों बताया गया है :-

1. शनि यदि समराशि में और बुध विषय राशि में हो तथा दोनों में परस्पर दृष्टि हो।
2. प्रश्न अथवा आधानकाल में यदि बलवान विषमराशिगत सूर्य और समराशिगत चन्द्रमा परस्पर दृष्ट हो तो गर्भ से नपुंसक सन्तान का जन्म होता है।
3. सूर्य समराशि में हो और मङ्गल विषमराशि में हो तथा दोनों में परस्पर दृष्टि हो तो गर्भ से नपुंसक सन्तान का जन्म होता है।
4. चन्द्रमा तथा लग्न दोनों विषमराशि में हो और मङ्गल समराशि में स्थित होकर दोनों को देखे तो गर्भ से नपुंसक सन्तान का जन्म होता है।
5. चन्द्रमा समराशि में और बुध विषमराशि में हो और मङ्गल, चन्द्रमा तथा बुध दोनों को देख तो गर्भ से नपुंसक सन्तान का जन्म होता है।
6. लग्न, चन्द्रमा और शुक्र - यह तीनों किसी भी राशि में हो किन्तु तीनों विषयक नवमांश में स्थित हो तो गर्भ से नपुंसक सन्तान का जन्म होता है।

नोट :- गर्भाधान काल के अन्तर्गत वीर्य की अधिकता से पुत्र होता है। रज की अधिकता से कन्या होता है तथा शुक्र शोणित का साम्य होने से नपुंसक का जन्म होता है।

12.8.6. जारज योग (अन्य पुरुष से उत्पन्न सन्तान)

यदि कोई स्त्री व्यभिचारिणी हो और अपने पति के अतिरिक्त अन्य किसी पुरुष से सन्तान उत्पन्न करे तो ऐसी सन्तान जारजसन्तान कहलाती है। निम्न योगों से जारज सन्तान उत्पन्न होती है :-

1. यदि लग्न या चन्द्र शुभग्रह की राशि में हो और बृहस्पति के वर्ग हो तो जातक जारज सन्तान होता है।
2. रवि, शनि, या मङ्गलवार को यदि चतुर्थी, नवमी या चतुर्दशी तिथि हो, उस दिन उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा या उत्तराभाद्रपद में से कोई भी नक्षत्र का तीसरा चरण हो तो जारजपुत्र उत्पन्न होता है।
3. लग्न में अष्टमभाव में चन्द्रमा हो, चन्द्रमा से अष्टमस्थ गुरु हो, गुरु पापग्रहों से युत, दृष्ट या पीड़ित हो तो जारजपुत्र उत्पन्न होता है।

4. पञ्चमेश चर राशि में हो, शनि पञ्चम भाव में हो, चन्द्र राहु से युक्त हो तो जारजपुत्र उत्पन्न होता है।

12.8.7. पादजात सर्पवेष्टित जन्म

प्राय: जब सन्तान का शरीर माता के योनिमार्ग से बाहर निकलता है तो पहले सिर निकलता है, फिर मध्यभाग और अन्त में पैर, किन्तु कई प्रसव में इसके विपरीत पहले पैर तथा अन्त में सिर निकलता है। ऐसे शिशुओं को पादजात कहते है, इसके अतिरिक्त कुछ शिशु जब पैदा होते है तो नाल उनके शरीर के चारों और लिपटी रहती है,इसे सर्पवेष्टित कहते है। अगर इस पर शीघ्र ध्यान न दिया जाये तो शिशु की मृत्यु भी हो सकती है।

1. यदि गर्भाधान के समय तृतीयेश राहु के साथ हो तो शिशु पादजाता होता है।
2. राहु लग्न में हो और लग्नेश दशम में हो तो शिशु पादजात होता है।
3. यदि अष्टमेश राहु के साथ लग्न में हो तो सर्पवेष्टित योग होता है।
4. यदि लग्न, क्रूर ग्रह के द्रेष्काण में हो, लग्नेश गुलिक या अष्टमेश से युत हो और केन्द्र में राहु हो तो सर्पवेष्टित योग होता है।

12.8.8. पिता की अनुपस्थिति में सन्तान का जन्म

1. यदि जन्म समय में लग्न, चन्द्र से अदृष्ट हो तो पिता की अनुपस्थिति में जातक का जन्म होता है।
2. अष्टम, नवम अथवा एकादश, द्वादशी भाव में सूर्य चरराशि में हो तो पिता की अनुपस्थिति में जातक का जन्म होता है।
3. यदि दिन में जन्म हो तो सूर्य, रात्रि में जन्म हो तो शनि, मङ्गल से दृष्ट हो तो जातक के पिता की मृत्यु परदेश में होती है।
4. यदि सूर्य, शनि चरराशि में मङ्गल से युत या दृष्ट हो तो जातक के पिता की मृत्यु परदेश में होती है।
5. सूर्य से पञ्चम, सप्तम, नवम भाव में पापग्रह हो अथवा पापग्रहों से दृष्ट हो तो पिता बन्धन का योग बनता है।

पुत्र अथवा पुत्री की इच्छा रखने वाले दम्पतियों को विशेष दिनों में ही मैथुनक्रिया में रत होना चाहिए :-

1. स्नान के पश्चात् पुत्र प्राप्ति की इच्छा होने पर आर्त्तवकाल से सम दिनों में मैथुन करना चाहिए।
2. जिन्हे पुत्री की इच्छा हो वे आर्त्तवकाल से विषम दिनों में मैथुन करें।

मैथुन और सगर्भता :- मैथुन क्रिया में प्रवृत्त होने के पहिले कुछ आवश्यक आहुतियाँ देकर एवं निम्नलिखित मन्त्रों को पढ़ते हुए ही मैथुन में प्रवृत्त होना चाहिए :-

आयुरसि सर्वत: प्रतिष्ठासि धात्वा दधातु विधातात्वा दधातु ब्रह्मवर्चसा भवेदिति।

ब्रह्मा बृहस्पतिर्विष्णुस्सोम सूर्यस्तथाऽश्विनौ भगोऽथ मित्रावरुणौ वीरं ददातु मे सुतम्॥

अहिरसि आयुरसि सर्वत: प्रतिष्ठासि धाता त्वा।

दधातु विधातात्वा दधातु ब्रह्मवर्चसा भवेदिति॥

ब्रह्माबृहस्पतिविष्णु: सोम: सूर्यस्तथाऽश्विनौ।

भगोऽथ मित्रा वरुणौ पुत्रं वीरं ददातु मे ॥

इसके बाद जब शुक्रक्षरण होने लगे तो निम्नलिखित मन्त्रों को पढ़ते रहना चाहिए :-

पूषाभगुसविता मे दधातु रुद्र: कल्पयति ललामगुं विष्णुर्योनिं कल्पयतु त्वष्टा।

रुपाणिपिुशतु असिञ्चितु प्रजापतिर्धाता गर्भं दधातु ते॥

गर्भं धेहि सिनीवालि गर्भं धेहि पृथुष्टुके।

गर्भं ते अश्विनौ देवा वाधत्तां पुष्करस्रजौवितिस सृजेथास्ते जो वैश्वानरो॥

दद्याद् ब्राह्मणमामन्त्रयते ब्रह्मगर्भं दधात्विति।

प्राङ्मुख उदङ्मुखो बोपविष्टो मन्थेद्रतो मूत्रेमिति चैके स्नावणं कुर्यात्॥

इन उपरोक्त मन्त्रों से ज्ञात होता है कि मैथुन सगर्भता हेतु निमित्त मात्र माना गया है, उसे सफल और मनोऽनुकूल बनाने के लिए धाता, विधाता की ही नहीं अपितु ब्रह्मादि विभिन्न शक्तियों की भी आराधना की गयी है, जिससे जीवात्मा की प्रतिच्छाया अपनी शाश्वत इयत्ता को स्थूल रूप में अधगुष्ठित करते हुए गर्भ की सार्थकता सिद्ध कर सकेंगे। हमारे प्राचीन मुनियों ने भी मैथुन की इस भौतिक प्रक्रिया को सफल बनाने के लिए अनुकूल ऋतु, मास, पक्ष, तिथि, दिन, नक्षत्र, योग, करण, मुहूर्त एवं आसनादि की भी व्यवस्था कर दी है।

12.9. प्रसव

12.9.1. प्रसव का ज्ञान

गर्भाधान कालिक लग्न या रात्रि संज्ञक जो हो, उस रात्रि के जितने अंश उदित हो भुक्त हो, उतना ही दिन या रात्रि व्यतीत होने पर प्रसव होता है।

12.9.2. मस्तकादि से प्रसव

यदि जन्म के समय शीर्षोदय (मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक और कुम्भ) राशि हो तो प्रथम गर्भ से सिर, पृष्ठोदय (मेष, वृष, कर्क, धनु और मकर) हो तो चरण, उभयचारी (मीन) हो तो हाथ से प्रसव होता है, अथवा ये ही अङ्ग सर्वप्रथम योनिद्वार से बाहर आते है।

12.9.3. प्रसव का कष्ट एवं सुख ज्ञान

यदि जन्मकाल के समय में नवम भाव में पापग्रह हो तो कष्ट से प्रसव होता है। यदि चतुर्थ, दशम में शुभग्रह हो तो सुख से प्रसव होता है।

12.9.4. प्रसव स्थान का ज्ञान

जन्मलग्न की राशि व नवमांश के समान स्थान पर प्रसव होता है :-

1. लग्न से द्विस्वभाव राशि का नवमांश हो तो जातक का जन्म मार्ग में होता है।
2. लग्न से स्थिर राशि का नवमांश हो तो जातक का जन्म घर में होता है।
3. लग्न से स्वराशि का नवमांश हो तो जातक का जन्म घर में होता है।
4. लग्न से अन्य राशि का नवमांश हो तो जातक का जन्म अन्य व्यक्ति के घर में होता है।

12.9.5. शल्य चिकित्सा से प्रसव के योग

1. राहु, सूर्य व मङ्गल पञ्चमभाव में स्थित हो तो प्रसव शल्य चिकित्सा द्वारा होता है।
2. पञ्चम स्थान का स्वामी अपनी नीचराशि में हो, नवमभाव का स्वामी लग्न में हो, बुध व केतु पञ्चमभाव में हो तो गर्भवती स्त्री का शिशु शल्य चिकित्सा द्वार जन्म लेता है।

12.9.6. अनगर्भा योग

अनगर्भा योग में जन्म लेने वाली स्त्री गर्भधारण करने के योग्य नहीं होती है। यह योग स्त्री की कुण्ड़ली में निम्न प्रकार से बताये गये है :-

1. सूर्य लग्न में हो और शनि सप्तमभाव में हो अथवा सूर्य, शनि सप्तमभाव में एक साथ स्थित हो तो तथा बृहस्पति दशमभाव को देख रहा हो तो यह योग बनता है।
2. शनि एवं मङ्गल छठे भाव में या चतुर्थ भाव में हो तो यह योग बनता है।
3. शनि षष्ठेश के साथ हो अथवा छठे स्थान में हो और चन्द्रमा सप्तम भाव में हो और अनगर्भा योग बनता है।

12.10. सुप्रसव हेतु उपाय

1. वट के पत्ते पर लाल चन्दन से अनार की कलम से निम्नांकित मन्त्र और यन्त्र लिखकर प्रसूता के सिर पर रख देने से सुखपूर्वक प्रसव होता है।

   मन्त्र :- "अस्ति गोदावरी तीरे जृम्भला नाम राक्षसी।

   तस्या: स्मरमात्रेण विशल्या गर्भिणी भवेत्॥''

2. नये इमली के पौधे की जड़ गर्भिणी के सिर के बाल में बाँध दे, प्रसव होते ही कैंची से काट लेवे क्योंकि ज्यादा देर रखना प्राणघातक हो सकता है।

3. गर्भिणी के हाथ में चुम्बक पत्थर रखने से प्रसव पीड़ा नहीं होती है।

4. मनुष्य के बाल जलाकर गुलाबजल में मिलाकर तलवे में मलने से फायदा होता है।

5. कण्टकारी की जड़ और अतीस तथा पाढ़ल हाथ पैर में धारण करने से शीघ्र प्रसव होता है।

6. तिल और सरसों गर्म तेल से गर्भिणी की मालिश करने से शीघ्र प्रसव होता है।

7. कूठ, कलिहारी, इलायची, मीठा, बच, चित्रक, कंजा का समान भाग लेकर चूर्ण बनाकर सुँघाने से शीघ्र प्रसव होता है।

8. ऊँ मुक्ता: पाशा विपाशाश्च मुक्ता: सूर्येण रश्मय:।

   मुक्त: सर्वभयाद् गर्भं एहि माचिर माचिरं स्वाहा॥''

   कुएँ से ताजा जल मंगवाकर ऊपर लिखे मन्त्र को सात बार पढ़कर स्त्री को पिलाये, तुरन्त ही सुखप्रससव होगा।

9. "क्षितिर्जलं विजत्तेजौ वायुर्विष्णु: प्रजापति:।

   सगर्भा त्वां सदा पान्तु वैशल्यं च दिशन्तुते॥

   प्रसुष्वत्वमविक्लिष्टमाविक्लिष्टा शुभानने।

   कार्तिकेय द्युतं पुत्रं कार्तिकेयोभिरक्षितम्॥''

   यह मन्त्र स्त्री के कान से मुँह लगाकर सात बार पढ़े तो शीघ्र सुखप्रसव होगा।

10. "बन में ब्यानी बांदरी, कच्चा बन फल खाय।

    ध्वाई श्रीराम की सो, तुरत प्रसव हो जाय॥

    मेरी भगत गुरु की सकत अब देखो तेरो मन्त्र की सकत,

    श्रीराम नाम साचा मन्त्र पुरै ईश्वरी बाचा॥''

    इस को सात बार पानी मे पढ़कर स्त्री को पिलावे तो शीघ्र सुखप्रसव होगा।

11. "बन में ब्यानी अंजनी, जिन पाए हनुमन्त।

    हुंकारत ही हनुमन्त के, गर्भ गिरे सुखवन्त॥

    शब्द सांचा पिण्ड ढांचा, फुरै मन्त्र श्री बाचा ॥''

    इस मन्त्र को स्त्री के कानों में 9 बार जोर-जोर से पढ़े और फुंकार लगावे तो शीघ्र सुखप्रसव होगा।

12. ऊँ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं धन्वन्तरे नम: ....(प्रसूता का नाम)

का प्रसव शान्ति रूपा मुंचा मुंचा कुरू कुरू स्वाहा।''

इस मन्त्र से सात बार पानी को अभिमन्त्रित करके प्रसूता स्त्री को पिलावे तो शीघ्र सुखप्रसव होगा।

13. ऊँ मुक्ता: पाशा विपाशाश्च मुक्ता: सूर्येण रश्मय:।

मुक्त: सर्वभयाद् गर्भं राह्येहि माचिरं स्वाहा।।''

इस मन्त्र से गिलास या कटोरी में लिया हुआ जल सात बार अभिमन्त्रित करके पिला देवे। इस जल के पीने से रुका हुआ बच्चा शीघ्र बाहर निकल आता है।

12.11. सारांश

स्त्री जब विवाह के पश्चात् प्रथम बार ऋतुमति होती है, उसके पश्चात् होने वाला समागम "निषेक''कहलाता है। उसके बाद होने वाले मासिक धर्मो के अनन्तर स्त्री-पुरुष का समागम गर्भाधान कहलाता है। मङ्गल और चन्द्रमा के हतु से स्त्रियों को प्रतिमास रजोधर्म होता है। ऋतु स्नान के पश्चात् स्त्री के मासिक धर्म या रजोदर्शन से 16वें दिन तक स्त्री गर्भाधान के योग्य हाती है। रजोदर्शन से पुत्र (समदिवस) अथवा कन्या (विषमदिवस) प्राप्ति हेतु शुभदिवसों का विचार भी यथासमय पर कर लेना चाहिए।

इस अध्याय के अन्तर्गत हमने विद्यार्थियों के लिए स्त्री के रजोकाल से लेकर गर्भधारण करते हुए शिशु होने तक के योगों का वर्णन किया है, जिसके अन्तर्गत गर्भाधान प्रक्रिया, पुत्र अथवा पुत्री का जन्मयोग विचार, यमलयोग, गर्भपातयोग, प्रसव पीड़ा योग अथवा प्रसवसुख योग सहित गर्भकाल से दस महीने का समुचित विवरण दिया गया है।

12.12. शब्दावली

- गर्भाधान = गर्भाशय में बीज की स्थापना
- गर्भावक्रान्ति = पुरुष व स्त्री के बीजों का समागम
- उपचय भाव = तृतीय, षष्ठ, दशम व एकादश भाव
- अनगर्भा = गर्भधारण हेतु अक्षम स्त्री
- यमल योग = जुड़वा बच्चे उत्पन्न होना

12.13. अति लघुत्तरात्मक प्रश्न

1 गर्भ क्या है?

उत्तर : अष्ट प्रकृति और षोड़श विकृतियों से युक्त सजीव पिण्ड़ गर्भ कहलाता है।

2 गर्भाधान किसे कहते है?

उत्तर - जिस कर्म के द्वारा गर्भ में बीज की स्थापना पुरुष द्वारा स्त्री के गर्भाशय में की जाती है, उसे गर्भाधान कहते है।

3 किन दो ग्रहों द्वारा स्त्री को रजोधर्म होता है?

उत्तर - मङ्गल तथा चन्द्रमा द्वारा स्त्री को प्रतिमास रजोधर्म होता है।

4 रज: काल के दो निषिद्ध समय बताईये ?

उत्तर - अमावस्या की रिक्ता तिथि अथवा सन्ध्याकाल प्रथम रजोदर्शन हेतु नेष्ट समय है।

5 रजोदर्शन से पुत्र प्राप्ति हेतु निर्दिष्ट दिवस बताईये ?

उत्तर - 4, 6, 8, 10, 12, 14, 16वें दिन पुत्र प्राप्ति हेतु समागम का श्रेष्ठ समय होता है।

6 प्रसव स्थान ज्ञात करने का क्या आधार है?

उत्तर - जन्म लग्न की राशि व नवमांश प्रसव स्थान ज्ञात करने का अधार है।

7 गर्भस्थिति का स्वरूप किस प्रकार होगा?

उत्तर - आधानकाल में स्त्री की मनोदशा जैसी होगी वैसी ही गर्भस्थ शिशु की प्रकृति होगी।

8 पदजात योग किसे कहते है?

उत्तर - प्रसव उपरान्त जब बच्चे को पहले पैर तथा अन्त में सिर योनिमार्ग से निकलता है, उसे पदजात योग कहते है।

9 गर्भाधान के समय किन तीन गण्ड़ान्त दोषों का त्याग करना चाहिए?

उत्तर - तिथि, नक्षत्र व लग्न गण्ड़ान्त का त्याग करना चाहिए।

10 जारज योग किसे कहते है?

उत्तर - जब कोई स्त्री अपने पति से अतिरक्त अन्य किसी पुरुष के द्वारा सन्तान उत्पन्न करती है तो वह सन्तान जारजसन्तान कहलाती है।

12.14. लघुत्तरात्मक प्रश्न

1 गर्भाधान की वैज्ञानिक प्रक्रिया का वर्णन कीजिये।

2 रजोदर्शन का शुभाशुभ मास, नक्षत्र व फल बताईये।

3 गर्भ में यमल योगों का वर्णन कीजिये।

4 पुत्र एवं कन्या प्राप्ति योग क्या होंगे?

5 गर्भाधान के समय क्या दोष नहीं होने चाहिए?

12.15. सन्दर्भ ग्रन्थ

1. सारावली

सम्पादक: डॉ. मुरलीधर चतुर्वेदी

प्रकाशक: मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

2. बृहत्पाराशर होराशास्त्र

सम्पादक: श्री सुरेश चन्द्र मिश्र

प्रकाशक: रंजन पब्लिकेशन, दिल्ली।